लैंगिक मुद्दे और मानव अधिकार शिक्षा

डॉ. किरन लता डंगवाल
डॉ. सुनीता सुंद्रियाल

लैंगिक मुद्दे
और
मानव अधिकार शिक्षा

डॉ. किरन लता डंगवाल

डॉ. सुनीता सुंद्रियाल

अनुक्रमणिका

पुस्तक का शीर्षक: लैंगिक मुद्दे और मानव अधिकार

अध्याय 1: लैंगिक मुद्दे

लिंग: अर्थ और अवधारणा
    लिंग के प्रकार
    लिंग पहचान के प्रकार:
कामुकता: अर्थ और अवधारणा
    कामुकता के प्रकार
    कामुकता का अनुभव
    कामुकता का प्रभाव
    कामुकता के आयाम
    बाल कामुकता
    वयस्क कामुकता में देरी
पितृसत्तात्मकता
    अर्थ और अवधारणा
    'पितृसत्ता' की विभिन्न परिभाषाएँ
    'पितृसत्ता' पर विचारधाराएं
    'पितृसत्ता' के प्रकार
    पितृसत्ता के सिद्धांत
        मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत
        समाजशास्त्रीय सिद्धांत
        जैविक सिद्धांत
पुरुषत्व : अर्थ और अवधारणा
    पुरुषत्व के लक्षण
        साहस
        स्वाधीनता
        सामर्थ्य
    पुरुषत्व का विकास
    पितृसत्ता का इतिहास
    वर्तमान पितृसत्ता
    पुरुषत्व -भूमिका तनाव
स्त्रीत्व

अर्थ और अवधारणा
स्त्रीत्व के प्रकार
स्त्रीत्व और धर्म
स्त्रीत्व और समाज
स्त्रीत्व की आवश्यकता

लिंग

अर्थ और अवधारणा
सेक्स और कामुकता पर आधारित शर्तें
सेक्स का अर्थ
सेक्स भेद (जैविक रूप से)
सेक्स भेद (मनोवैज्ञानिक रूप से)
सेक्स भेद (समाजशास्त्रीय रूप से)

अध्याय 2: लिंग भेद, समता और समानता

लिंग भेद का सांस्कृतिक अर्थ
समय के माध्यम से लिंग भेद
लिंग भेद के लिए जैविक आधार
लिंग भेद के लिए सामाजिक आधार
लिंग भेद के लिए धार्मिक आधार
लिंग भेद और पूर्वाग्रह
समता और समानता
निष्पक्षता
समानता
लिंग समता और समानता
लैंगिक असमानता
शिक्षा में समता और समानता
शिक्षा का अधिकार (आरटीई)
लैंगिक समानता और संविधान

अध्याय 3: समकालीन अवधि: नीति की सिफारिशें

पहल, आयोग और कार्यक्रम

योजना आयोग और पंचवर्षीय योजनाएं
प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56)
दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956 - 61)
तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961 - 66)

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969 - 1974)
पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-1978)
छठी पंचवर्षीय योजना (1980-1985)
सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1985)
आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-1997)
नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)
दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)
ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012)
बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017)

महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय नीति
राष्ट्रीय नीतियों के विशिष्ट उद्देश्य
नीति नियोजन और प्रोग्रामिंग
महिलाओं के लिए सरकार द्वारा प्रारम्भ किए गए कार्यक्रम
महिला एवं बाल विकास के लिए योजनाएं

अध्याय 4: लिंग और शिक्षा: विभिन्न सिद्धांत

समाजीकरण सिद्धांत
संरचनात्मक सिद्धांत
पुनर्निर्माण सिद्धांत

अध्याय 5: लिंग पहचान और सामाजीकरण की प्रथाएं

समाजीकरण

समाजीकरण के विभिन्न रूप
- समूह समाजीकरण
- लिंग समाजीकरण
- सांस्कृतिक समाजीकरण
- आर्थिक समाजीकरण

लिंग पहचान और समाजीकरण
लिंग पहचान और संरचनात्मक कार्यात्मकता
लिंग पहचान और सामाजिक साधन
औपचारिक और अनौपचारिक व्यवस्था में समाजीकरण प्रथाएं
- लिंग पहचान और परिवार
- लिंग पहचान और स्कूल
- लिंग पहचान और मित्र
- लिंग पहचान और कार्यस्थल

बालिकाओं की विद्यालयी शिक्षा
बालिका शिक्षा में असमानता
बालिकाओं की शिक्षा में बाधाएं
बालिका शिक्षा का प्रतिरोध

अध्याय 6: लिंग और पाठ्यक्रम व प्रच्छन्न पाठ्यक्रम

पुस्तकें और लिंग
शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया और लिंग संवेदीकरण
प्रच्छन्न पाठ्यक्रम
लिंग और प्रच्छन्न पाठ्यक्रम
लिंग का प्रच्छन्न पाठ्यक्रम (HCOG) और विद्यालयी शिक्षा पर इसका प्रभाव

अध्याय - 7 मानव अधिकार

मानव अधिकार
परिभाषा
मानव अधिकारों की प्रकृति
मानव अधिकारों की आवश्यकता और महत्व
मानव अधिकारों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अध्याय – 8 भारतीय संविधान में मानव अधिकार

भारतीय संविधान में मानव अधिकार हेतु प्रावधान
मौलिक अधिकार
'समानता का अधिकार'
स्वतंत्रता का अधिकार
स्वतंत्र रूप से जीने का अधिकार
धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार
संवैधानिक उपचार का अधिकार
संपत्ति का अधिकार
मानव अधिकारों और मौलिक अधिकारों के मध्य भेद

अध्याय - 9
भारत में मानवाधिकार शिक्षा

मानव अधिकार शिक्षा के उद्देश्य
मानव अधिकार शिक्षा का विकास
विद्यालयी पाठ्यक्रम में 'मानवाधिकार शिक्षा' की आवश्यकता

उच्च प्राथमिक स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा
माध्यमिक स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा
मानव अधिकार और लैंगिक समानता
शैक्षिक नीतियां और मानव अधिकार
निरक्षरता और गरीबी के संदर्भ में मानवाधिकार शिक्षा

अध्याय - 10

मानव अधिकारों के विषय में निर्णय

मानव अधिकारों के विषय में कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे और प्रमुख निर्णय
शारीरिक और मानसिक शोषण
बेगारी
धार्मिक हिंसा
जाति से संबंधित मुद्दे
भारत में LGBT अधिकार
लिंग भेदभाव
शिक्षा
गरीबी और बेरोजगारी
कुछ ऐतिहासिक फैसले

अध्याय - 11

भारत में मानव अधिकार आयोग

एनएचआरसी के कार्य
एनएचआरसी की संरचना
राज्य मानवाधिकार आयोग
NHRC की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति
मानवाधिकार शिक्षा के लिए एजेंसियां
अंतर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठन
भारत में गैर सरकारी संगठन
कुछ महत्वपूर्ण एजेंसियां
संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त
मानवाधिकार परिषद
संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को)
अमेरिकी विदेश विभाग लोकतंत्र, मानवाधिकार और श्रम ब्यूरो
यूरोप में सुरक्षा और सहयोग संगठन के लोकतांत्रिक संस्थानों और मानवाधिकारों का कार्यालय (ओएससीई)

लेखकों के विषय में

डॉ. किरन लता डंगवाल

डॉ. किरन लता डंगवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय में शिक्षा विभाग में एक शिक्षिका है। शिक्षकों, शोधकर्ताओं और विद्वानों को प्रबुद्ध करने, ज्ञान प्रदान करने और सूचनाओं का प्रसार करने के लिए, आपने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध पत्रिकाओं और पत्रिकाओं में शैक्षिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास पर ध्यान केंद्रित करने वाले लेख प्रकाशित किए हैं। आपने पुस्तकों के लेखन और संपादन के अतिरिक्त शिक्षाविदों के लाभ के लिए शिक्षा के क्षेत्र में सत्तर से अधिक महत्वपूर्ण शोध पत्र प्रकाशित किए हैं।

उन्हें भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया, थाईलैंड, मलेशिया और म्यांमार में प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और संस्थानों में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया है। एक शिक्षक के रूप में अपने छब्बीस वर्षों कि शैक्षिक यात्रा के दौरान शैक्षिक क्षेत्र में उनके अटूट दृष्टिकोण और नवाचारों के परिणामस्वरूप, उन्हें विभिन्न संस्थानों और समूहों से उनके कार्य के लिए कई सम्मान मिले हैं।

वह एसोसिएट एनसीसी अधिकारी के रूप में लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रथम महिला हैं। एनसीसी में उनके समर्पण के कारण, उन्हें डीजीएनसीसी प्रशंसा कार्ड, सर्वश्रेष्ठ एनसीसी अधिकारी का पुरस्कार, सर्वश्रेष्ठ व्याख्यान प्रस्तुति के लिए उत्कृष्टता पुरस्कार और कैंप प्लानिंग अवार्ड भी मिला है। वह कंप्यूटर शिक्षा और प्रौद्योगिकी में अच्छी तरह से समझ है और शिक्षकों और छात्रों के लिए विभिन्न प्रकार की मुक्त ई-सामग्री, एमओओसी और ओईआर बनाए हैं। उन्होंने यूनेस्को का अंतर्राष्ट्रीय परामर्श ऑनलाइन कार्यक्रम, OE4BW के अन्तर्गत एमओओसी (मैसिव ओपन ऑनलाइन कोर्स) विकसित किया है । डॉ. किरन लता डंगवाल के असाधारण उत्साह, अविचल प्रतिबद्धता, निष्ठा और व्यावसायिक कौशल के कारण एक अलग पहचान प्राप्त करने में सक्षम रही हैं ।

डॉ. सुनीता सुंद्रियाल

डॉ सुनीता सुंद्रियाल बीएड विभाग, हीरालाल यादव बालिका पीजी कॉलेज (लखनऊ विश्वविद्यालय से संबद्ध) की संकाय सदस्य हैं। उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में लगभग 18 वर्षों का अनुभव है। वह शैक्षिक मनोविज्ञान और विज्ञान शिक्षाशास्त्र में माहिर हैं। उन्होंने उत्तर प्रदेश राज्य के विभिन्न कॉलेजों और संस्थानों में पढ़ाया है। उनका प्रकाशन अनुभव प्रतिष्ठित राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में कई शोध पत्रों और प्रकाशनों से भरा हुआ है। उन्होंने पुस्तकों का संपादन और लेखन दोनों किया है और विभिन्न राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सेमिनारों और सम्मेलनों में पेपर प्रस्तुत किए हैं। उनके अन्य योगदानों में एस.ओ.ई, इग्नू और उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा संचालित बीएड पाठ्यक्रम की पाठ्य वस्तु लेखन और भाषा संपादन के साथ-साथ नेशनल ओपन स्कूल के लिए एल. एड व पीजीडी कोर्स भी सम्मिलित हैं। वह शिक्षा के क्षेत्र में एक सक्रिय भागीदार रही हैं तथा शिक्षा के क्षेत्र में अपनी विशेषज्ञता साझा करने के लिए हमेशा तत्पर रहती हैं।

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक "लैंगिक मुद्दे व मानवाधिकार शिक्षा" का उद्देश्य लिंग, समानता, शिक्षा और मानव अधिकारों से संबंधित विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालना है, जो इन महत्वपूर्ण विषयों की समग्र समझ प्रदान करता है। प्रमुख अवधारणाओं, सिद्धांतों, नीतियों और प्रथाओं की विस्तृत खोज के माध्यम से, यह पुस्तक क्षेत्र में मौजूदा ज्ञान में योगदान करने और सार्थक चर्चाओं को बढ़ावा देने का प्रयास करती है।

अध्याय 1 में, लिंग के विभिन्न मुद्दों , अर्थ तथा अवधारणाओं पर विस्तार पूर्वक मंथन किया गया है। विभिन्न प्रकार की लिंग पहचान और कामुकता की जटिलताओं की भी चर्चा की गई हैं। हम पितृसत्ता के महत्व, इसके ऐतिहासिक संदर्भ और समाज पर इसके प्रभाव का भी जानकारी प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त , हम पुरुषत्व और इसके लक्षणों की बहुमुखी अवधारणा का पता लगा पाएंगे, साथ ही स्त्रीत्व और समकालीन समाज में इसकी प्रासंगिकता का परिचय भी दिया गया है। अध्याय 2 सेक्स के अर्थ और विभिन्न आयामों की खोज के साथ समाप्त होता है।

लिंग भेद , समता और समानता पर केंद्रित विषय वस्तु भी सम्मिलित है। यहां, हम सांस्कृतिक, जैविक, सामाजिक और धार्मिक नींव के आधार पर लिंग भेद का विश्लेषण करते हैं। इसके अतिरिक्त लैंगिक पूर्वाग्रह की अवधारणा और निष्पक्षता व न्याय को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक सिद्धांतों के रूप में समता और समानता पर चर्चा करते हैं।

अध्याय 2 विभिन्न संदर्भों में लिंग असमानता समता व समानता तथा इसकी अभिव्यक्तियों की पड़ताल करता है, विशेष रूप से शिक्षा में। इसके अतिरिक्त , हम शिक्षा के अधिकार, लैंगिक समानता और इन सिद्धांतों का समर्थन करने वाले संवैधानिक ढांचे के विषयमें विस्तार से जानेंगे।

अध्याय 3 में, हम समकालीन अवधि और नीति की सिफारिशों पर केंद्रित हैं। यह अध्याय लिंग से संबंधित मुद्दों को संबोधित करने के लिए वर्षों से लागू नियमों,आयोगों और कार्यक्रमों की चर्चा करता है। हम विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से नीति नियोजन के ऐतिहासिक संदर्भ का जानेंगे और उनके प्रभाव का विश्लेषण भी किया गया है। इसके अतिरिक्त, महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय नीति, विशिष्ट नीतिगत उद्देश्यों

और महिलाओं और बाल विकास के उद्देश्य से सरकारी योजनाओं की शुरूआत की जानकारी भी दी गई हैं।

अध्याय 4 लिंग और शिक्षा के दायरे में आता है, विभिन्न सिद्धांतों को प्रस्तुत करता है जो हमें शैक्षिक तंत्र में लिंग की गतिशीलता को समझने में सहायता करते हैं। समाजीकरण सिद्धांत, संरचनात्मक सिद्धांत और विघटन सिद्धांत के माध्यम से,लिंग शिक्षण और सीखने की प्रक्रिया को कैसे प्रभावित करता है और शैक्षिक परिणामों को आकार देता है, ये भी इस पाठ में समझाया गया है।

अध्याय 5 में, लिंग पहचान और समाजीकरण प्रथाओं के विषयमें जानते हैं। हम समाजीकरण की प्रक्रिया और इसके विभिन्न रूपों को बता गया है, लिंग समाजीकरण के प्रभाव पर बाल दिया गया है। इस अध्याय में लिंग पहचान के विकास पर परिवार, स्कूल, दोस्तों और कार्यस्थल के प्रभाव की भी बात की गई है। इसके अतिरिक्त, हम शिक्षा प्राप्त करने में बालिकाओं द्वारा सामना की जाने वाली असमानताओं और बाधाओं को संबोधित किया है, साथ ही बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ावा देने में आने वाले प्रतिरोधों को भी संबोधित करते हैं।

अध्याय 6 लिंग और पाठ्यक्रम, विशेष रूप से प्रच्छन्न पाठ्यक्रम पर केंद्रित है। पाठ्यपुस्तकों में लिंग के प्रतिनिधित्व का विश्लेषण भी किया गया है, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में लिंग संवेदीकरण की आवश्यकता का भी पता लगाते हैं, और प्रच्छन्न पाठ्यक्रम की अवधारणा और स्कूलों में लिंग भूमिकाओं और अपेक्षाओं को आकार देने पर इसके प्रभाव पर प्रकाश डालते हैं।

अध्याय 7 में, हम मानव अधिकारों के महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा करते हैं। हम मानव अधिकारों की परिभाषा, प्रकृति, आवश्यकता और महत्व का पता लगाते हैं। इसके अतिरिक्त, हम मानवाधिकार सिद्धांतों के विकास और महत्व को समझने के लिए एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं।

अध्याय 8 भारतीय संविधान में मानवाधिकारों की जांच करता है, कानूनी ढांचे के भीतर मानवाधिकारों की सुरक्षा के प्रावधानों पर बाल देता है। संविधान में निहित मौलिक अधिकारों का विश्लेषण भी किया गया है, जिसमें समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, स्वतंत्र रूप से जीने का अधिकार, धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार और बहुत कुछ सम्मिलित किया गया है। इसके अतिरिक्त , हम मानव अधिकारों और मौलिक अधिकारों के मध्य भेद को स्पष्ट भी किया गया है।

अध्याय 9 भारत में मानवाधिकार शिक्षा पर केंद्रित है, जो स्कूली पाठ्यक्रम के भीतर इसके उद्देश्यों, विकास और महत्व पर प्रकाश डालता है। हमने मानवाधिकार शिक्षा की आवश्यकता का पता लगाना, विशेष रूप से लैंगिक समानता के संबंध में, और विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर इसके एकीकरण का विश्लेषण किया है। इसके अतिरिक्त , हम मानव अधिकार शिक्षा और निरक्षरता और गरीबी जैसी चुनौतियों के मध्य सहसंबंध पर चर्चा करते हैं।

अध्याय 10 में, हम मानव अधिकारों के विषय में निर्णयों पर चर्चा करते हैं, महत्वपूर्ण मुद्दों और प्रमुख निर्णयों को प्रस्तुत करते हैं जिन्होंने भारत में मानवाधिकार परिदृश्य को आकार दिया है। हम शारीरिक और मानसिक शोषण, जबरन श्रम, धार्मिक हिंसा, जाति से संबंधित मुद्दों, समलैंगिकता व एलजीबीटी अधिकारों, भेदभाव, शिक्षा, गरीबी और बेरोजगारी जैसे महत्वपूर्ण घटनाओं को संबोधित करते हैं। अध्याय का समापन उन ऐतिहासिक निर्णयों पर एक प्रतिबिंब के साथ होता है जिनका देश में मानवाधिकारों पर स्थायी प्रभाव पड़ा है।

अध्याय 11 भारत में मानवाधिकार आयोग की जांच करता है, मानव अधिकारों की रक्षा में इसके कार्यों, संरचना और भूमिका पर प्रकाश डालता है। हम राज्य स्तरीय मानवाधिकार आयोगों पर भी चर्चा की गई है और मानवाधिकार शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले विभिन्न भेद राष्ट्रीय और गैर-सरकारी संगठनों का अवलोकन प्रदान किया गया है।

हमें उम्मीद है कि यह पुस्तक शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और लैंगिक समानता, समता, शिक्षा और मानवाधिकारों को समझने और बढ़ावा देने में रुचि रखने वाले सभी लोगों के लिए एक मूल्यवान संसाधन के रूप में कार्य करेगी। यह हमारी इच्छा है कि इन पृष्ठों के भीतर प्रस्तुत अंतर्दृष्टि और जानकारी सार्थक चर्चा, प्रगतिशील कार्रवाई और समाज में सकारात्मक परिवर्तन में योगदान करेगी।

डॉ. किरण लता डंगवाल
डॉ. सुनीता सुंद्रियाल

प्राक्कथन

डॉ. किरण लता डंगवाल और डॉ. सुनीता सुंदरियाल द्वारा लिखित "लैंगिक मुद्दे और मानवाधिकार शिक्षा" नामक पुस्तक के लिए प्राक्कथन लिखते हुए मुझे बहुत हर्ष हो रहा है। यह पुस्तक लिंग के मुद्दों और मानवाधिकारों इनके महत्वपूर्ण क्षेत्रों से जुड़े जटिल गतिशीलता और चुनौतियों की व्यापक समझ प्रदान करती है।

आज की दुनिया में, लैंगिक समानता और मानवाधिकारों का संरक्षण एक न्यायसंगत और समावेशी समाज बनाने के मौलिक पहलू हैं। डॉ. किरण लता डंगवाल और डॉ. सुनीता सुंद्रियाल ने अपनी विशाल विशेषज्ञता और विद्वतापूर्ण योगदान के माध्यम से इन क्षेत्रों में ज्ञान और समझ को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनका लेखन लिंग के मुद्दों को संबोधित करने और परिवर्तनकारी सामाजिक परिवर्तन के लिए मानवाधिकार शिक्षा को बढ़ावा देने के महत्व को उजागर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

"लिंग मुद्दे और मानवाधिकार शिक्षा" नामक इस पुस्तक में लिंग संदर्भित जटिलताओं और बारीकियों पर एक बहुआयामी परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है। लेखकों ने कुशलतापूर्वक वैचारिक परिदृश्य को नेविगेट किया, पितृसत्तात्मक प्रणालियों, पुरुषत्व, स्त्रीत्व और लिंग भेद के सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक आयामों के अर्थ और अवधारणा की खोज की। इसके अतिरिक्त, यह पुस्तक मानव अधिकारों के महत्वपूर्ण विषय, इसकी परिभाषा, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और भारतीय कानूनी ढांचे के भीतर इसके समावेश का गहन विश्लेषण प्रदान करती हैं।

इस पुस्तक के उल्लेखनीय पहलुओं में से एक मानवाधिकार शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना है। समता, समानता और न्याय की संस्कृति को पोषित करने की प्रतिबद्धता से प्रेरित, लेखक स्कूलों में मानवाधिकार शिक्षा के महत्व पर जोर देते हैं। वे मानव अधिकार शिक्षा के उद्देश्यों, विकास और आवश्यकता का पता लगाते हैं, विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर पाठ्यक्रम में इसके एकीकरण की जांच कि गई हैं। मानवाधिकार शिक्षा और लैंगिक समानता के मध्य संबंधों को स्पष्ट करके, लेखक अधिक न्यायसंगत और समावेशी समाज बनाने के लिए सार्थक चर्चा और कार्रवाई योग्य कदमों का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

इस पुस्तक की ताकत लिंग के मुद्दों और मानवाधिकारों से संबंधित विभिन्न सैद्धांतिक ढांचे, नीतियों और प्रथाओं के व्यापकता में निहित है। लेखक स्रोतों की एक समृद्ध सरणी पर आकर्षित करते हैं, जिसमें विषय वस्तु की अच्छी तरह से समझ प्रदान करने के लिए ऐतिहासिक दृष्टिकोण, कानूनी सिद्धांतों और समकालीन उदाहरणों को सम्मिलित किया गया है। केस स्टडी, निर्णय और महत्वपूर्ण विश्लेषण का समावेश

पाठकों के जुड़ाव को और समृद्ध करता है और वास्तविक दुनिया की चुनौतियों और संभावित समाधानों पर प्रतिबिंब को प्रोत्साहित करता है।

मैं लेखकों को उनके लेखन, व्यावहारिक विश्लेषण और विचारों की स्पष्ट प्रस्तुति के लिए सराहना करता हूं। कठोर परिश्रम के लिए उनकी प्रतिबद्धता पूरी पुस्तक में स्पष्ट है, जिससे यह शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, नीति निर्माताओं और लैंगिक समानता और मानवाधिकारों को बढ़ावा देने में रुचि रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए एक मूल्यवान संसाधन बन गया है।

मुझे विश्वास है कि "लैंगिक मुद्दे और मानवाधिकार शिक्षा" विचारोत्तेजक चर्चाओं के लिए उत्प्रेरक के रूप में काम करेंगे, भविष्य के अनुसंधान को प्रेरित करेंगे, और व्यक्तियों को लैंगिक समानता और मानवाधिकारों को आगे बढ़ाने में सक्रिय रूप से संलग्न होने के लिए सशक्त बनाएंगे। डॉ. किरण लता डंगवाल और डॉ. सुनीता सुंद्रियाल ने इस क्षेत्र में विद्वतापूर्ण विमर्श में महत्वपूर्ण योगदान दिया है और मैं उनके असाधारण कार्य के लिए उनकी सराहना करता हूं।

प्रो. आलोक कुमार राय
कुलपति
लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ

अध्याय - 1

लिंग संबंधी मुद्दे

लिंग: अर्थ और अवधारणा

लिंग की अवधारणा पहली बार 1984 में इल मैथ्यूज द्वारा स्त्रीत्व के निर्माण के अपने अध्ययन में विकसित की गई थी। मैथ्यूज के अनुसार, लिंग की अवधारणा इस तथ्य को पहचानती है कि हर ज्ञात समाज महिलाओं और पुरुषों के मध्य भेद करता है। इसलिए 'लिंग की अवधारणा' शब्द पुरुषों और महिलाओं को सामाजिक रूप से समझने और उनके मध्य संबंधों के पैटर्न का एक व्यवस्थित तरीका है। यह पुरुषों और महिलाओं के मध्य व्यवहार में भेद का अध्ययन करने और इन मतभेदों के आधार का विश्लेषण करने में सहायता करता है, जो मूल रूप से या समाज द्वारा सामाजिक निर्माण के रूप में हैं। नारीवादी लेखन और अन्य समाजशास्त्रीय प्रवचनों में लिंग की अवधारणा 1970 की शुरुआत में लोकप्रिय हो गई।

सरल शब्दों में, लिंग पुरुषों और महिलाओं के मध्य व्यवहार में भेद की व्याख्या करता है जिसे 'पुरुषत्व' और 'स्त्रीत्व' के रूप में वर्णित किया गया है।

'लिंग' शब्द मध्य अंग्रेजी (लिंग, जेंडीर, गेंड्रे) से आया है। इसका अर्थ है 'दयालु', 'प्रकार' या 'आत्मा'। ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी के प्रथम संस्करण में कहा गया है कि लिंग का मूल अर्थ 'दयालु' के रूप में पहले से ही अप्रचलित हो गया था।

1926 में, हेनरी वाटसन फाउलर ने कहा कि शब्द की परिभाषा इस व्याकरण से संबंधित अर्थ से संबंधित है: "लिंग ... केवल एक व्याकरणिक शब्द है। पुरुष या स्त्री लिंग के

व्यक्तियों के विषय में बात करना, जिसका अर्थ पुरुष या महिला लिंग है, या तो एक मजाक है (स्वीकार्य या संदर्भ के अनुसार नहीं) या एक बड़ी भूल है।

लिंग पुरुषत्व और स्त्रीत्व से संबंधित और भेद करने वाली विशेषताओं की सीमा है। संदर्भ के आधार पर, इन विशेषताओं में जैविक सेक्स (यानी पुरुष, महिला या इंटरसेक्स या लिंग पहचान होने की स्थिति) सम्मिलित हो सकते हैं।

जॉन मनी 1955 में एक भूमिका के रूप में जैविक सेक्स और लिंग के मध्य पारिभाषिक भेद पेश किया। पहले यह शब्द "लिंग" उपयोग करने के लिए असामान्य था लेकिन बाद में विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा लिखे गए दस्तावेजों में इसका सख्ती से पालन किया गया।

डायमंड (2005) के अनुसार 'लिंग' एक ऐसा शब्द है जो पुरुष या महिला होने से जुड़े सामाजिक या सांस्कृतिक भेदों को संदर्भित करता है। लिंग के विषय में द्विभाषी दृष्टिकोण कुछ संस्कृतियों के लिए विशिष्ट है और सार्वभौमिक नहीं है।

लिंग को पुरुष / महिला की लिंग-आधारित श्रेणियों से अलग एक सामाजिक सांस्कृतिक और व्यक्तिगत निर्माण कहा जा सकता है, न कि जैविक निर्माण;। एक दृष्टिकोण जिसके माध्यम से पुरुषों और महिलाओं की स्थिति पर प्रभाव के साथ अन्य सामाजिक संगठन सिद्धांतों का आकलन किया जाता है- वर्ग/ जाति, नस्ल, आयु, धर्म, स्थान / शहर / देश पक्ष; अलगाव में उपयोग नहीं किया जाता है।

एन. ओकले ने 1972 में लिखी अपनी पुस्तक '**सेक्स, जेंडर एंड सोसाइटी**' में 'लिंग' शब्द की पड़ताल की है। ओकले का कहना है कि पश्चिमी संस्कृति में महिलाएं 'गृहिणी' और 'मां' की भूमिका निभाती हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि महिलाओं को उनके जीव विज्ञान के कारण इन भूमिकाओं को निभाने के लिए बनाया जाता है।

मनोवैज्ञानिक और शारीरिक पेशेवरों ने 'लिंग' शब्द का उपयोग तेजी से करना शुरू कर दिया (मोई, 2005)। 20वां सदी के अंत तक में लिंग के उचित उपयोग का विस्तार हुआ - खासकर जहां कानूनी भाषा का संबंध है।

2011 में, खाद्य और औषधि प्रशासन (एफडीए) ने लिंग को जैविक वर्गीकरण और लिंग के रूप में "पुरुष या महिला के रूप में किसी व्यक्ति के आत्म-प्रतिनिधित्व के रूप में उपयोग करना शुरू किया, या उस व्यक्ति की लिंग प्रस्तुति के आधार पर सामाजिक संस्थानों द्वारा उस व्यक्ति को कैसे जवाब दिया जाता है"।

'लिंग' लोगों को उनके जैविक लिंग के अनुसार विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करने की सामाजिक-सांस्कृतिक घटना है, जिसमें प्रत्येक की संबंधित भूमिकाएं, कपड़े, रूढ़ियां आदि हैं; पुरुष सेक्स विशेषताओं वाले लोगों को 'लड़कों' और 'पुरुषों' के रूप में माना जाता है, जबकि महिला सेक्स विशेषताओं वाले लोगों को 'बालिकाओं ' और 'महिलाओं' के रूप में माना जाता है।

इस प्रकार 'लिंग' एक ओवर-आर्किंग श्रेणी है- एक प्रमुख सामाजिक स्थिति जो सामाजिक जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों को व्यवस्थित करती है।

लिंग के प्रकार

जब हम निम्न कक्षाओं में थे तो हमें 'संज्ञा' शीर्षक के अंतर्गत इन प्रकारों को पढ़ाया जाता था।

- **स्त्री**- यह स्त्री प्रकार के सभी लोगों को दर्शाता है। जैसे: लड़की, मोरनी, गाय आदि।
- **पुलिंग** - यह पुरुष प्रकार के सभी लोगों को दर्शाता है। जैसे: लड़का, मोर, कुत्ता, बैल आदि।

- **सामान्य**- यह चेतन प्राणियों पर लागू होता है, जिसका लिंग अपरिवर्तनीय है। जैसे: कीट, मछली, पक्षी आदि।
- **न्यूटर**- यह निर्जीव चीजों या उन चीजों को दर्शाता है जो जीवन के बिना हैं। जैसे: मूर्ति, लकड़ी आदि।

लिंग पहचान के प्रकार

1. **पुरुष** - पुरुषत्व से संबंधित गुणों और व्यवहारों को दर्शाने वाले शब्द "पुरुष" या "नर" कहलाते हैं। इसमें मानव समाज द्वारा पुरुषों या पुरुषत्व के लिए परंपरागत रूप से स्वीकार की गई कुछ गुणों का समावेश होता है। जिसमे यह गुण विभिन्न संस्कृतियों में अलग-अलग और समय के साथ बदलावों भी हो सकते हैं, लेकिन यह कुछ सामान्य गुणों में शामिल हो सकते हैं जिन्हें पुरुषत्व के रूप में मान्यता प्राप्त होती है। इनमें शारीरिक मजबूती, सक्रियता, प्रतिस्पर्धा, स्वतंत्रता, आत्मविश्वास और स्थिरता शामिल हो सकती हैं। पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि यह गुण सभी पुरुष पहचानने वाले व्यक्तियों में प्रारूपित नहीं होते हैं, और जो इस पुरुषत्व के पारंपरिक धारणाओं के आदर्शों से मेल नहीं खाते हैं।

2. **स्त्री -** "नारी" या "स्त्री" के साथ जुड़े वह गुण, विशेषताएं और व्यवहार जिन्हें परंपरागत रूप से महिलाओं या स्त्रीत्व से जोड़ा जाता है, "नारीवाद" कहलाते हैं। यह एक विशेष गुणात्मक विस्तृति है जिसे समाज द्वारा महिलाओं में सामान्य या आकर्षक माना जाता है। यह गुण संस्कृति के आधार पर भिन्न हो सकते हैं और समय के साथ बदलावों भी हो सकते हैं, लेकिन यह कुछ सामान्य विशेषताओं में शामिल हो सकते हैं जो महिलावाद के लिए महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इनमें पोषण, सहानुभूति, संवेदनशीलता, आकर्षकता, सहानुभूति और भावनाओं को व्यक्त करने की क्षमता शामिल हो सकती हैं। यहाँ पर इसका तात्पर्य नहीं कि ये गुण सभी महिलाएं पहचानने वाले व्यक्तियों में प्रारूपित नहीं होते हैं, और जो महिलावाद के पारंपरिक धारणाओं के आदर्शों से मेल नहीं खाते हैं।

3. **आदिवासी (दो-उत्साही)** - न तो पुरुष या महिला यानी पुरुष और महिला दोनों की भावना होती है। टू स्पिरिट शब्द एक आधुनिक शब्द है जिसका उपयोग कुछ स्वदेशी उत्तरी अमेरिकियों द्वारा अपने समुदायों में कुछ आध्यात्मिक लोगों- समलैंगिक, उभयलिंगी और लिंग-भिन्न व्यक्तियों का वर्णन करने के लिए किया जाता है। इस शब्द को 1990 में अपनाया गया था। सबाइन लैंग के अनुसार, दो आत्मा लोगों की क्रॉस ड्रेसिंग हमेशा लिंग पहचान का संकेतक नहीं थी। उनका मानना है कि "केवल यह तथ्य कि एक पुरुष महिलाओं के कपड़े पहनता है, उसकी भूमिका व्यवहार, उसकी लिंग स्थिति या यहां तक कि साथी की उसकी पसंद के विषय में कुछ नहीं कहता है।

4. **ट्रांसजेंडर / ट्रांस-सेक्सुअल / इंटरसेक्स** - एक व्यक्ति जो सख्त लिंग मानदंडों को चुनौती देता है। वे पुरुष या महिला शरीर की विशिष्ट द्विआधारी धारणाओं को फिट नहीं करते हैं। यह एक शब्द है जिसमें ऐसे लोग सम्मिलित हैं जिनकी लिंग पहचान असाइन किए गए लिंग (ट्रांस पुरुषों और ट्रांस महिलाओं) के विपरीत है, इसमें ऐसे लोग सम्मिलित हो सकते हैं जो विशेष रूप से पुलिंग या स्त्री लिंग नहीं हैं। उन्हें विषमलैंगिक, समलैंगिक, उभयलिंगी, अलैंगिक आदि के रूप में पहचाना जा सकता है। इस शब्द का उल्लेख पहली बार कोलंबिया विश्वविद्यालय के मनोवैज्ञानिक जॉन ओलिवेन ने अपने कार्य 'यौन स्वच्छता और पैथोलॉजी' में किया था।

5. **तीसरा लिंग**- ऐसे व्यक्ति जिन्हें पुरुष या महिला के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। इस शब्द का उपयोग हमारे देश में 'हिजड़ों' का वर्णन करने के लिए किया गया है। उन्हें अक्सर अंग्रेजी में 'किन्नर' (Eunuchs) कहा जाता है। वे इंटरसेक्स पैदा हो सकते हैं, महिलाओं के रूप में कपड़े पहनते हैं और आम तौर पर स्वयं को न तो पुरुषों और न ही महिलाओं के रूप में देखते हैं। नवंबर 2009 में, भारत ने उन्हें मतदान सूची और मतदाता

पहचान पत्र में पुरुषों और महिलाओं से अलग 'अन्य' के रूप में सूचीबद्ध करने पर सहमति व्यक्त की। अप्रैल, 2014 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति के एस राधाकृष्णन ने ट्रांसजेंडर को भारतीय कानून में तीसरे लिंग के रूप में घोषित किया।

6. **एंड्रोजिनी**- एक शब्द जो पुलिंग और स्त्री लिंग कि विशेषताओं के संयोजन को संदर्भित करता है। एंड्रोजिन्स खुद का वर्णन करने के लिए 'पॉलीजेंडर' शब्द का भी उपयोग कर सकते हैं। उन्हें गैर-लिंग, लिंग-तटस्थ, लिंग, बहुलिंग आदि के मध्य पहचाना जा सकता है। उनके पास एक संतुलित पहचान है जिसमें दोनों लिंगों के गुण सम्मिलित हैं और कार्य को सामाजिक या शारीरिक रूप से किस लिंग के साथ अलग किया जा सकता है। एंड्रोजिनी 21वी शताब्दी में अधिक प्रमुखता प्राप्त कर रहा है । कुछ इंटरसेक्स और गैर-इंटरसेक्स लोग एंड्रोजिनस शारीरिक लक्षण प्रदर्शित कर सकते हैं।

कामुकता: अर्थ और अवधारणा

'सेक्स' पुरुष, महिला और इंटरसेक्स निकायों के मध्य शारीरिक या शारीरिक भेद को संदर्भित करता है, जिसमें प्राथमिक सेक्स विशेषताओं (प्रजनन प्रणाली) और माध्यमिक सेक्स विशेषताओं (जैसे स्तन और चेहरे के बाल) दोनों सम्मिलित हैं।

'**इंटरसेक्स**' गुणसूत्रों, गोनैड या जननांगों सहित सेक्स विशेषताओं में भिन्नता को संदर्भित करता है जो किसी व्यक्ति को पुरुष या महिला के रूप में विशिष्ट रूप से पहचानने की अनुमति नहीं देता है।

"**लिंग**": - गुणों का विशिष्ट गुण, गुणवत्ता या संयोजन जिसके द्वारा जीवों को उनके प्रजनन अंगों और कार्यों के आधार पर मादा, पुरुष या इंटरसेक्स के रूप में वर्गीकृत किया जाता है।

'कामुकता': - लोगों की यौन रुचि और दूसरों के प्रति आकर्षण; कामुक अनुभव और प्रतिक्रियाएं करने की उनकी क्षमता को कामुकता कहा जाता है।

"मानव कामुकता" लोगों की यौन रुचि और दूसरों के प्रति आकर्षण को संदर्भित करती है, साथ ही कामुक अनुभव और प्रतिक्रियाएं रखने की उनकी क्षमता भी है। लोगों का यौन अभिविन्यास विशेष लिंगों या लिंगों के लिए उनका भावनात्मक और यौन आकर्षण है, जो अक्सर उनकी कामुकता को आकार देता है। कामुकता को विभिन्न तरीकों से अनुभव और व्यक्त किया जा सकता है, जिसमें विचार, कल्पनाएं, इच्छाएं, विश्वास, दृष्टिकोण, मूल्य, व्यवहार, प्रथाएं, भूमिकाएं और रिश्ते सम्मिलित हैं। ये कामुकता के जैविक, भौतिक पहलुओं में खुद को प्रकट कर सकते हैं, जो काफी हद तक मानव प्रजनन कार्यों से संबंधित हैं, जिसमें मानव यौन-प्रतिक्रिया चक्र और सभी प्रजातियों में मौजूद बुनियादी जैविक ड्राइव सम्मिलित हैं। कामुकता के "भावनात्मक" पहलुओं में व्यक्तियों के मध्य बंधन सम्मिलित हैं जो गहन भावनाओं या प्यार, विश्वास और देखभाल की शारीरिक अभिव्यक्तियों के माध्यम से व्यक्त किए जाते हैं। सामाजिक पहलू किसी की कामुकता पर मानव समाज से प्रभावित होते हैं।

कामुकता के प्रकार

मनोवैज्ञानिकों और शिक्षाविदों द्वारा विभिन्न प्रकार की कामुकता का उल्लेख किया गया है, जिनका वर्गीकरण इस प्रकार है: –

i. **विषमलैंगिकता: -** यह विपरीत लिंगों के मध्य यौन आकर्षण है।
ii. **समलैंगिकता: -** यह समान लिंगों के सदस्यों के मध्य यौन आकर्षण है।
iii. **उभयलिंगीपन: -** यह दोनों लिंगों के सदस्यों यानी पुरुष और महिला दोनों के लिए यौन आकर्षण है।

iv. **अलैंगिकता:**- इसे गैर-कामुकता यानी किसी भी सदस्य के प्रति यौन आकर्षण की कमी के रूप में भी जाना जाता है।

v. **बहुलैंगिकता:** - यह एक से अधिक लिंग के प्रति यौन आकर्षण है लेकिन उभयलिंगी के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जाना चाहता है।

vi. **ट्रांससेक्सुअलिटी:** - जब कोई व्यक्ति खुद को शारीरिक सेक्स के साथ पहचानता है जो उनके अपने जैविक से अलग होता है।

अन्य वर्गीकरण इस प्रकार है:-

- **विषमलिंगिता:**- इसका अर्थ है यौन और भावनात्मक रूप से ज्यादातर विपरीत लिंग के लोगों के प्रति आकर्षित होना। जब एक आदमी स्त्री के साथ या स्त्री पुरुष के साथ आकर्षण और संबंध बनाता है । विषमलिंगिता या हेटेरोसेक्सुअलिटी सबसे प्रचलित संबंध आकार है और समाज में सामान्यतः स्वीकृत होती है।

- **समलैंगिक:** - इसका तात्पर्य है कि ज्यादातर एक ही लिंग या लिंग के लोगों के प्रति आकर्षित होता है (लड़कों और अक्सर बालिकाओं द्वारा भी उपयोग किया जाता है)। यह एक समलैंगिक व्यक्ति को संदर्भित करता है। इस शब्द को 20वीं शताब्दीके अंत तक स्वीकार किया गया था। ।

- **लेस्बियन:** – ज्यादातर एक ही लिंग या लिंग (महिलाओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले) के लोगों के प्रति आकर्षित होता है। एक समलैंगिक महिला महिलाओं के प्रति यौन और भावनात्मक रूप से आकर्षित होती है।

- **उभयलिंगी:** - इसका तात्पर्य पुरुषों और महिलाओं दोनों के प्रति आकर्षित होता है। कुछ लोग पैन या पैन सेक्सुअल जैसे शब्दों का उपयोग यह कहने के लिए करते हैं कि वे विभिन्न

प्रकार के लोगों के प्रति आकर्षित होते हैं, चाहे उनका लिंग कुछ भी हो। एक उभयलिंगी व्यक्ति पुरुष या महिला के साथ संबंध बनाने में सहज होता है।

- **अलैंगिक:** - वास्तव में किसी के प्रति यौन रूप से आकर्षित नहीं।

कामुकता का अनुभव

कामुकता को विभिन्न तरीकों से अनुभव किया जा सकता है;

i. **विचारों में** - कभी-कभी किसी व्यक्ति के मन में सेक्स और कामुकता के विषय में अजीब विचार हो सकते हैं। इन विचारों में देखना, बात करना, छूना या सेक्स करने की इच्छा आदि सम्मिलित हो सकते हैं। कभी-कभी इस तरह के अत्यधिक विचार किसी के काम या एकाग्रता को प्रभावित कर सकते हैं।

ii. **कल्पनाओं में** – इसे 'इरोटिक फैंटसी' भी कहा जाता है। यह एक मानसिक छवि या विचार का पैटर्न है जो किसी व्यक्ति की कामुकता को उत्तेजित करता है और यौन उत्तेजना पैदा या बढ़ा सकता है। एक कल्पना किसी भी बाहरी उत्तेजना जैसे साहित्य, तस्वीर या पोर्नोग्राफी द्वारा की जा सकती है।

iii. **इच्छाओं में** - ये केवल विचारों के अंतर्गत आते हैं। यह एक प्रेरक स्थिति और यौन वस्तुओं या गतिविधियों में रुचि है। यह किसी भी यौन गतिविधि में संलग्न होने के लिए आंतरिक इच्छा या ड्राइव हो सकता है।

iv. **मान्यताओं में** – प्रत्येक धर्म में कामुकता के विषय में विश्वास और नैतिकता है। यह प्रजनन से अधिक संबंधित है। इनमें शायद ही कभी यौन गतिविधि को आनंद के रूप में सम्मिलित

किया जाता है। यहां विश्वास इंगित करता है कि हम समाज के अनुसार कामुकता के विषय में क्या सच मानते हैं। उनके पास भावनात्मक घटक कम होते है।

v. **दृष्टिकोण में** - यह संज्ञानात्मक रूप से दिमाग में मौजूद है। जब हम किसी विषयवस्तु या व्यक्ति के विषय में सोचते हैं, तो हम इसका सकारात्मक या नकारात्मक मूल्यांकन करते हैं। यह मूल्यांकन, समय के साथ बदल सकता है।

vi. **मूल्यों में -** जब मान्यताएं बताती हैं कि चीजों को कैसा होना चाहिए, तो किसी को यौन व्यवहार कैसे करना चाहिए, यह मूल्य बन जाता है। नैतिक गुणवत्ता के साथ कामुकता का अनुभव करते समय जो सही बनाम गलत का मूल्यांकन कर रहा है, यह मूल्य बन जाता है। उनके पास अधिक भावनात्मक घटक हैं और 'कामुकता का अनुभव' के विषय में पूछताछ हो सकती है।

vii. **व्यवहार में** – हम जो भी सोचते हैं वह हमारे व्यवहार में परिलक्षित होता है। यह हमारे विश्वास, दृष्टिकोण या मूल्यों में दिखाया जा सकता है। हमारी संस्कृति, परिवार और जीन कामुकता के विषय में हमारे व्यवहार को संशोधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

viii. **आचरण में-** हम उस व्यक्ति के विश्वासों, दृष्टिकोणों और व्यवहार को सम्मिलित करते हैं जिसे हम अपने विश्वास और दृष्टिकोण को पुरस्कृत तरीके से रखने में सफल पाते हैं। इसी तरह विपरीत मामले में हम उन प्रथाओं से बचते हैं जिन्हें हम दंडित होते हुए देखते हैं।

ix. **भूमिकाओं में** - हम उन लोगों को अपने रोल मॉडल के रूप में मानते हैं जिनकी हम प्रशंसा करते हैं या अक्सर उनसे घिरे रहते हैं। हम अपने परिवारों के बहुत करीब हैं इसलिए हम उनके दृष्टिकोण, विश्वास, मूल्यों और व्यवहार से प्रभावित होते हैं। लेकिन यह जरूरी नहीं

है कि बेटे और बेटियां भी ऐसा ही अनुभव करें। उनके पास अलग-अलग व्यक्तित्व, आनुवंशिक मेकअप और संज्ञानात्मक प्रक्रिया है।

x. **रिश्तों में** - जहां संगतता होती है, वहां रिश्ते मौजूद होते हैं । विश्वास या व्यवहार में कोई भी असमानता नकारात्मक अनुभव की ओर ले जाती है। किसी भी रिश्ते में निकटता एक-दूसरे के लिए उनकी इच्छा और सामाजिक प्रभावों के विषय में चुनौतियों का सामना करने पर निर्भर है।

कामुकता को प्रभावित करने वाले कारक

i. **संस्कृति**- विभिन्न धर्मों में यौन नैतिकता के विषय में अलग-अलग शिक्षाएं हैं। इसके विषय में उनकी अलग-अलग मान्यताएं और प्रथाएं हैं। कुछ उदारवादी हैं और कुछ कामुकता के विषय में अपने दृष्टिकोण में बहुत सख्त हैं।

ii. **राजनीतिक-**संस्कृति किसी व्यक्ति के यौन व्यवहार को आकार देने में जिम्मेदार हो सकती है लेकिन कहीं न कहीं यह पितृसत्तात्मक राजनीति से प्रभावित होती है। पुरुष वर्चस्व कामुकता को भी प्रभावित करता है क्योंकि उन्हें अधिक शारीरिक शक्ति माना जाता है। 'पकड़' और 'एक महिला पर अधिकार' की भावना ने इसे काफी प्रभावित किया है।

iii. **कानूनी-** यौन गतिविधि को विनियमित करने वाले कुछ कानूनों का उद्देश्य एक या सभी प्रतिभागियों की रक्षा करना है, जबकि अन्य का उद्देश्य ऐसे व्यवहार को प्रतिबंधित करना है जिसे अपराध या अपराध के रूप में परिभाषित किया गया है। उदाहरण के लिए, एक कानून असुरक्षित यौन संबंध को प्रतिबंधित कर सकता है यदि कोई व्यक्ति जानता है कि उसे यौन रोग है या किसी नाबालिग की रक्षा के लिए वह असुरक्षित यौन संबंध को प्रतिबंधित

कर सकता है। सामान्य तौर पर, कानून यौन शोषण या व्यवहार को रोकने में सहायता करता है जिसे समाज अनुचित और सामाजिक मानदंडों के विरुद्ध मानता है।

iv. **दार्शनिक**:- इसमें कामुकता और यौन पहचान के प्रश्न सम्मिलित हैं। यह इस तरह के मुद्दों को उठाता है कि सेक्स और कामुकता का कार्य क्या है? कामुकता अच्छी है या बुरी? क्या कामुकता, लिंग या जैविक सेक्स का एक कार्य है? कुछ का मानना है कि दार्शनिक रूप से कामुकता का उपयोग स्वयं को और दूसरे को खुश करने के लिए किया जाता है। दूसरी ओर, कुछ सोचते हैं कि कामुकता का प्रदर्शन करना हमारी नैतिकता के विरुद्ध है।

v. **सदाचार-पूर्ण** - नैतिक रूप से प्रभावित कामुकता को व्यक्तिपरक के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। यह एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न हो सकता है। सदाचार-पूर्ण आचरण के आयाम प्रत्येक के लिए अलग-अलग होते हैं और ये विभिन्न कारकों से प्रभावित होते हैं जैसे: आयु, मूल्य, परिवार, मित्र, पिछले अनुभव, आसपास, संस्कृति आदि।

vi. **नैतिक** - नैतिक कामुकता मानव यौन व्यवहार की अभिव्यक्ति है जो रिश्तों और यौन गतिविधियों के नैतिक आचरण को समझने और मूल्यांकन करने का प्रयास करती है। यह केवल तभी स्वीकार्य है जब कोई व्यक्ति वयस्क हो, मानसिक रूप से स्वस्थ हो, ड्रग्स या शराब आदि के प्रभाव में न हो।

vii. **जीवन के धार्मिक पहलू-** कुछ लोग तर्क देते हैं कि कामुकता आनुवंशिकी द्वारा निर्धारित की जाती है; कुछ का मानना है कि यह पर्यावरण द्वारा ढाला गया है और दूसरों का तर्क है कि ये दोनों ही कारक व्यक्ति के यौन अभिविन्यास को बनाने के लिए बातचीत करते हैं।

कामुकता के आयाम

कामुकता उम्र और परिपक्वता के साथ बदलती है। इसे औपचारिक रूप से दो व्यापक श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। वे हैं-

i. **बाल कामुकता**

अतीत में, अक्सर यह माना जाता था कि बच्चों में बाद के विकास तक कामुकता नहीं होती। सिगमंड फ्रायड बाल कामुकता को गंभीरता से लेने वाले पहले शोधकर्ताओं में से एक थे। अल्फ्रेड किन्से ने अपनी किन्से रिपोर्ट में बाल कामुकता की भी जांच की। बच्चे स्वाभाविक रूप से अपने शरीर और यौन कार्यों के विषय में उत्सुक होते हैं। उदाहरण के लिए- वे अक्सर आश्चर्य करते हैं या पूछते हैं कि बच्चे कहां से आते हैं, डॉक्टर-रोगी जैसे खेल खेलना या मम्मी-पापा खेलना आदि।

ii. **विलम्ब वयस्क कामुकता**

वयस्क कामुकता बचपन में उत्पन्न होती है। जबकि , कई अन्य मानव क्षमताओं की तरह, कामुकता निश्चित नहीं है, लेकिन उम्र के साथ परिपक्व और विकसित होती है। मानव कामुकता को मनुष्यों के सामाजिक जीवन के हिस्से के रूप में समझा जा सकता है, जो व्यवहार के निहित नियमों और यथास्थिति द्वारा शासित होता है।

पितृसत्ता: अर्थ और अवधारणा

'पितृसत्ता' शब्द का शाब्दिक अर्थ है पिता का शासन और मूल रूप से इसका उपयोग एक विशिष्ट प्रकार के 'पुरुष-प्रधान परिवार' का वर्णन करने के लिए किया जाता था - 'पितृसत्ता' का बड़ा घर जिसमें महिलाएं, कनिष्ठ पुरुष, बच्चे, दास और घरेलू नौकर सम्मिलित थे। अब इसका उपयोग आम तौर पर 'पुरुष वर्चस्व को संदर्भित करने के लिए, शक्ति संबंधों

के लिए किया जाता है जिसके द्वारा पुरुष महिलाओं पर हावी होते हैं और एक ऐसी प्रणाली को चिह्नित करने के लिए जिसके अंतर्गत महिलाओं को कई तरीकों से अधीनस्थ रखा जाता है'।

पितृसत्ता की अवधारणा को विभिन्न विचारकों द्वारा अलग-अलग तरीकों से परिभाषित किया गया है। मिशेल, एक नारीवादी मनोवैज्ञानिक, पितृसत्ता शब्द का उपयोग 'रिश्तेदारी प्रणालियों को संदर्भित करने के लिए करता है जिसमें पुरुष महिलाओं का आदान-प्रदान करते हैं'।

पितृसत्ता की उत्पत्ति के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण व्याख्या फ्रेडरिक एंगेल्स ने 1884 में अपनी पुस्तक, द ओरिजिन्स ऑफ द फैमिली, प्राइवेट प्रॉपर्टी एंड द स्टेट (एंगेल्स, 1940) में दी थी। एंगेल्स का मानना था कि महिलाओं की अधीनता निजी संपत्ति के विकास के साथ शुरू हुई, जब उनके अनुसार महिला लिंग की विश्व ऐतिहासिक हार हुई। उनका कहना है कि वर्गों का विभाजन और महिलाओं की अधीनता दोनों ऐतिहासिक रूप से विकसित हुईं।

'पितृसत्ता' : परिभाषाएँ

पितृसत्ता सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में पुरुष वर्चस्व को संदर्भित करती है। नारीवादी मुख्य रूप से पुरुषों और महिलाओं के मध्य शक्ति संबंधों का वर्णन करने के लिए 'पितृसत्ता' शब्द का उपयोग करते हैं। इस प्रकार, पितृसत्ता सिर्फ एक शब्द से अधिक है; नारीवादी इसे एक अवधारणा की तरह उपयोग करते हैं और अन्य सभी अवधारणाओं की तरह यह महिलाओं की वास्तविकताओं को समझने में हमारी सहायता करने के लिए एक उपकरण है।

वह पितृसत्ता को एक प्रणाली के रूप में समझाती है क्योंकि इससे हमें जैविक नियतिवाद की धारणा को अस्वीकार करने में सहायता मिलती है (जो कहता है कि पुरुष और महिलाएं

अपने जीव विज्ञान या शरीर के कारण स्वाभाविक रूप से अलग हैं और इसलिए उन्हें अलग-अलग भूमिकाएं सौंपी जाती हैं) या "यह धारणा कि प्रत्येक व्यक्ति पुरुष हमेशा एक प्रमुख स्थिति में होता है और हर महिला अधीनस्थ होती है"।

लर्नर के अनुसार, 'पितृसत्ता', इसकी व्यापक परिभाषा में, परिवार में महिलाओं और बच्चों पर पुरुष प्रभुत्व की अभिव्यक्ति और संस्थाकरण और सामान्य रूप से समाज में पुरुष प्रभुत्व का विस्तार है। इसका तात्पर्य यह है कि "महिलाएं ऐसी शक्ति तक पहुंच से वंचित हैं"। जबकि , इसका तात्पर्य यह नहीं है कि "महिलाएं या तो पूरी तरह से शक्तिहीन हैं या अधिकारों, प्रभाव और संसाधनों से पूरी तरह से वंचित हैं।

वाल्बी "पितृसत्ता को सामाजिक संरचनाओं और प्रथाओं की एक प्रणाली के रूप में परिभाषित करता है जिसमें पुरुष महिलाओं पर हावी होते हैं, दमन करते हैं और शोषण करते हैं।

पितृसत्ता पुरुष प्रभुत्व की संस्थागत प्रणाली का वर्णन करती है। इसलिए हम उपयोगी रूप से पितृसत्ता को पुरुषों और महिलाओं के मध्य सामाजिक संबंधों के एक प्रारूप के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, जिनके पास एक भौतिक आधार है और जो, जबकि पदानुक्रमित, पुरुषों के मध्य स्वतंत्रता और एकजुटता स्थापित करते हैं या बनाते हैं जो उन्हें महिलाओं पर हावी होने में सक्षम बनाता है।

'पितृसत्ता' : विभिन्न विचारधाराएं

पितृसत्तात्मक विचारधारा पुरुषों और महिलाओं के मध्य जैविक मतभेदों को अतिरंजित करती है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि पुरुषों की हमेशा प्रमुख या पुरुषत्व भूमिकाएं होती हैं और महिलाओं की हमेशा अधीनस्थ या स्त्री भूमिकाएं होती हैं। यह विचारधारा इतनी शक्तिशाली है कि 'पुरुष आमतौर पर उन महिलाओं की स्पष्ट सहमति प्राप्त करने

में सक्षम होते हैं जिन पर वे अत्याचार करते हैं'। वे इसे "अकादमी, चर्च और परिवार जैसे संस्थानों के माध्यम से करते हैं, जिनमें से प्रत्येक पुरुषों के लिए महिलाओं की अधीनता को सही ठहराता है और सुदृढ़ करता है"।

इस संबंध में, **अरस्तू** ने इसी तरह के "सिद्धांतों" का प्रतिपादन किया और पुरुषों के सक्रिय, महिलाओं को निष्क्रिय कहा। उनके लिए महिला "विकृत पुरुष" थी, कोई ऐसा व्यक्ति जिसके पास आत्मा नहीं है। उनके विचार में, महिला की जैविक हीनता, उसकी क्षमता, तर्क करने की क्षमता और इसलिए, निर्णय लेने की उसकी क्षमता में भी हीन है। क्योंकि पुरुष श्रेष्ठ है और स्त्री हीन है, वह शासन करने के लिए पैदा हुआ है और वह शासन करने के लिए पैदा हुआ है। उन्होंने कहा, "पुरुष का साहस आज्ञा पालन करने में एक महिला की आज्ञा में दिखाया जाता है।

हार्टमैन (1981) पितृसत्ता और पूंजीवाद के मध्य की कड़ी को देखता है और तर्क देता है कि पितृसत्ता सभी पुरुषों को उनके वर्ग के बावजूद एक दूसरे से जोड़ती है। वह पितृसत्ता को संबंधों के एक समूह के रूप में परिभाषित करता है जिसमें एक भौतिक आधार होता है और जिसमें पुरुषों के मध्य पदानुक्रमित संबंध होते हैं और उनके मध्य एकजुटता होती है जो बदले में उन्हें महिलाओं पर हावी होने में सक्षम बनाती है। पितृसत्ता का भौतिक आधार महिलाओं की श्रम शक्ति पर पुरुषों का नियंत्रण है।

मिज़ लिंग पदानुक्रम या पितृसत्ता की उत्पत्ति के संभावित कारणों और ऐतिहासिक विकास के अनुक्रम के विषय में कुछ विचार सामने रखता है। उनका तर्क है कि विभिन्न नारीवादी समूहों के मध्य वैचारिक मतभेद जो भी हों, वे पुरुषों और महिलाओं के मध्य पदानुक्रमित संबंधों के विरुद्ध अपने विद्रोह में एकजुट हैं, जिसे अब जैविक नियति के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है।

मीस के अनुसार, महिलाएं जीवन की, सामाजिक उत्पादन की, उत्पादन के पहले उपकरण की पहली उत्पादक थीं और यदि वे सामाजिक संबंधों को शुरू करने वाली पहली भी थीं, तो वे लिंगों के मध्य एक पदानुक्रमित और शोषक संबंध की स्थापना को रोकने में असमर्थ क्यों थीं? वह यह कहते हुए इसका जवाब देती है कि पुरुष वर्चस्व, पुरुषों के बेहतर आर्थिक योगदान का परिणाम होने से दूर, विनाशकारी उपकरणों के विकास और नियंत्रण का परिणाम था जिसके माध्यम से वे महिलाओं, प्रकृति और अन्य पुरुषों को नियंत्रित करते थे।

इसलिए, पितृसत्ता के कारण, महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों और अवसरों से वंचित कर दिया गया था, पितृसत्तात्मक मूल्य महिलाओं की गतिशीलता को प्रतिबंधित करते हैं, खुद के साथ-साथ उनकी संपत्ति पर उनकी स्वतंत्रता को अस्वीकार करते हैं। पितृसत्ता एक ऐसी प्रणाली है जिसके अंतर्गत महिलाओं को कई तरीकों से अधीनस्थ रखा जाता है। यहां इसका तात्पर्य पुरुषों की तुलना में महिलाओं की हीन स्थिति है। शक्तिहीनता की भावना, भेदभाव और सीमित आत्म-सम्मान और आत्मविश्वास का अनुभव संयुक्त रूप से महिलाओं की अधीनता में योगदान देता है। पितृसत्तात्मक वर्चस्व के अंतर्गत महिलाएं एक आश्रित सेक्स वर्ग हैं।

'पितृसत्ता' के प्रकार

वाल्बी जिसे 'उत्पादन का पितृसत्तात्मक तरीका' कहते हैं, महिलाओं के श्रम को उनके पतियों और वहां रहने वाले अन्य लोगों द्वारा छीन लिया जाता है। वह कहती हैं कि गृहिणियां उत्पादक वर्ग हैं, जबकि पति बहिष्कृत वर्ग हैं, उनके कमर तोड़ने, अंतहीन और दोहराए जाने वाले श्रम को बिल्कुल भी काम नहीं माना जाता है और गृहिणियों को अपने पतियों पर निर्भर देखा जाता है। इसलिए, पितृसत्ता के लिए भौतिक आधार है। महिलाओं को सत्ता प्रणाली से दूर रखने के लिए पितृसत्तात्मक विचारधारा को क्रमशः महिलाओं और पुरुषों के

लिए निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों के निर्माण के माध्यम से प्रयास किया गया है। वाल्बी ने पितृसत्ता के दो रूप बताये है-

(i.) निजी पितृसत्ता

(ii.) सार्वजनिक पितृसत्ता

i. **निजी पितृसत्ता**- यह महिलाओं के उत्पीड़न के मुख्य स्थल के रूप में घरेलू उत्पादन पर आधारित है। महिलाओं के श्रम का निष्कासन मुख्य रूप से घर के भीतर व्यक्तिगत पतियों द्वारा किया जाता है। पितृसत्तात्मक रणनीति का सिद्धांत बहिष्करण है।

ii. **सार्वजनिक पितृसत्ता**- यह मुख्य रूप से सार्वजनिक साइटों जैसे रोजगार और राज्य में आधारित है। यह एक अधिक सामूहिक विनियोग है। यह अलगाववादी और अधीनस्थ है।

लिम, वाई.सी. (1997:220) के अनुसार, पितृसत्ता अर्थव्यवस्था, समाज और संस्कृति में पुरुष वर्चस्व और महिला अधीनता की प्रणाली है, जो आज तक मानव इतिहास की विशेषता है। पितृसत्तात्मक संस्थाएं और सामाजिक संबंध पूंजीवादी मजदूरी श्रम बाजार में महिलाओं की हीन या द्वितीयक स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं।

भारत में पितृसत्ता के विभिन्न उदाहरण

हमारे प्रतिदिन के जीवन में हम कई घटनाएं देखते हैं जो हमारे देश में पितृसत्ता प्रणाली को दर्शाती हैं। इन्हें बाजार में, कार्यालय स्थान, संस्थानों और यहां तक कि हमारे परिवारों में भी देखा जा सकता है। उनमें से कुछ इस प्रकार हैं:-

माता-पिता और रिश्तेदार बालिका की तुलना में एक नवजात बालक बच्चे को पसंद करते हैं। वे लड़की को जन्म देने वाली मां को कमजोर करते हैं और बालक बच्चे की मां को सचमुच लाड़-प्यार दिया जाता है।

एक परिवार में, भोजन वितरण में भेदभाव घर पर देखा जा सकता है। यह एक कारण है कि भारतीय बालिकाओं में पोषण की कमी पाई जाती है।

अक्सर यह देखा गया है कि बालिकाओं की तुलना में लड़कों को अच्छे शैक्षिक अवसरों तक पहुंच प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त , एक लड़की को घर के कार्यों के लिए घर पर वापस रखना एक सुविधाजनक तरीका पाया जाता है।

छेड़छाड़ और बलात्कार के घटनाओं में वृद्धि के कारण महिलाओं के लिए गतिशीलता की स्वतंत्रता पर अंकुश लगा दिया गया है।

यहां तक कि निर्णय लेने में भी उनके पास या तो कोई बात नहीं है या कम स्वतंत्रता है।

घरेलू हिंसा लगभग सभी देशों में देखी जाती है और भारत भी इनसे अलग नहीं है। घर पर महिलाओं को पुरुषों द्वारा घर पर पीटा जाता है और महिलाओं पर अपनी पुरुषत्व और वर्चस्व साबित करने के लिए दुर्व्यवहार किया जाता है।

आज महिलाओं के मध्य साक्षरता में वृद्धि हुई है, जिसके परिणामस्वरूप वे अब रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों से अवगत हैं। लेकिन शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक रूप से उनका उत्पीड़न भी साथ-साथ बढ़ा है।

जबकि कानून बेटियों को संपत्ति विरासत का समान अधिकार देता है, लेकिन फिर भी कई लोगों को इसे अर्जित करने के लिए कानूनी लड़ाई लड़नी पड़ती है या वे सिर्फ चुप रहते हैं।

हमारी संस्कृति में विवाह का निर्णय लड़के पर निर्भर करता है और शायद ही कभी बालिकाओं से सहमति ली जाती है।

कुछ समुदाय बालिकाओं के लिए कपड़े पहनने की स्वतंत्रता के विषय में बहुत सख्त हैं। कुछ पितृसत्ताओं को लगता है कि अनुचित कपड़े पहनने वाली लड़कियां लड़कों को यौन

रूप से आमंत्रित और उत्तेजित करती हैं। लड़कों को नियंत्रित करने के के स्थान पर बालिकाओं को कपड़े पहनने, व्यवहार करने और सीमा में घूमने का निर्देश दिया जाता है।

इस प्रकार महिलाओं की स्थिति को सुधारने के लिए, महिलाओं को पितृसत्तात्मक अधीनता से बचाना जरूरी है। यह पितृसत्तात्मक विचारधारा है जो हमें स्त्री और पुरुष बनाती है, जो महिलाओं और पुरुषों को अलग-अलग भूमिकाएं, अधिकार और जिम्मेदारियां सौंपती है। लेकिन वे तथाकथित 'पुरुष' और 'स्त्री' गुण मानवीय गुण हैं और पुरुषों या महिलाओं के लिए विशिष्ट नहीं हैं। चूंकि सभी काम पुरुषों और महिलाओं दोनों द्वारा किए जाते हैं, इसलिए सेक्स के आधार पर कार्यों में भेद करने का कोई कारण नहीं है। पुरुषों ने काम का यह भेदभाव केवल अपने विशेषाधिकार के लिए, अपने भौतिक लाभ के लिए किया। नैतिकता के हमारे दोहरे मानदंड और पुरुषों को अधिक अधिकार देने वाले हमारे कानूनों में भी सुधार होना चाहिए। पितृसत्ता की प्रमुख विचारधारा में आमूलचूल परिवर्तन लाने का समय आ गया है। समानता लाने के लिए, जीवन के सभी घटनाओं में पुरुषों और महिलाओं के मध्य समान अधिकार स्थापित करना आवश्यक है।

समाजशास्त्री सिल्विया वाल्बी ने पितृसत्ता को परिभाषित करने वाली छह अतिव्यापी संरचनाओं की रचना की है और जो विभिन्न संस्कृतियों और अलग-अलग समय में अलग-अलग रूप लेते हैं:

1. **राज्य:** महिलाओं को औपचारिक शक्ति और प्रतिनिधित्व होने की संभावना नहीं है
2. **घर:** महिलाओं को घर का काम करने और बच्चों को पालने की अधिक संभावना है।
3. **हिंसा:** महिलाओं को दुर्व्यवहार होने का खतरा अधिक होता है
4. **भुगतान किए गए काम:** महिलाओं को कम भुगतान किए जाने की संभावना है

5. **कामुकता:** महिलाओं की कामुकता को नकारात्मक रूप से व्यवहार किए जाने की अधिक संभावना है

6. **संस्कृति:** मीडिया और लोकप्रिय संस्कृति में महिलाओं को अधिक गलत तरीके से प्रस्तुत किया जाता है

पितृसत्ता के सिद्धांत

i. मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांत

मनोविश्लेषणात्मक सिद्धांतकार जांच करते हैं कि कैसे मनोवैज्ञानिक विकास पिता के आंतरिक कानून और ओडिपस मानसिक संरचना द्वारा नियंत्रित होता है। यह सिद्धांत अचेतन के भीतर पितृसत्ता के आंतरिककरण पर केंद्रित है।

शब्द प्राधिधर्माध्यक्ष अक्सर "पुरुष वर्चस्व" के लिए शिथिल रूप से दुरुपयोग किया जाता है, जबकि अधिक कठोर परिभाषा शाब्दिक व्याख्या के साथ निहित है: "पिता का शासन"।

पितृसत्ता सत्ता से उभरी है, जिसमें पिता को मां की तुलना में महत्वपूर्ण माना गया है क्योंकि उनकी भूमिका परिवार और समाज में अधिक है। फ्रायड ने महिलाओं को पुरुषों से कमतर बताया। उनका मानना था कि महिलाएं गौण थीं और आदर्श नहीं थीं और आदर्श पर काफी हद तक नहीं उतरती थीं। पितृसत्तात्मक समाज इस धारणा को प्रतिष्ठापित करते हैं कि राज्य के प्रमुख पुरुष होने चाहिए और उन्हें हर जगह हावी होना चाहिए।

ii. समाजशास्त्रीय सिद्धांत

अधिकांश समाजशास्त्री पितृसत्ता के मुख्य रूप से जैविक स्पष्टीकरण को अस्वीकार करते हैं और तर्क देते हैं कि सामाजिक और सांस्कृतिक कंडीशनिंग मुख्य रूप से पुरुष और महिला लिंग भूमिकाओं को स्थापित करने के लिए जिम्मेदार हैं। मानक समाजशास्त्रीय

सिद्धांत के अनुसार, पितृसत्ता समाजशास्त्रीय निर्माणों का परिणाम है जो पीढ़ी से पीढ़ी तक पारित होते हैं।

ये निर्माण पारंपरिक संस्कृतियों और कम आर्थिक विकास वाले समाजों में सबसे अधिक स्पष्ट हैं। आधुनिक, विकसित समाजों में भी, जबकि , परिवार, मास मीडिया और अन्य संस्थानों द्वारा व्यक्त किए गए लिंग संदेश काफी हद तक पुरुषों को एक प्रमुख स्थिति के पक्ष में रखते हैं।

अरस्तू के कार्यों ने महिलाओं को नैतिक, बौद्धिक और शारीरिक रूप से पुरुषों से कमतर के रूप में चित्रित किया; महिलाओं को पुरुषों की संपत्ति के रूप में देखा; दावा किया कि समाज में महिलाओं की भूमिका घर में पुरुषों को पुन: पेश करना और उनकी सेवा करना था; और महिलाओं के पुरुष वर्चस्व को प्राकृतिक और सदाचारी के रूप में देखा।

कार्ल मार्क्स के अनुसार, मानव प्रकृति को भौतिक उत्पादकता के सामाजिक संगठन से अमूर्तता में आसानी से नहीं समझा जा सकता है। उनके अनुसार परिवार और समाज के भीतर श्रम और शक्ति का विभाजन पितृसत्ता में निहित है।

iii. जैविक सिद्धांत

पश्चिमी राजनीतिक सिद्धांत में, पितृसत्ता के 'प्राकृतिक' औचित्य अरिस्टोटेलियन धारणा पर वापस जाते हैं कि पुरुष की दुनिया में महिला का स्थान उसके आवश्यक जैविक, प्रजनन कार्य और पुरुष के लिए उसके तर्क की हीनता से प्राप्त होता है।

पितृसत्तात्मक समाज में विज्ञान का विकास पुरुष और महिला से शुरू होता है। पुरुष टेस्टोस्टेरोन हार्मोन जोखिम लेने के व्यवहार को बढ़ाने के लिए जाना जाता है जो समूहों में बढ़ी हुई स्थिति उत्पन्न कर सकता है। यह भी दावा किया गया है कि महिलाएं अपने मासिक

धर्म के दौरान तर्कसंगत और बुद्धिमान निर्णय नहीं ले सकती हैं। इन जैविक लक्षणों और महिलाओं के लिए अन्य विशिष्ट, जैसे कि गर्भवती होने की उनकी क्षमता अक्सर कमजोरी की विशेषता के रूप में उनके विरुद्ध उपयोग की जाती है।

कुछ सिद्धांतकारों का सुझाव है कि पुरुषों और महिलाओं के मध्य जैविक भेद भी उनके मानसिक और शारीरिक मतभेदों का परिणाम है। उनका तर्क है कि जैविक रूप से पुरुष शारीरिक और मानसिक रूप से महिलाओं से बेहतर होते हैं। अन्य सिद्धांतकारों का सुझाव है कि पुरुषों और महिलाओं के मध्य जैविक भेद अतिरंजित है। मतभेदों को सामाजिक रूप से समाज की पितृसत्तात्मक प्रणाली द्वारा निर्मित किया जाता है जिसके द्वारा पुरुषों को महिलाओं से बेहतर बताया जाता है। इसलिए महिलाएं समाज में पुरुषों के अधीन हो जाती हैं।

शुलमिथ फायरस्टोन ने अपनी पुस्तक 'द बोलियाँ ऑफ़ सेक्स' (1970) में सुझाव दिया है कि पितृसत्ता महिलाओं की प्रजनन करने की जैविक क्षमता का उनकी कमजोरी के रूप में शोषण करती है।

पुरुषत्व : अर्थ और अवधारणा

पुरुषत्व (**लड़कपन**, **मर्दानिगी,मैचो आदि भी कहा जाता है**) प्रायः लड़कों और पुरुषों से जुड़े गुणों, व्यवहारों और भूमिकाओं का एक सेट है। पुरुषत्व सामाजिक रूप से निर्मित है, लेकिन यह सामाजिक रूप से परिभाषित और जैविक रूप से निर्मित दोनों कारकों से बना है, जो पुरुष जैविक लिंग की परिभाषा से अलग है। पुरुष और महिला दोनों पुरुषत्व लक्षण और व्यवहार प्रदर्शित कर सकते हैं। जो पुरुषत्व और पुरुषत्व दोनों का प्रदर्शन करते हैं स्त्री सम्बन्धी विशेषताओं पर विचार किया जाता है। पुरुषत्व और स्त्रीत्व दोनों विशेषताओं को प्रदर्शित करने वालों को उभयलिंगी माना जाता है, और नारीवादी

दार्शनिकों ने तर्क दिया है कि लिंग अस्पष्टता लिंग वर्गीकरण को धुंधला कर सकती है।

पुरुषत्व मानदंड, जैसा कि रोनाल्ड एफ. लेवंत की मैस्कुलिनिटी रीकंस्ट्रक्टेड में वर्णित है, "स्त्रीत्व से बचना; प्रतिबंधित भावनाएं; अंतरंगता से अलग किया गया सेक्स; उपलब्धि और स्थिति की खोज; आत्मनिर्भरता; ताकत और आक्रामकता, और होमोफोबिया।" ये मानदंड गुणों और विशेषताओं को एक लिंग के साथ जोड़कर लिंग भूमिकाओं को सुदृढ़ करते हैं।

आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार, महिलाओं का जीव विज्ञान उनके मनोविज्ञान और इसलिए, उनकी क्षमताओं और भूमिकाओं को निर्धारित करता है। उदाहरण के लिए, सिगमंड फ्रायड ने कहा कि सामान्य मानव पुरुष था (फ्रायड, 1977)।

हालाँकि, पुरुष श्रेष्ठता की प्रचलित धारणाओं को विरोध का सामना करना पड़ा है, और यह प्रदर्शित किया गया है कि ऐसे दावों के लिए कोई ऐतिहासिक या वैज्ञानिक पुष्टि नहीं है। जबकि पुरुषों और महिलाओं के मध्य जैविक असमानताएं मौजूद हैं, उन्हें एक पदानुक्रमित संरचना की नींव के रूप में काम नहीं करना चाहिए जिसमें पुरुष प्रभुत्व रखते हैं। इन सिद्धांतों की जांच करने से हमें यह स्वीकार करने की अनुमति मिलती है कि पितृसत्ता एक सामाजिक निर्माण है, जो ऐतिहासिक घटनाओं और मानवीय कार्यों से आकार लेती है।

पुरुषत्व के लक्षण

वे स्थान और संदर्भ से भिन्न होते हैं, और सामाजिक और सांस्कृतिक कारकों से प्रभावित होते हैं। इन लक्षणों में सम्मिलित हैं:

i. **साहस**–जब हम पुरुषत्व या पुरुष के विषय में बात करते हैं तो यह शक्ति, साहस, बहादुरी, मजबूत आदि का पर्याय बन जाता है। जैसा कि पितृसत्ता के विभिन्न सिद्धांतों के अंतर्गत

पहले चर्चा की गई है कि मनोवैज्ञानिक को लगता है कि आदमी में किसी भी स्थिति का सामना करने का साहस है और इतना ही नहीं उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह जब भी आवश्यक हो इस विशेषता को दिखाए।

ii. **स्वाधीनता**- हमारे पितृसत्तात्मक समाज ने पुरुषों को कोई भी स्वतंत्र निर्णय लेने का अधिकार और स्वतंत्रता दी है। उसे ऐसी स्थिति में रखा गया है कि उसे किसी भी सुझाव, सलाह या आलोचना के लिए अपनी महिला साथी या समकक्ष से पूछने की जहमत उठाने की आवश्यकता नहीं है। उसकी स्वतंत्रता पर किसी भी प्रतिबंध को उसकी पुरुषत्व के विरुद्ध माना जाता है। समाज और परिवार के सदस्य भी उनकी स्वतंत्रता या स्वतंत्रता पर सवाल नहीं उठाते हैं।

iii. **सामर्थ्य:** पुरुषत्व एक आदमी के लिए यह माने जाने का अर्थ है कि सबको उसके नियम या निर्णय का पालन करना होता है, चाहे वह सही हो या गलत। उसे किसी भी तरह की आलोचना और प्रश्नांवलिति अच्छी नहीं लगती है। कभीकभी वह इतना अटल होता है कि - वह अपने दृष्टिकोण को साबित करने के लिए साहसिकता में दिखाई देता है। हमारे समाज का ढांचा ऐसा है कि हम एक आदमी की इस गुणधर्म को ठीकठाक स्वीकार - करते हैं और उसकी बात मान लेते हैं।

'**मैकिसमो' (machismo)** का तात्पर्य मर्दानगी और शक्ति पर अत्यधिक ध्यान केंद्रित करना है, जो अक्सर परिणामों और जिम्मेदारी की उपेक्षा के साथ होता है।

पुरुषत्व का विकास

पुरुषत्व के अकादमिक अध्ययन ने 1980 के दशक के अंत और 1990 के दशक की शुरुआत में ध्यान आकर्षित किया, संयुक्त राज्य अमेरिका में इस विषय पर पाठ्यक्रमों की संख्या 30 से बढ़कर 300 से अधिक हो गई। इसने सामाजिक भेदभाव के अन्य पक्षों और अन्य क्षेत्रों की अवधारणाओं के साथ पुरुषत्व की जांच को जन्म दिया है, जैसे कि लिंग भेद का सामाजिक निर्माण (कई में प्रचलित दार्शनिक और समाजशास्त्रीय सिद्धांत)।

• बच्चों में लिंग पहचान का विकास निरंतर बहस का विषय है। कुछ लोग तर्क देते हैं कि पुरुषत्व का पुरुष शरीर से गहरा संबंध है, इसे पुरुष जननांग के साथ जोड़ा जाता है।

• दूसरों का प्रस्ताव है कि यद्यपि जीव विज्ञान पुरुषत्व को प्रभावित कर सकता है, यह सांस्कृतिक निर्माण का एक उत्पाद भी है। हाल के अध्ययनों ने पुरुषत्व और टेस्टोस्टेरोन की आत्म-अवधारणा के मध्य संबंधों का पता लगाया है, जिससे पता चलता है कि पुरुषत्व विभिन्न संस्कृतियों में भिन्न होता है और टेस्टोस्टेरोन का स्तर जरूरी नहीं कि किसी की पुरुषत्व या स्त्रीत्व की भावना को निर्धारित करता हो।

• इस परिप्रेक्ष्य के समर्थकों का तर्क है कि महिलाएं हार्मोनल और शारीरिक रूप से पुरुष विशेषताओं को प्राप्त कर सकती हैं, और परंपरागत रूप से अंतर्निहित माने जाने वाले पुरुषत्व के कई पहलू भाषा और संस्कृति द्वारा आकार दिए जाते हैं।

• तर्क के पोषण पक्ष पर, यह माना जाता है कि पुरुषत्व एक ही स्रोत से उत्पन्न नहीं होता है। हालाँकि सेना का मर्दानगी के एक विशिष्ट रूप को बढ़ावा देने में निहित स्वार्थ हो सकता है, लेकिन वह इसे पूरी तरह से निर्मित नहीं करती है।

• चेहरे के बालों को भाषाई रूप से पुरुषत्व से जोड़ा जाता है, जिसे अक्सर कहानियों में दर्शाया जाता है जहां लड़के दाढ़ी बनाना शुरू करने पर पुरुषत्व में बदल जाते हैं।

• विद्वानों का सुझाव है कि पुरुषत्व की "अनिश्चितता" आमतौर पर पारंपरिक पुरुषत्व से जुड़े व्यवहारों में योगदान करती है। "अनिश्चितता" का अर्थ है कि मर्दानगी जन्मजात नहीं है बल्कि इसे अर्जित किया जाना चाहिए। कई संस्कृतियों में, लड़कों को पुरुषत्व में प्रवेश के संस्कार के रूप में कठिन दीक्षा अनुष्ठान से गुजरना पड़ता है। पुरुषत्व भी खो सकती है, क्योंकि पुरुषों को सामाजिक अपेक्षाओं के अनुरूप न होने के कारण उपहास का सामना करना पड़ सकता है।

• शोध से संकेत मिलता है कि पुरुष अपनी पुरुषत्व के विरुद्ध खतरों का जवाब रूढ़िवादी रूप से पुरुषत्व व्यवहार प्रदर्शित करके और पदानुक्रम का समर्थन करने, समलैंगिकता के विचारों को व्यक्त करने, आक्रामकता का समर्थन करने और बौद्धिक कार्यों पर शारीरिक कार्यों को प्राथमिकता देने जैसी मान्यताओं को अपनाकर देते हैं।

• 2014 में, वाइनगार्ड और गीरी ने नोट किया कि पुरुषत्व की अनिश्चितता सामाजिक स्थिति (प्रतिष्ठा या प्रभुत्व) से जुड़ी हुई है, और स्थिति प्राप्त करने के लिए पुरुषों के लिए उपलब्ध रास्ते के आधार पर अनिश्चितता का स्तर भिन्न हो सकता है।

पितृसत्ता का इतिहास

रेविन कॉनेल के अनुसार, पुरुषत्व की समझ को एक एकल अवधारणा के बजाय कई "पुरुषत्व" के रूप में देखा जाना चाहिए, क्योंकि यह समय और संस्कृतियों में भिन्न है। पुरुषत्व के इतिहास का अध्ययन 1980 के दशक में महिलाओं के लिंग इतिहास के क्षेत्रों से प्रभावित होकर उभरा। पहले, महिलाओं के इतिहास पर ध्यान केंद्रित करने के परिणामस्वरूप यह पता लगाने की उपेक्षा हुई थी कि पुरुष घरेलू और पारिवारिक जीवन से कैसे संबंधित हैं, इस तथ्य के बावजूद कि पुरुष अनुभव का एक महत्वपूर्ण हिस्सा पुरुष दृष्टिकोण के प्रभुत्व वाले ऐतिहासिक खातों से विलुप्त था। इस अंतर को 1970 के दशक के अंत में महिलाओं के इतिहास के उदय और लिंग और महिलाओं के अनुभवों के

विश्लेषण के साथ चुनौती दी गई थी। जोन स्कॉट के प्रभावशाली लेख में समाज, शक्ति की गतिशीलता और प्रवचन की जांच करने के लिए एक विश्लेषणात्मक अवधारणा के रूप में लिंग को शामिल करने का आह्वान किया गया, जो लिंग अध्ययन के लिए एक आधार प्रदान करता है। स्कॉट ने लिंग के लिए दो दृष्टिकोण प्रस्तावित किए: उत्पादक लिंग, जिसने शक्ति संबंधों को आकार देने में इसकी भूमिका की जांच की, और लिंग का उत्पादन किया, जिसने पूरे इतिहास में लिंग के उपयोग और परिवर्तनों का पता लगाया। इस ढांचे ने पुरुषत्व के अध्ययन को प्रभावित किया है, जैसा कि पियरे बॉर्डियू की परिभाषा से पता चलता है कि पुरुषत्व सामाजिक और सांस्कृतिक रूप से प्रतिदिन की जीवन में निर्मित और पुनरुत्पादित होती है। महिलाओं के इतिहास में बढ़ते शोध ने समाज में पुरुष भूमिका, जो शुरू में मनोविश्लेषण से प्रभावित थी, के साथ-साथ भावनात्मक और पारस्परिक पहलुओं का अध्ययन करने की आवश्यकता की पहचान को प्रेरित किया। कॉनेल ने नोट किया कि इस क्षेत्र में शुरुआती कार्यों ने उच्च स्तर की व्यापकता के साथ सांस्कृतिक मानदंडों के व्यापक सर्वेक्षण की पेशकश की। छात्रवृत्ति समकालीन सामाजिक परिवर्तनों से प्रभावित थी और इसका उद्देश्य नारीवाद के जवाब में पुरुष भूमिका को समझना और फिर से परिभाषित करना था। जॉन टोश अकादमिक और सार्वजनिक क्षेत्र दोनों में पुरुषत्व के इतिहास को प्रासंगिक बनाने के लिए इस उद्देश्य पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित करने की वकालत करते हैं।

वर्तमान पितृसत्ता

बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में, एक पारंपरिक परिवार में पिता सम्मिलित थे पालनकर्त्ता और माँ के रूप में गृहिणी. वर्तमान पुरुषत्व की विशेषता रूढ़ियों का मुकाबला करने के लिए पुरुषों की इच्छा है। उम्र या राष्ट्रीयता के बावजूद, पुरुष अधिक बार अच्छे स्वास्थ्य, एक सामंजस्यपूर्ण पारिवारिक जीवन और अपने जीवनसाथी या साथी के साथ अच्छे रिश्ते को उनके जीवन की गुणवत्ता के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं।

जॉन तोश के अनुसार, पुरुषत्व इतिहासकारों द्वारा अपने आप में एक विशेषता के स्थान पर अपने सांस्कृतिक अन्वेषणों को बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाने वाला एक वैचारिक ढांचा बन गया है। यह वास्तविकता से प्रतिनिधित्व और अर्थ की ओर ध्यान आकर्षित करता है, न केवल पुरुषत्व के दायरे में; संस्कृति "निचली रेखा, वास्तविक ऐतिहासिक वास्तविकता" बन रही थी।

तोश इस प्रकाश में मार्टिन फ्रांसिस के काम की आलोचना करता है क्योंकि पारिवारिक जीवन के अनुभव के के स्थान पर लोकप्रिय संस्कृति, फ्रांसिस के तर्क का आधार है। फ्रांसिस समकालीन साहित्य और फिल्म का उपयोग यह प्रदर्शित करने के लिए करते हैं कि 1940 और 1950 के दशक के अंत में पुरुषत्व बेचैन थी, घरेलूता और प्रतिबद्धता से दूर थी। फ्रांसिस ने लिखा कि प्रतिबद्धता से यह उड़ान "कल्पना (व्यक्तिगत और सामूहिक) के स्तर पर होने की सबसे अधिक संभावना थी। संस्कृति पर ध्यान केंद्रित करने में, यह अनुमान लगाना मुश्किल है कि फिल्में किस हद तक *अंटार्कटिक के स्कॉट* युग की पुरुषत्व कल्पनाओं का प्रतिनिधित्व किया। पुरुषत्व की व्यक्तिपरकता पर ध्यान केंद्रित करने के लिए माइकल रोपर का आह्वान इस सांस्कृतिक पूर्वाग्रह को संबोधित करता है, क्योंकि व्यापक समझ को "वास्तविक पुरुषों, अस्तित्वगत घटनाओं, व्यक्तियों और उनके मानसिक मेकअप के लिए पुरुषत्व के कोड का संबंध क्या है" (तोश का मानव अनुभव) की परीक्षा के लिए अलग रखा गया है।

पुरुष -भूमिका तनाव

1987 में इस्लर और स्किडमोर ने पुरुषत्व का अध्ययन किया, "पुरुषत्व तनाव" का विचार बनाया और पुरुषत्व के तीन तत्वों को खोजा जो अक्सर भावनात्मक तनाव का परिणाम होता है:

- शरीर और फिटनेस की आवश्यकता वाली स्थितियों में प्रचलित होने पर जोर

- भावनात्मक के रूप में माना जाना
- यौन घटनाओं और वित्तीय स्थिति में पर्याप्तता की आवश्यकता

पुरुषत्व से जुड़े सामाजिक मानदंडों और दबावों के कारण, रीढ़ की हड्डी की चोटों वाले पुरुषों को ऐसी चोटों से जुड़े नुकसान के लिए अपनी आत्म-पहचान को अनुकूलित करना चाहिए; यह "कम आत्मसम्मान और पुरुष पहचान के नुकसान के साथ शारीरिक और यौन कौशल में कमी की भावनाओं को जन्म दे सकता है। अपराध बोध और नियंत्रण के समग्र नुकसान की भावनाओं का भी अनुभव किया जाता है। शोध से यह भी पता चलता है कि पुरुष विज्ञापन में पारंपरिक पुरुषत्व पुरुष मॉडल का समर्थन करने के लिए सामाजिक दबाव महसूस करते हैं। ब्रेट मार्टिन और जुरगेन ग्नोथ (2009) ने पाया कि जबकि स्त्री पुरुषों ने निजी तौर पर स्त्री मॉडल पसंद किए, उन्होंने सार्वजनिक रूप से पारंपरिक पुरुषत्व मॉडल के लिए प्राथमिकता व्यक्त की; लेखकों के अनुसार, यह पारंपरिक पुरुषत्व मानदंडों का समर्थन करने के लिए पुरुषों पर सामाजिक दबाव को दर्शाता है।

एक आदमी की सामाजिक स्थिति और राजनीतिक शक्ति के सापेक्ष पुरुषत्व की चर्चा शुरू हो गई है। जोसेफ प्लेक के अनुसार, उत्तरी अमेरिकी पितृसत्तात्मक समाज में पुरुष-से-पुरुष संबंधों की एक प्रणाली मौजूद है। पदानुक्रम को पुरुषत्व के स्तर से सीमांकित किया जाता है, जो युवाओं में शारीरिक संरचना और उम्र के साथ धन और महिलाओं के अधिग्रहण के बराबर है।

डैन किंडलॉन और माइकल थॉम्पसन ने अपनी पुस्तक "रेज़िंग कैन: प्रोटेक्टिंग द इमोशनल लाइफ ऑफ बॉयज़" में दावा किया है कि जबकि सभी लड़के जन्म के समय स्वाभाविक रूप से प्यार करने वाले और सहानुभूतिपूर्ण होते हैं, लैंगिक समाजीकरण का प्रभाव, विशेष रूप से कठिन पुरुष आदर्श और अतिपुरुषत्व से जुड़े दबाव, भावनात्मक रूप से स्वस्थ वयस्क बनने की उनकी क्षमता को सीमित कर देता है। किंडलॉन और

थॉम्पसन का तर्क है कि पुरुष लिंग भूमिकाओं से संबंधित सामाजिक अपेक्षाओं द्वारा लगाए गए तनाव के कारण लड़कों को भावनाओं को समझने और प्रभावी ढंग से व्यक्त करने में चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

स्त्रीत्व : अर्थ और अवधारणा

'स्त्रीत्व मानव स्वतंत्रता के लिए बुनियादी आंदोलनों में से एक है' (शेनीर, 1996) समाज में एक नारीवादी भूमिका सभी महिलाओं के लिए समानता बनाने की आवश्यकता को सक्रिय रूप से पहचानना और काम करना है। स्त्रीत्व विशुद्ध रूप से एक आंदोलन है जो लैंगिक समानता में सुधार और महिलाओं की स्थिति को मजबूत करने के लक्ष्य के साथ लोगों को प्रबुद्ध करने का इरादा रखता है।

"1970 के दशक के उत्तरार्ध से 90 के दशक तक, कई नारीवादियों के काम ने लैंगिक असमानताओं का पता लगाया है और उन्हें चुनौती दी है" (ब्लंट, ए एंड विल्स, 2000, पृष्ठ 91)।

प्रतिदिन के जीवन में उपस्थित श्रेणियों और संरचनाओं के रूप में पुरुषत्व और स्त्रीत्व: एक परिचय

पुरुषत्व और स्त्रीत्व दोनों महत्वपूर्ण जैविक, सामाजिक और सांस्कृतिक श्रेणियां और निर्माण हैं। एक आत्म-धारणा प्रक्रिया में, महिलाएं और पुरुष खुद को स्त्रीत्व और पुरुषत्व के संदर्भ में वर्णित और परिभाषित करते हैं। महिलाएं खुद को 'स्त्री' और पुरुषों को 'पुरुषत्व ' के रूप में देखने की इच्छा रखती हैं।

महत्वपूर्ण श्रेणियों के रूप में स्त्रीत्व और पुरुषत्व हमारे दैनिक जीवन में मौजूद हैं। हमारी भाषा और सामाजिक अनुभूति में हम न केवल मनुष्यों के लिए बल्कि चीजों के लिए भी स्यूडोजेंडर श्रेणियों का उपयोग करते हैं। चॉकलेट और मिठाई 'स्त्री लिंग' हैं, स्टेक और

पोर्क ' पुलिंग' हैं, वोदका 'पुलिंग' भी है, जबकि लिकर 'स्त्री लिंग ' हैं। हैंडबैग स्त्री लिंग हैं जबकि मशीन गन पुलिंग हैं। हमारे द्वारा की जाने वाली गतिविधियों को लिंग संदर्भ द्वारा भी चिह्नित किया जाता है। बच्चे की देखभाल को 'स्त्री लिंग ' और युद्ध को ' पुलिंग ' माना जाता है।

अंत में, जैविक घटना के रूप में सभी प्रकृति, यदि 'स्त्री' और संस्कृति, मानव जाति की कार्रवाई और कार्य के परिणामस्वरूप, ' पुलिंग ' है। नारीत्व को अधिक जैविक माना जाता है, क्योंकि यह जीवन देने के साथ सख्ती से जुड़ा हुआ है, जबकि पुरुषत्व को प्रकृति को बदलने, वश में करने और महारत हासिल करने के रूप में माना जाता है।

स्त्रीत्व और पुरुषत्व सामाजिक संरचनाएं हैं जो स्त्रीत्व और पुरुषत्व को परिभाषित करने वाले लोगों के विश्वास से आकार लेती हैं। ये मान्यताएँ आम तौर पर एक-दूसरे के साथ संरेखित होती हैं लेकिन कुछ बातचीत की भी अनुमति देती हैं। समय के साथ, पुरुषत्व और स्त्रीत्व की धारणाओं ने स्थिरता, व्यापक सहमति और सांस्कृतिक सार्वभौमिकता प्रदर्शित की है। हालाँकि, वे सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता भी प्रदर्शित करते हैं। वर्तमान में, पुरुषत्व और स्त्रीत्व की अवधारणाओं में विभिन्न समूहों और समाजों में अलग-अलग गति से परिवर्तन हो रहे हैं।

नारीवाद की वैश्विक अवधारणा पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए अवसरों, उपचार, सम्मान और सामाजिक अधिकारों की समानता की वकालत करती है। नारीवादी वे व्यक्ति हैं जो सक्रिय रूप से लिंग-आधारित सामाजिक असमानता को पहचानते हैं और उसे संबोधित करने का प्रयास करते हैं, इसे समाप्त करने का प्रयास करते हैं।

नारीवाद के चार विशिष्ट प्रकार हैं:

कट्टरपंथी नारीवाद: इस आंदोलन का मानना है कि लिंगवाद समाज में गहराई से व्याप्त है और इसका एकमात्र समाधान लिंग की अवधारणा को पूरी तरह से खत्म करना है। कट्टरपंथी नारीवादी परिवर्तनकारी परिवर्तनों का प्रस्ताव करते हैं, जैसे ऐसी तकनीक विकसित करना जो बच्चों को महिला के शरीर के बाहर बड़ा करने की अनुमति देती है, जिससे महिलाओं को काम में रुकावटों से बचने और पुरुषों के समान गति से अपने करियर में आगे बढ़ने में मदद मिलती है।

समाजवादी नारीवाद: यह आंदोलन पूंजीवाद के अंत का आह्वान करता है और अर्थव्यवस्था के समाजवादी सुधार की वकालत करता है। समाजवादी नारीवादियों का तर्क है कि पूंजीवाद मौजूदा लिंगवादी शक्ति संरचना को मजबूत और कायम रखता है, क्योंकि वर्तमान में पुरुषों के पास अधिकांश शक्ति और धन है। उनका तर्क है कि पुरुष अपने संसाधनों को अन्य पुरुषों के साथ साझा करने के लिए अधिक इच्छुक होते हैं, जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं के लिए अवसर और संसाधन सीमित हो जाते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था में निहित लैंगिक वेतन अंतर, इस असमानता का एक उदाहरण है।

सांस्कृतिक नारीवाद: यह आंदोलन इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे आधुनिक समाज मर्दाना व्यवहार को बढ़ावा देने से नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है और सुझाव देता है कि इसके बजाय स्त्री व्यवहार को प्रोत्साहित करना फायदेमंद होगा। सांस्कृतिक नारीवादी आक्रामकता और प्रतिस्पर्धात्मकता जैसे गुणों के साथ पुरुषत्व के संबंध की आलोचना करते हैं, खासकर व्यापार और राजनीति जैसे व्यवसायों में। उनका तर्क है कि इन व्यवहारों का समर्थन करके, समाज दमन, हमले, हत्या और घरेलू हिंसा जैसे मुद्दों जैसे नकारात्मक पहलुओं को भी बढ़ावा देता है। सांस्कृतिक नारीवादियों का प्रस्ताव है कि पारंपरिक स्त्री व्यवहार को अपनाने से समाज बेहतर होगा।

उदार नारीवाद: यह दृष्टिकोण लैंगिक भेदभाव से निपटने और पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता हासिल करने के लिए व्यक्तिगत एजेंसी पर केंद्रित है। उदारवादी नारीवादी अपनी क्षमताओं का उपयोग करके और लोकतांत्रिक प्रक्रिया में शामिल होकर परिवर्तन लाने की व्यक्तियों की शक्ति पर जोर देते हैं। महिलाओं को बड़े समूहों में संगठित करने, विधायकों की पैरवी करने और लिंग-संबंधित मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाने के माध्यम से, उदार नारीवादी कानून के तहत, समाज में और कार्यस्थल में समान अधिकारों की वकालत करने के लिए उपलब्ध संसाधनों और उपकरणों का उपयोग करते हैं।

नारीवाद और धर्म

पितृसत्तात्मक समाज में, धार्मिक नेतृत्व पर पुरुषों का वर्चस्व था। महिलाओं को अक्सर अधीन, निष्क्रिय और कमजोर के रूप में चित्रित किया जाता था, जिसके कारण उन्हें धार्मिक संस्थानों में उच्च पदों से बाहर कर दिया जाता था। नारीवादियों ने देखा है कि कुछ धार्मिक नेता महिलाओं को नैतिक रूप से हीन मानते थे और यहां तक कि उन्हें पुरुषों को लुभाने के लिए भी दोषी मानते थे। यह विश्वास पुरुष-प्रधान देवताओं की व्यापकता से पुष्ट होता है।

नारीवाद और समाज

नारीवाद के अभ्यास का समाज पर गहरा और स्थायी प्रभाव पड़ा है, जिससे विश्व स्तर पर महिलाओं के जीवन को लाभ हुआ है। बलात्कार, विवाह समानता, प्रजनन अधिकार, यौन उत्पीड़न, समान वेतन, घृणा अपराध और स्वास्थ्य असमानता जैसे ज्वलंत नारीवादी मुद्दे दैनिक समाचारों की सुर्खियों में बने रहते हैं। नारीवाद ने सामाजिक अन्यायों को चुनौती दी है, लिंग, नस्ल, वर्ग, संस्कृति, राष्ट्र, धर्म, यौन अभिविन्यास और विकलांगता के अंतर्संबंधीय प्रभावों को संबोधित किया है।

नारीवाद की आवश्यकता

हालाँकि महिलाओं ने महत्वपूर्ण प्रगति की है, फिर भी उन्हें अभी भी अन्याय, भेदभाव और कभी-कभी आक्रोश का सामना करना पड़ता है। हालाँकि, पुरुष लाभ और महिला लाभ के बीच विभाजन अब लगातार स्पष्ट नहीं है। लिंग एक महत्वपूर्ण सामाजिक विभाजन बना हुआ है, लेकिन अधिक खंडित और असंगत तरीके से (कावर्ड, 1999, पृष्ठ 192-193)। नारीवाद किसी की शक्ल, पहनावे या रिश्तों के बारे में नहीं है; यह समान अधिकारों के हकदार होने के बारे में है। इसका प्राथमिक लक्ष्य महिलाओं को सशक्त बनाना है, न कि सभी महिलाओं को कमजोर और उत्पीड़ित के रूप में देखना। नारीवादी अपनी ताकत को पहचानती हैं और उस संदेश को दुनिया तक पहुंचाना चाहती हैं। नारीवादियों का मानना है कि व्यक्तियों का मूल्यांकन उनके लिंग के आधार पर पूर्व निर्धारित धारणाओं के बजाय मनुष्य के रूप में उनकी अद्वितीय शक्तियों और क्षमताओं के आधार पर किया जाना चाहिए। हालांकि कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि नारीवाद अब आवश्यक नहीं है, फिर भी ऐसे क्षेत्र हैं जहां महिलाओं का प्रतिनिधित्व काफी कम है, जैसे राजनीति, सेना और इंजीनियरिंग। इसके अतिरिक्त, महिलाओं को अभी भी पुरुषों की तुलना में समान अवसर नहीं मिलते हैं। विवाह के परिणामस्वरूप अक्सर महिलाएं अपने जीवनसाथी का नाम लेती हैं। नारीवाद की अभी भी आवश्यकता है क्योंकि महिलाओं की अपने शरीर पर स्वायत्तता का कानून बना हुआ है, कन्या भ्रूण हत्या जारी है, और महिलाओं को लगातार सलाह दी जाती है कि बलात्कार को कैसे रोका जाए और उनकी सुरक्षा कैसे सुनिश्चित की जाए। लैंगिक वेतन असमानताएँ बनी हुई हैं, और महिलाओं को अभी भी अपने विचार व्यक्त करने और स्वतंत्र रूप से व्यवहार करने में सीमाओं का सामना करना पड़ता है। 21वीं सदी में, नारीवाद को व्यक्तिगत पसंद पर जोर देना चाहिए और दूसरों के भी ऐसा करने के अधिकार को पहचानना चाहिए। दुनिया भर की महिलाओं को नारीवाद के इस सशक्त संदेश को अपनाना चाहिए और अपनी नारीत्व और स्त्रीत्व को सकारात्मक रूप से परिभाषित करना चाहिए।

सेक्स: अर्थ और अवधारणा

सेक्स जैविक विशेषताओं को संदर्भित करता है, जबकि लिंग उन विशेषताओं के आधार पर सामाजिक रूप से निर्धारित किया जाता है।

लिंग (संज्ञा) का शब्दकोश अर्थ 'एक प्रजाति का पुरुष या महिला विभाजन है, विशेष रूप से प्रजनन कार्यों के संदर्भ में विभेदित'।

'सेक्स' और 'लिंग' शब्द के उपयोग को स्पष्ट करने के प्रयास में, अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश एंटोनिन स्कालिया ने 1994 की एक ब्रीफिंग में लिखा, "'लिंग' शब्द ने लिंगों के लिए विशिष्ट सांस्कृतिक या व्यवहार संबंधी विशेषताओं (शारीरिक विशेषताओं के विपरीत) का नया और उपयोगी अर्थ हासिल कर लिया है। कहने का तात्पर्य है, लिंग लिंगों के लिए स्त्री है और पुरुषत्व पुरुष के लिए है " (जे.ई.बी.वी. अल्बामा, 1994)। मानक मॉडल की यह कहने के लिए आलोचना की गई है कि मनुष्य या तो पुरुष या महिला है, इस प्रकार उन लोगों को छोड़ दिया गया है जो इंटरसेक्स पैदा हुए हैं। मानक मॉडल बताता है कि लिंग को दो अलग-अलग, विरोधी पक्षों में वर्गीकृत किया गया है, या तो पुरुषत्व या स्त्री होने के नाते, फिर से पूरी तरह से उन लोगों को छोड़कर जो इंटरसेक्स, ट्रांसजेंडर, एंड्रोजिनस और इतने पर हैं।

सेक्स और कामुकता पर आधारित शर्तें

- ट्रांसजेंडर एक सामान्य शब्द है जिसका उपयोग उन व्यक्तियों द्वारा किया जाता है जो अपने जैविक लिंग की लिंग भूमिका अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं हैं। इसका उपयोग उन व्यक्तियों द्वारा भी किया जाता है जो स्पष्ट रूप से अपने लिंग को अपने जैविक लिंग के विपरीत पहचान सकते हैं।
- ट्रांससेक्सुअल एक लिंग की जैविक विशेषता वाले लोग हैं जो खुद को विपरीत लिंग के रूप में पहचानते हैं और कुछ प्रकार के सर्जिकल परिवर्तन या हार्मोन

उपचार या दोनों होते हैं ताकि उनकी उपस्थिति उनकी पहचान के साथ संरेखण में हो जाए।

- ट्रांसवेस्टिट या क्रॉस-ड्रेसर आमतौर पर विपरीत जैविक लिंग के लोगों द्वारा पहने जाने वाले कपड़े पहनते हैं। जबकि , वे खुद को अपने जैविक लिंग से अलग लिंग पहचान के रूप में नहीं पहचानते हैं। ट्रांसवेस्टाइट ज्यादातर विषमलैंगिक होते हैं।
- इंटरसेक्स्ड लोग महिला और पुरुष जननांग दोनों के पहलुओं के साथ पैदा होते हैं, जिन्हें अक्सर 'अस्पष्ट जैविक सेक्स विशेषताओं' के रूप में जाना जाता है।
- उभयलिंगी - एक व्यक्ति भावनात्मक, रोमांटिक, यौन और संबंधपरक रूप से पुरुषों और महिलाओं दोनों के प्रति आकर्षित होता है, जबकि एक साथ नहीं।
- समलैंगिक - एक पुरुष या महिला का वर्णन करने वाला एक शब्द जो भावनात्मक, रोमांटिक, यौन और संबंधपरक रूप से एक ही लिंग के सदस्यों के प्रति आकर्षित होता है।
- लेस्बियन - एक महिला जो भावनात्मक, रोमांटिक, यौन और संबंधपरक रूप से अन्य महिलाओं के प्रति आकर्षित होती है।

सेक्स का अर्थ

सेक्स का अर्थ वस्तुनिष्ठ के बजाय व्यक्तिपरक है, क्योंकि यह व्यक्तिगत अनुभवों और व्याख्याओं से निकलता है। कामुकता पूरी तरह से संज्ञानात्मक या रैखिक प्रक्रिया नहीं है बल्कि एक सही मस्तिष्क, सन्निहित अनुभव है। जबकि सेक्स का विश्लेषण और मूल्यांकन किया जा सकता है, विश्लेषण स्वयं वास्तविक अनुभव से अलग है, उसी तरह जैसे खाने या सोने को कार्य से अलग समझा जा सकता है।

सेक्स में संभोग से परे कई प्रकार की गतिविधियाँ शामिल हैं। विभिन्न धार्मिक दृष्टिकोण सेक्स को अलग-अलग तरह से देखते हैं, कुछ इसे पाप के रूप में चित्रित करते हैं, जबकि मानवतावाद सेक्स को एक धर्मनिरपेक्ष अर्थ देने का प्रयास करता है। संभावित नकारात्मक अर्थों के अलावा, सेक्स का एक शुद्ध और पोषणकारी पहलू भी हो सकता है।

जोनाथन लीमन ने ईसाई दृष्टिकोण से सेक्स के अर्थ की खोज की और उस संदर्भ में इसके महत्व को समझने के लिए चार टिप्पणियाँ कीं।

सेक्स के विषय में चार अस्तित्वगत अवलोकन

- **सेक्स व्यक्तिगत रूप से शक्तिशाली है**- इसमें शारीरिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक और पहचान की भावना सम्मिलित है। बहुत से लोग इसके द्वारा अपने जीवन को भी परिभाषित करते हैं।
- **सेक्स सामाजिक रूप से शक्तिशाली है**- सुंदर महिला के पास शक्ति है और एक शक्तिशाली पुरुष आकर्षक है। कई कंपनियों ने इसका फायदा उठाना शुरू कर दिया है क्योंकि वे जानते हैं कि 'सेक्स' बिकता है।
- **सेक्स गहराई से गहरा है और हमारे व्यक्तित्व का एक घटक हिस्सा है।** इसमें सेक्स और कामुकता को सही ठहराने के लिए एक गहरी सोच सम्मिलित है। सेक्स या कामुकता पर कोई भी चोट शर्म, उल्लंघन और क्रोध की गहरी भावना लाती है क्योंकि यह हमारे व्यक्तित्व का एक हिस्सा है।

i. **सेक्स न केवल एकजुट करता है, अपितु यह विभाजित करता है**- यह पारस्परिक और राजनीतिक रूप से विभाजनकारी है। सेक्स के मुद्दे जब भी खुलकर चर्चा की जाती है तो आग भड़क उठती है।

लिंग भेद (जैविक रूप से)

पुरुष और महिला लिंगों के मध्य भेद संरचनात्मक और शारीरिक हैं।दोनों बाहरी और आंतरिक रूप से पुरुष जननांग महिलाओं से अलग होते हैं ।

यह आनुवंशिकी है जो किसी व्यक्ति के लिंग को परिभाषित करती है। पुरुष में क्रोमोसोम की 26 जोड़ी (24 जोड़ी + एक्स वाई) होती है और महिला में भी 26 क्रोमोसोम होते हैं लेकिन सेक्स क्रोमोसोमल जोड़ी 'एक्स एक्स' होती है।

महिलाओं में महिला हार्मोन-एस्ट्रोजन और प्रोजेस्टेरोन का उच्च स्तर और टेस्टोस्टेरोन हार्मोन का स्तर बहुत कम होता है। पुरुषों में टेस्टोस्टेरोन का उच्च स्तर और एस्ट्रोजन और प्रोजेस्टेरोन का बहुत कम स्तर होता है।

मनुष्यों में, जैविक लिंग जन्म के समय मौजूद पांच कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है: 'वाई' गुणसूत्र की उपस्थिति, गोनैड का प्रकार, सेक्स हार्मोन, आंतरिक प्रजनन शरीर रचना विज्ञान और बाहरी जननांग। आनुवंशिक लिंग पूरी तरह से 'वाई' क्रोमोसोम की उपस्थिति या अनुपस्थिति से निर्धारित होता है। नीचे दिए गए आरेख से पता चलता है कि सेक्स क्रोमोसोम नवजात शिशु के लिंग का निर्धारण कैसे करते हैं।

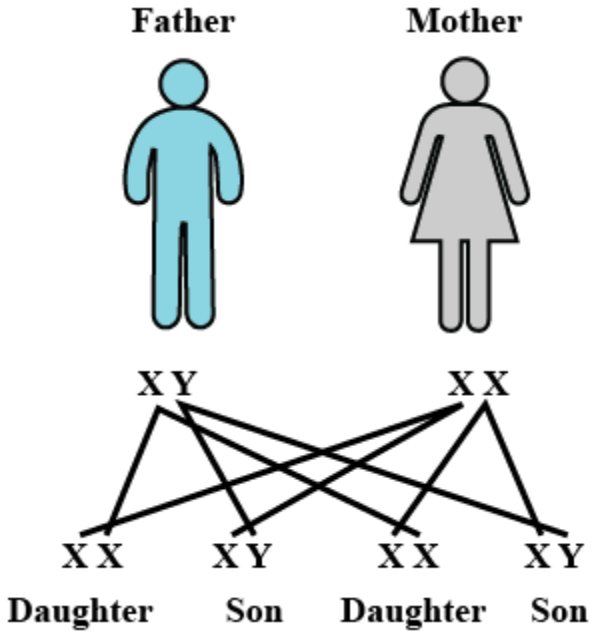

स्रोत : https://www.toppr.com/ask/question/the-figure-shows-sex-determination-in-humanswho-is-responsible-for-the-sex-of-offspringmale-or/

लिंग भेद (मनोवैज्ञानिक रूप से)

पुरुषों और महिलाओं के मध्य संज्ञानात्मक और व्यवहार संबंधी भेद देखा जा सकता है। क्रोमोसोमल प्रारूप व्यवहार परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है। 'X' क्रोमोसोम 'Y' की तुलना में बहुत अधिक सक्रिय है और यह सुविधा व्यवहार को प्रभावित करती है। कुछ शोधकर्ताओं ने कहा है कि 'एक्स' क्रोमोसोम पर जीन सामाजिकता के लिए जिम्मेदार है। कुछ मनोवैज्ञानिकों और पितृसत्ताओं का मानना है कि महिलाओं में गणितीय क्षमता की कमी होती है लेकिन शोधों ने पुष्टि की है कि सामान्य आबादी के मध्य गणित कौशल में कोई महत्वपूर्ण भेद नहीं है। सामाजिक और पर्यावरणीय कारक भी लोगों के व्यवहार को प्रभावित करते पाए गए हैं। इसके अतिरिक्त स्टीरियोटाइप लिंग के आधार पर व्यवहार भेद दिखाते हैं। यहां तक कि इस भेद के कारण व्यावसायिक विकल्प भी प्रभावित होते

हैं। चूंकि महिलाओं को अधिक भावनात्मक और भावुक माना जाता है, इसलिए पुरुषों की तुलना में उनमें ईर्ष्या अधिक होती है। यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दो लिंगों के मध्य मनोवैज्ञानिक भेद को बदलने की आवश्यकता है ताकि उनके मध्य संघर्ष से बचा जा सके।

लिंग भेद (समाजशास्त्रीय रूप से)

यह पाया गया है कि पुरुष महिलाओं की तुलना में अधिक हिंसक होते हैं। महिलाओं की तुलना में पुरुषों के लिए अपराधी दर अधिक पाई गई है। इसे जोखिम लेने के व्यवहार की प्रवृत्ति के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। यह गतिविधि, सामाजिक समर्थन और लिंग असमानता में लिंग भेद की ओर जाता है। ये सभी भेद सांस्कृतिक, जैविक या मनोवैज्ञानिक कारकों के कारण हो सकते हैं। यहां तक कि कार्यस्थल पर भी यह बताया गया है कि दोनों लिंग पुरुष बॉस या प्रशासक को पसंद करते हैं। समाजशास्त्रीय रूप से महिलाओं को अधिक सक्रिय माना जाता है यह परिवार या समुदाय में भूमिका हो सकती है। यह उन्हें मजबूत सामाजिक नेटवर्क बनाने में सहायता करता है।

अध्याय - 2

लिंग भेद, समता व समानता

लिंग की अवधारणा पर पहले ही चर्चा की जा चुकी है। 'लिंग भेद पुरुषों और महिलाओं के मध्य विशिष्ट भेद हैं'। वे एक विशेष संस्कृति के लिए विशिष्ट हो सकते हैं जहां आजीविका, संचार, स्वास्थ्य, सामाजिक जागरूकता और पर्यावरण के लिए अभिविन्यास के क्षेत्र में देखे जाते हैं।

लिंग भेद का सांस्कृतिक अर्थ जैसा कि एथन लाज़ुक द्वारा दिया गया है–

विभिन्न संस्कृतियां लिंग भेद के लिए अलग–अलग अर्थ व्यक्त करती हैं। ऐतिहासिक रूप से लिंग भेद को लैंगिक असमानता, (जिसकी बाद में चर्चा की जाएगी) या महिलाओं की स्थिति का उनके अक्सर प्रमुख पुरुष समकक्षों से संबंध के साथ जोड़ा गया है। लिंग भेद सामाजिक और जैविक कारकों द्वारा निर्धारित किया जाता है लेकिन जैसे–जैसे इन कारकों पर जोर दिया जाता है, समाज में लिंग भेद का महत्व भी बदल जाता है।

समयांतर में लिंग भेद

एक सांस्कृतिक अवधारणा के रूप में लिंग भेद मुख्य रूप से उनके अक्सर प्रमुख पुरुष समकक्षों के सापेक्ष समाज में महिलाओं की स्थिति का वर्णन करता है। महिलाओं की स्थिति ऐतिहासिक रूप से उत्पादन में उनके योगदान से बड़े हिस्से में निर्धारित की गई है। लाखों साल पहले मनुष्य बिना लिंग भेद के भोजन इकट्ठा करने थे, लेकिन धीरे–धीरे पुरुषों की तुलना में महिलाओं का योगदान

कम हो गया। पुरुष संसाधन संग्रह की व्यवस्था करने के लिए बाहर आए और महिलाओं को परिवार की देखभाल करने के लिए घर पर छोड़ दिया गया।

लिंग भेद के लिए जैविक आधार

समाज, लिंग भेद को कैसे समझते हैं इसमें जैविक कारकों ने एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चूंकि प्रजनन को महिलाओं के महत्वपूर्ण योगदान के रूप में देखा जाता था, इसलिए वे घरेलू घटनाओं तक सीमित थे और अपने बच्चों के पोषण के लिए भी जिम्मेदार थे। औद्योगिक युग में भी, रोजगार से महिलाओं का बहिष्कार कम था क्योंकि पुरुषों को अधिक शारीरिक रूप मैं शक्तिशाला माना जाता था। जैविक कारक अधिक रूढ़िवादी या पारंपरिक समाजों में सबसे प्रमुख हैं, जहां लिंग असमानता अधिक है। लिंग भेद निर्धारित करने में जैविक कारकों से अधिक महत्वपूर्ण, सामाजिक रूढ़ियों ने पुरुष नेतृत्व और महिला अधीनता को सही ठहराया है।

सामाजिक आधार पर लिंग भेद

जिस हद तक जैविक कारक लिंग भेद निर्धारित करते हैं, वह सामाजिक कारकों पर भी आधारित है, जो विभिन्न संस्कृतियों में भिन्न होते हैं। अधिक प्रगतिशील या कम पारंपरिक समाजों में, महिलाओं की भूमिका पुरुषों के करीब या बराबर है। समाजों में जैविक कारकों को जो बाल मिला है, वह ऐतिहासिक रूप से लिंग की रूढ़ियों द्वारा अतिरंजित किया गया है जो पुरुष प्रभुत्व का समर्थन करते हैं। एक सामाजिक कारक के रूप में, ये रूढ़ियाँ समाजों में लिंग भेद की धारणाओं को निर्धारित करने में जैविक कारकों की और भी अधिक भूमिका निभाती हैं।

लिंग भेद की अवधारणा तेजी से बदल रही है और एक सांस्कृतिक अवधारणा के रूप में इसकी प्रासंगिकता कम हो रही है।

धार्मिक आधार पे लिंग भेद

यह व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि महिलाओं को पुरुषों की तुलना में धार्मिक होने की अधिक संभावना है। महिलाएं पुरुषों की तुलना में भावनाओं को अधिक ऊंचाइयों पर महसूस करती हैं, इस प्रकार महिलाएं कृतज्ञता या अपराध जैसे उच्च भावनाओं के समय में धर्म की ओर अधिक रुख करती हैं। महिला समाजीकरण उन मूल्यों के साथ संरेखित होने की अधिक संभावना है जो आमतौर पर धर्म में पाए जाते हैं जैसे कि संघर्ष मध्यस्थता, कोमलता और विनम्रता। इसके विपरीत पुरुष समाजीकरण विद्रोह पर जोर देने की अधिक संभावना है, इस प्रकार धर्म के दिशानिर्देश पहलुओं को कम आकर्षक बनाता है। महिलाओं को सामाजिक संरचनाओं के प्राकृतिक परिणाम के रूप में धर्म के साथ पहचान करने में सक्षम होने की संभावना है। कुछ धर्म, नेतृत्व को पुरुषों तक सीमित करते हैं। धर्मों के एक छोटे से अल्पसंख्यक में, कुछ चुनिंदा भूमिकाएं केवल महिलाओं तक ही सीमित हैं। महिलाओं का समन्वय कुछ धर्मों में एक विवादास्पद मुद्दा रहा है, जहां या तो समन्वय का संस्कार या भूमिका जो एक नियुक्त व्यक्ति पूरा करता है, पारंपरिक रूप से सांस्कृतिक या धार्मिक निषेधों के कारण पुरुषों तक ही सीमित रहा है। हिंदू धर्म में, पुरुषत्व और स्त्री दोनों देवताओं को प्रमुखता से दिखाया गया है। लेकिन ऋग्वेद का पहला भजन पुरुषत्व देवता 'अग्नि' को संबोधित है और वेदों के पंथ में पुरुषत्व देवताओं का वर्चस्व है। इसके अतिरिक्त भगवान के सबसे प्रमुख 'अवतार' पुरुष हैं। जैन धर्म, बौद्ध धर्म, इस्लाम और सिख धर्म के पारंपरिक धार्मिक नेता सभी पुरुष हैं।

लिंग भेद और पूर्वाग्रह

महिलाओं को पुरुष से कमतर माना जाता है और इस भेदभाव में तीसरे लिंग के लिए कोई जगह नहीं है।

जिस दिन एक कन्या जन्म लेती है, उसे इस भेदभाव का सामना करना पड़ता है जो हमारे समाज में गहराई से स्थापित किया गया है। एक बच्चे के जन्म को प्रत्येक परिवार का एक क्षण माना जाता है लेकिन बच्ची के जन्म के मामले में यह सच नहीं है। इसका खामियाजा बच्ची को नहीं बल्कि इस बच्ची को जन्म देने वाली मां को भी भुगतना पड़ रहा है। इसके कारण कई महिलाएं या तो आसानी से लिंग निर्धारण और गर्भपात के लिए जाती हैं। लड़के को जन्म देने वाली महिला को कई परिवारों में बहुत लाड़-प्यार दिया जाता है। विडंबना यह है कि यह व्यवहार महिलाओं द्वारा दिखाया गया है। समाज की वृद्धि और विकास के बावजूद मानसिकता में ज्यादा बदलाव नहीं आया है। इस रवैये ने लड़के लड़की अनुपात को प्रभावित किया है जहां लड़कों की संख्या बालिकाओं से अधिक है। इससे पहले कि स्थिति गंभीर हो जाए, कदम उठाए जाने चाहिए अन्यथा हमारे पास बालिकाओं की संख्या बहुत कम हो सकती है। हरियाणा, राजस्थान आदि के कई हिस्सों में इस स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। जहां दुल्हनों की तलाश कठिन हो गई है।

समता और समानता

इससे पहले कि हम यह समझने की कोशिश करें कि लिंग समानता और समानता क्या है, आइए हम 'समता' और 'समानता' शब्दों के मध्य के भेद को समझें। अक्सर शैक्षिक समता का उल्लेख करते समय इन दो शब्दों का दुरुपयोग और आदान-प्रदान किया जाता है।

समता : यह स्वीकार करती है कि कुछ दूसरों की तुलना में बड़े नुकसान में हैं और इसका उद्देश्य इन लोगों के दुर्भाग्य और विकलांगता की भरपाई करना है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि हर कोई एक ही प्रकार की स्वस्थ जीवन शैली प्राप्त करने में सक्षम है। समता का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि हर किसी की जीवन शैली समान है, भले ही यह पहुंच और वस्तुओं के असमान वितरण की कीमत पर आ सकती है।

समानता: अमेरिकन लाइब्रेरी एसोसिएशन समानता को इस प्रकार परिभाषित करता है: "संचार के चैनलों और सूचना के स्रोतों तक पहुंच जो सभी स्तरों पर सभी के लिए समान शर्तों पर उपलब्ध कराई जाती है। यह समान वितरण के रूप में निष्पक्षता की अवधारणा से लिया गया है, जहां हर कोई समान स्तर की पहुंच का हकदार है और यदि वे इसे चुनते हैं तो स्वयं लाभ उठा सकते हैं।

समानता की इस परिभाषा में किसी एक व्यक्ति को अनुचित लाभ नहीं है। हर किसी को समान अवसर और पहुंच दी जाती है और फिर वे इसके साथ जो चाहें करने के लिए स्वतंत्र होते हैं।

लिंग, समता और समानता

लिंग समता के आधार पर किसी भी भेदभाव के बिना पुरुषों और महिलाओं दोनों को संसाधनों, कार्यक्रमों और निर्णय लेने को उचित रूप से आवंटित करने और पुरुषों और महिलाओं के लिए उपलब्ध लाभों में किसी भी असंतुलन को संबोधित करने की प्रक्रिया है।

लिंग साहित्य में, हम अक्सर दो अवधारणाओं में आते हैं: लिंग समानता और लिंग समता। वे कभी-कभी परस्पर उपयोग किए जाते हैं, लेकिन वे एक ही चीज़ का उल्लेख नहीं करते हैं। दूसरे शब्दों में, लैंगिक समानता सामाजिक वस्तुओं, सेवाओं और संसाधनों तक समान पहुंच और पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए जीवन के सभी क्षेत्रों में समान अवसरों को संदर्भित करती है। जब लैंगिक असमानता होती है, तो यह महिलाएं हैं जो वंचित और हाशिए पर होने की अधिक संभावना रखते हैं।

उदाहरण के लिए, पुरुषों के लिए उपयुक्त व्यवहार के विषयमें सामाजिक मानदंड उन्हें अपने परिवार के लिए भौतिक रूप से प्रदान करने की आवश्यकता के संबंध में दबाव में डालते हैं और उन्हें अपने बच्चों और पत्नी के प्रति अधिक पोषण करने के अवसरों से भी वंचित करते हैं। इसलिए लैंगिक समानता सभी की चिंता का विषय है और पुरुषों और महिलाओं दोनों के लिए बदलाव लाया जाना चाहिए। जबकि , यह कहना सही नहीं है कि पुरुष और महिलाएं लैंगिक असमानता से समान रूप से प्रभावित हैं। यह सच है कि महिलाओं के नुकसान का अधिक हिस्सा है।

"लिंग समानता महिलाओं और पुरुषों के प्रति निष्पक्ष होने की प्रक्रिया है" (यूएनएफपीए)।

जबकि , लिंग समानता, जैसा कि ऊपर परिभाषित किया गया है, अक्सर पुरुषों और महिलाओं के लिए समान परिणाम नहीं देता है। जीवन में एक ही मौका दिया जाना सच्ची समानता लाने के लिए पर्याप्त नहीं है। उदाहरण के लिए, लड़कों और बालिकाओं को स्कूल में पेश किए गए सभी पाठ्यक्रमों तक समान पहुंच देने से बालिकाओं को इस अवसर का लाभ नहीं मिल सकता है यदि

कुछ पाठ्यक्रम मुख्य रूप से पुरुष छात्रों से भरे हुए हैं और केवल पुरुष शिक्षक हैं। अभी भी महिलाओं की स्थिति के लिए एक उपाय के रूप में पुरुष मानदंडों पर विचार करने की दुर्भाग्यपूर्ण प्रवृत्ति है। महिलाओं और पुरुषों को समान अवसर प्रदान करना पहला कदम है; लेकिन सही मायने में लैंगिक समानता हासिल करने के लिए लैंगिक समता की जरूरत है।

महिलाओं और पुरुषों को न केवल संसाधनों और समान अवसरों तक समान पहुंच दी जानी चाहिए, बल्कि उन्हें इस समानता से लाभान्वित होने के साधन भी दिए जाने चाहिए। यह वह जगह है जहां 'लैंगिक समानता' की अवधारणा खेल में आती है। लैंगिक समानता का अर्थ है महिलाओं और पुरुषों के साथ व्यवहार करने के तरीके में निष्पक्षता। इस प्रकार लिंग समानता खेल के मैदान को समतल करने और महिलाओं को सशक्त बनाने का कार्य करती है।

लैंगिक असमानता

लिंग असमानता को कौशल, क्षमताओं या अन्य विशेषताओं में उद्देश्य भेद के के स्थान पर केवल उनके लिंग के आधार पर व्यक्तियों के मध्य असमानताओं के अस्तित्व के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। लिंग असमानता स्पष्ट हो सकती है (उदाहरण के लिए, एक ही नौकरी के लिए समान वेतन प्राप्त नहीं करना) या सूक्ष्म (उदाहरण के लिए, उन्नति के लिए समान व्यक्तिपरक अवसर नहीं दिया जा रहा है)। महिलाएं अक्सर लिंग स्तरीकरण, या समाज के पदानुक्रमित संगठन का शिकार होती हैं, इस तरह से कि एक लिंग के सदस्यों के पास दूसरे लिंग के सदस्यों की तुलना में धन, प्रतिष्ठा और शक्ति तक अधिक पहुंच होती है। लिंग असमानता दुनिया भर के समाजों और संस्कृतियों में होती है। लैंगिक असमानता सामाजिक न्याय और मानवाधिकारों का मामला है, जहां

भी यह होता है। जबकि , कई विकासशील देशों में, यह और भी अधिक है क्योंकि महिलाओं को हाशिए पर रखा जाता है और उन्हें द्वितीय श्रेणी के नागरिकों के रूप में माना जाता है। वास्तव में, लैंगिक असमानता इतनी महत्वपूर्ण है कि इसे संयुक्त राष्ट्र द्वारा विकसित सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों में सम्मिलित किया गया है। जबकि यह ज्ञात है कि लिंग असमानता मौजूद है, यह क्यों मौजूद है यह पूरी तरह से समझा नहीं गया है। कई अंतर्निहित निर्धारकों के साथ एक जटिल मुद्दे के रूप में, ऐसा क्यों होता है, इस पर कई अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। इन अलग-अलग दृष्टिकोणों की जांच करना महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रत्येक लिंग असमानता समस्या को हल करने के लिए अलग-अलग सुझाव प्रदान करता है।

जाति, धर्म, जातीयता, विकलांगता और क्षेत्र के संबंध में लिंग समता और समानता

भारतीय समाज विभिन्न तरीकों से विभाजित है: वर्ग, पंथ, जाति, लिंग, आर्थिक स्थिति, धर्म, जातीयता आदि। वर्ग, लिंग, नस्ल और जातीयता के आधार पर हाशिए, बहिष्करण और शोषण भारतीय समाज सहित हर समाज का हिस्सा रहे हैं। जाति न केवल सामाजिक बल्कि आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्रों में भी सबसे प्रमुख और निर्धारण कारकों में से एक रही है। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के अनुसार, "जाति वर्गीकृत असमानता की एक प्रणाली है जिसमें जातियों को श्रद्धा के बढ़ते पैमाने और अवमानना के अवरोही पैमाने के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है"। जाति व्यवस्था जन्म के आधार पर सामाजिक पदानुक्रम के भीतर पदों का वर्णन करती है, जिससे भेद -पीढ़ी उच्च, निम्न और बाहरी जाति के पदों को बनाए रखा जाता है। लिंग वर्ग और जाति के साथ-साथ जातीयता और जनजाति को महत्वपूर्ण तरीकों से प्रतिच्छेद करता है। हमारे समाज में जाति के

सभी वर्गों में महिलाएं असमानता, दमन और नियंत्रण की शिकार हैं। महिलाएं इसे कई स्तरों पर अनुभव करती हैं; लिंग, जाति, धर्म आदि से शुरू करें। दलित महिलाएं गहरी जड़ें जमा चुकी लैंगिक और जातिगत भेदभाव के द्वंद की शिकार हैं। संयुक्त राष्ट्र के अनुसार, "वे व्यापक भारतीय समाज, अपने समुदाय के पुरुषों और अपने पति और परिवार के पुरुष सदस्यों द्वारा उत्पीड़ित थीं"। पितृसत्ता व्यवस्था उच्च जाति के साथ-साथ निचली जाति में भी प्रचलित है।

महिलाओं की श्रम शक्ति की भागीदारी पुरुषों की तुलना में कम है लेकिन यह दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। इसके अतिरिक्त , पुरुषों और महिलाओं के मध्य मजदूरी असमानता है। महिलाओं को शारीरिक शक्ति से जुड़े काम करने की अनुमति नहीं है। चूंकि वे बच्चे पैदा करते हैं, इसलिए उन्हें घर पर रखना या कुछ हल्के काम करना पसंद किया जाता है। यह महसूस किया जाता है कि महिलाओं को पुरुषों की तुलना में अधिक पोषण की आवश्यकता नहीं होती है क्योंकि वे कोई 'कड़ी मेहनत' नहीं करते हैं। हमारे समाज में घर की देखभाल को काम नहीं माना जाता है। कई समुदायों में या तो गर्भ में ही बालिका का गर्भपात करा दिया जाता है या लिंग निर्धारण नहीं होने पर जन्म के बाद मार दिया जाता है। यह विभिन्न कारणों से हो सकता है जैसे: दहेज, मुंह से दूध पिलाने में वृद्धि, गरीबी आदि।

लोरबार का कहना है कि लैंगिक असमानता दुनिया भर में ऐतिहासिक घटना रही है, एक मानव आविष्कार और लिंग मान्यताओं पर आधारित है। यह संस्कृतियों और लिंग मानदंडों में निहित रिश्तेदारी नियमों से जुड़ा हुआ है जो मानव सामाजिक जीवन, मानव संबंधों को व्यवस्थित करता है और साथ ही सामाजिक स्तर के रूप में महिलाओं की अधीनता को बढ़ावा देता है।

भारत में, सांस्कृतिक प्रभाव रिश्तेदारी, वंश, विरासत, पहचान, स्थिति और आर्थिक सुरक्षा से संबंधित कारण के लिए बेटों को प्राथमिकता देते हैं। यह वरीयता वर्ग और जाति की सीमाओं से परे है और यह बालिकाओं के विरुद्ध भेदभाव करती है। (यूएनडीपी 'भारत-लिंग अनुपात संतुलन को बहाल करना'।

पितृसत्ता बेटे के लिए वरीयता पर जोर देती है क्योंकि वह अपने बूढ़े माता-पिता की देखभाल करेगा जबकि बालिकाओं की शादी कर दी जाती है और दूसरे परिवार की देखभाल करने के लिए भेज दिया जाता है। लड़की के माता-पिता को लगता है कि उनकी बेटियों पर निवेश करना बेकार है। दूसरी ओर, बेटों को बालिकाओं की तुलना में अधिक उपयोगी माना जाता है। एक अन्य कारक धार्मिक प्रथाओं का है, जो केवल पुरुषों द्वारा उनके माता-पिता के बाद के जीवन के लिए किया जा सकता है।

धर्म ने हमेशा महिलाओं को दासता में रखा है। औद्योगिक क्रांति के दौरान घर के बाहर महिलाओं की भूमिका कम हो गई थी। महिलाओं ने दबा हुआ महसूस किया क्योंकि उनके अधिकारों और स्वतंत्रता पर अंकुश लगाया गया था। समाधान समता और समानता में निहित है। समानता कानून है। यह गणितीय, अमूर्त, सार्वभौमिक और स्थितियों, परिस्थितियों और मतभेदों के प्रति उदासीन है। दूसरी ओर समता प्यार, दया, व्यक्तिगत परिवारों के उद्देश्यों की समझ है जो कानून की कठोरता के दायरे से बाहर आते हैं। महिलाओं के लिए इस भेद को लागू करते हुए, यह स्पष्ट है कि समानता के के स्थान पर समानता सभी स्त्री दावों का आधार होना चाहिए। जीवन के कुछ पहलुओं में श्रेष्ठता का दावा करके समानता समानता से परे जाती है। समानता समानता की पूर्णता है न कि इसका विकल्प। इसमें पुरुष और महिला के मध्य विशिष्ट भेद को पहचानने का लाभ है, जो समानता नहीं है। पुरुष और महिला का लिंग अलग-अलग होता है लेकिन

वे एक-दूसरे के पूरक होते हैं। जहां समानता है, वहां न्याय है, लेकिन प्रेम नहीं है। लेकिन एक महिला जिसे समता मिलती है, वह अपने पूरे प्यार से दुनिया को बचा सकती है।

लेकिन समय बदल रहा है और लोग महिलाओं के संबंध में अपने दृष्टिकोण में प्रगति कर रहे हैं।

शिक्षा में समता और समानता

कोठारी आयोग ने सुझाव दिया कि जाति, धर्म, लिंग या आर्थिक पृष्ठभूमि के बावजूद शिक्षा में समानता लाने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए जाने चाहिए। उदाहरण के लिए-

- बालिकाओं को शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रेरित करें और यह सुनिश्चित करें कि स्कूल कम से कम पढ़ाई मध्य में ही छोड़ दें।

- कोशिश करें कि ज्यादा से ज्यादा बच्चों को स्कूली शिक्षा के लिए दाखिला दिलाएं, खासकर बालिकाओं का।

- आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के बच्चों को छात्रवृत्ति आदि देकर सहायता करें।

- ग्रामीण या दूर दराज क्षेत्रों में रहने वाले छात्रों को लाने ले जाने की सुविधा द्वारा सहायता की जानी चाहिए। यह देखा गया है कि इस कारक के कारण कई लड़कियां युवा होने के साथ शिक्षा छोड़ देती हैं।

• शिक्षा के महत्व के विषयमें माता-पिता और अभिभावकों के लिए जागरूकता कार्यक्रम और यहां तक कि माताओं को रात्रि स्कूलों या वयस्क शिक्षा कार्यक्रम में खुद को नामांकित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

• न केवल स्कूली शिक्षा के लिए बल्कि उच्च शिक्षा के लिए भी सुविधाएं प्रदान करें।

• मामूली शुल्क के साथ सार्वजनिक पुस्तकालय की सुविधा ताकि उन्हें किताबें खरीदने की आवश्यकता न हो।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 शिक्षा में समानता पर जोर देती है। इसमें कहा गया है कि-

किसी को भी लिंग, धर्म, जाति या आर्थिक स्थिति के आधार पर शिक्षा से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। गरीब या लड़की को लड़कों या अमीरों के समान शैक्षिक अवसरों तक पहुंचने का समान अधिकार है। शिक्षा की प्रकृति सभी के लिए समान होनी चाहिए और सभी उच्च स्तर पर शिक्षा के प्रकार को चुनने के लिए स्वतंत्र हैं। 14 वर्ष की आयु तक नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान आवश्यक है। इसके अतिरिक्त अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/समाज के कमजोर वर्ग के अन्य सदस्यों को छात्रवृत्ति प्रदान की जानी है। अल्पसंख्यकों की शिक्षा को भी महत्व दिया जाना चाहिए क्योंकि हमारा देश एक लोकतांत्रिक देश है और हमारा संविधान सभी को समान अवसर देता है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि किसी भी व्यक्ति की विकलांगता शिक्षा तक पहुंच की दिशा में बाधा नहीं बननी चाहिए। एनपीई, 1986 में प्रौढ़ शिक्षा पर भी जोर दिया गया है। जो लोग किसी भी कारण से साक्षरता से वंचित थे, उन्हें शिक्षा प्राप्त करने

का अवसर दिया जाना चाहिए। शिक्षा में शैक्षणिक, व्यावसायिक और व्यावसायिक प्रशिक्षण सम्मिलित हैं।

शिक्षा का अधिकार (आरटीई)

शिक्षा में समानता और समानता सुनिश्चित करने के लिए आरटीई अधिनियम अस्तित्व में आया। अनुच्छेद 21 (ए) में 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य और मुफ्त शिक्षा का प्रावधान है। शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 में इस बात पर जोर दिया गया है कि प्रत्येक बच्चे को औपचारिक स्कूल में संतोषजनक और न्यायसंगत गुणवत्ता की पूर्णकालिक प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। RTE अधिनियम 1 को 1 अप्रैल, 2010 को लागू किया गया । यह अधिनियम बच्चों को देता है–

- पास के स्कूल में मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा
- पास के स्कूल में शिक्षा जो एक सरकारी या कोई भी पब्लिक स्कूल हो सकता है
- किसी भी प्रकार के शुल्क का भुगतान करने के लिए गैर–दायित्व
- केंद्र / राज्य / स्थानीय सरकार से अवसर मांगने के लिए पहुंच या विकल्प
- किसी भी प्रकार के शारीरिक दंड से निषेध
- जाति, पंथ, धर्म, लिंग आदि के बावजूद समान अवसर।
- बाल केंद्रित समग्र शिक्षा प्राप्त करना।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (यूडीएचआर) के अनुच्छेद 26 में कहा गया है कि शिक्षा का अधिकार प्रत्येक बच्चे का एक अपरिहार्य मानव अधिकार है। इसके अतिरिक्त यूनेस्को का संविधान घोषणा करता है कि सभी देशों को जाति, लिंग या किसी भी भेदभाव, आर्थिक या सामाजिक के संबंध में शैक्षिक अवसरों की समानता के आदर्श को आगे बढ़ाना चाहिए। शिक्षा के लिए प्रत्येक बच्चे के समान अधिकार का उल्लेख बाल अधिकारों पर कन्वेंशन के अनुच्छेद 28 में भी किया गया है। महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन (सीईडीएडब्ल्यू), 2000 भी महिलाओं के लिए शिक्षा प्राप्त करने के लिए समानता के अधिकार पर विस्तार से बताता है। CEDAW संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1979 में अपनाई गई एक भेद राष्ट्रीय संधि है। 3 सितंबर, 1981 को इसे महिलाओं के अधिकार का अंतर्राष्ट्रीय विधेयक के रूप में वर्णित किया गया था। इसमें छह भाग हैं जिनमें 30 अनुच्छेद हैं। इसमें सम्मिलित है–

- परिवार की शिक्षा
- महिलाओं की तस्करी को रोकना
- महिलाओं के प्रति शोषण और क्रूरता को रोकना
- शिक्षा, नौकरी, परिवार आदि सभी क्षेत्रों में लैंगिक भेदभाव को समाप्त करें।
- सभी क्षेत्रों में महिलाओं को सशक्त बनाना
- कानून के समक्ष समानता
- ग्रामीण क्षेत्रों में शुरू किया जाएगा CEDAW

लैंगिक समानता और संविधान

भारत के संविधान में लैंगिक समानता पर प्रावधान हैं। वे हैं–

- अनुच्छेद 14, 15, 19 और 21 में कानून के समक्ष समानता, लिंग भेद के आधार पर कोई भेदभाव नहीं, पेशा चुनने की स्वतंत्रता और बेहतर और सुरक्षित जीवन का अधिकार है।
- अनुच्छेद 15 (1) – राज्य जाति, लिंग, धर्म आदि के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा।
- अनुच्छेद 15 (3) – महिलाओं के लिए विशेष प्रावधान जब और जहां आवश्यक हो, किया जा सकता है।
- अनुच्छेद 39 - सभी को सभ्य आजीविका और समान काम के लिए समान मजदूरी का अधिकार है।
- अनुच्छेद 42 - आवश्यकता पड़ने पर महिलाओं को मातृत्व राहत
- अनुच्छेद 43 - सभ्य जीवन और अवकाश का आनंद और सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर सुनिश्चित करें।

अध्याय - 3

समकालीन अवधि: नीति की सिफारिशें

पहल आयोग और कार्यक्रम

शब्दकोश के अर्थ के अनुसार "समकालीन काल" का अर्थ है एक ही समय में मौजूदा, होने या जीवित रहना, एक ही समय से संबंधित या लगभग एक ही उम्र या तारीख का।

वेबस्टर डिक्शनरी के अनुसार इसका अर्थ एक ही अवधि के दौरान होना, मौजूदा, जीवित रहना या अस्तित्व में आना भी है।

इसलिए यह वर्तमान से जुड़ा हुआ है और युग के वर्तमान परिप्रेक्ष्य से संबंधित है।

19वीं शताब्दी के अंत तक, महिलाओं को हीन लिंग के रूप में माना जाता था और सार्वजनिक जीवन में भाग लेने से वंचित रखा गया था, खासकर राजनीति, शिक्षा और कुछ व्यवसायों से संबंधित क्षेत्रों में। महिलाओं को ऐतिहासिक रूप से दार्शनिक, चिकित्सा और धार्मिक परंपराओं में हीनता से जोड़ा गया है।

पहली पांच शताब्दियों के चिकित्सा ग्रंथों में, पुरुषों के प्रति महिलाओं की हीनता को उनकी शारीरिक कमजोरी द्वारा उचित ठहराया गया था।

एरिस्टोटेलियन फिजियोलॉजिकल परंपरा में, जिसने मध्ययुगीन, प्रारंभिक आधुनिक और यहां तक कि सेक्स और लिंग की आधुनिक धारणाओं को प्रभावित किया, महिला को पुरुष का 'अपूर्ण' संस्करण कहा गया है।

क्रिस्टिन डी पिसन ने अपनी पुस्तक 'द बुक ऑफ द सिटीज ऑफ लेडीज' में सही कहा है कि "अगर छोटी बालिकाओं को स्कूल भेजने और उन्हें वहां सभी प्रकार के विभिन्न विषयों को पढ़ाने का रिवाज था, जैसा कि कोई छोटे लड़कों के साथ करता है, तो वे लड़कों की तरह ही सभी कलाओं और विज्ञानों की कठिनाइयों को आसानी से समझ और सीख लेंगे"।

समकालीन काल में जो बदलाव देखा जा रहा है, उसे देखते हुए, सरकारें विभिन्न नीतियों और कार्यक्रमों को लागू कर रही हैं और महिलाओं की स्थितियों में सुधार और विकास के लिए विभिन्न सिफारिशें कर रही हैं। लैंगिक असमानता और असमानता को सफलतापूर्वक दूर करने के प्रयास जारी हैं। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद भारत सरकार द्वारा विभिन्न सुधार किए गए, जो शुरू में तीन प्रमुख क्षेत्रों पर आधारित थे: –

- संवैधानिक और कानूनी सुधारों का क्षेत्र,
- मिश्रित अर्थव्यवस्था पर आधारित नियोजित विकास का क्षेत्र और
- सामाजिक कल्याण गतिविधियों के लिए राज्य समर्थन का क्षेत्र।

इन सुधारों के पीछे मुख्य उद्देश्य जाति, पंथ, लिंग, धर्म, क्षेत्र आदि के आधार पर किसी भी पूर्वाग्रह के बिना एक समृद्ध समाज विकसित करना था। ये सुधार महिला सुधार और सशक्तिकरण के लिए लक्षित थे। भारत के संविधान ने महिलाओं के उत्थान पर विशेष ध्यान दिया है ताकि वे पुरुषों के साथ समान स्तर पर अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकें और राष्ट्रीय प्रगति में भाग ले सकें। इसके लिए एक योजनाबद्ध रणनीति की आवश्यकता थी जिसे कुशलता से लागू किया जा सके और विशेष रूप से महिलाओं को अधिकतम लाभ मिल सके।

पहला बड़ा कदम स्वतंत्र भारत के पहले प्रधान मंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू द्वारा पांच साल की योजनाओं को तैयार करके उठाया गया था, जिसमें महिलाओं के कल्याण पर जोर दिया गया था।

योजना आयोग और पंचवर्षीय योजनाएं

"भारत में सामाजिक कल्याण के लिए योजनाएं और संभावनाएं 1951 - 1961" सामाजिक कल्याण सेवाओं को उन व्यक्तियों और समूहों की विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने के इरादे के रूप में बताती हैं, जो सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक या मानसिक विकलांगता के कारण समुदाय द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं और सेवाओं का लाभ उठाने में असमर्थ हैं या पारंपरिक रूप से वंचित हैं।

योजना आयोग ने तीन प्रमुख क्षेत्रों को परिभाषित किया जिसमें उन्होंने महिलाओं के विकास पर विशेष ध्यान दिया था।

(क) शिक्षा- यह स्पष्ट था कि औपचारिक शिक्षा के बिना महिलाओं का कल्याण संभव नहीं था। इसे ध्यान में रखते हुए इसे पहली पंचवर्षीय योजना में चित्रित किया गया था।

(ख) समाज कल्याण- यह स्पष्ट है कि शिक्षित महिला समझती है कि पितृसत्तात्मक समाज में वह कहां खड़ी है। शिक्षा के साथ वह अपने साथ-साथ अन्य महिलाओं के लिए सामाजिक कल्याण की गुंजाइश बना सकती है। अगर वह महिलाओं के लिए फायदेमंद कानूनों और नीतियों के विषय में जानती है, तो वह अपने अधिकारों और न्याय के लिए लड़ भी सकती है।

(ग) स्वास्थ्य- यह सभी जानते हैं कि भारतीय महिलाएं अपने परिवार के कल्याण और स्वास्थ्य को सबसे पहले प्राथमिकता देती हैं। लेकिन सरकार द्वारा शुरू की गई विभिन्न

योजनाएं और कार्यक्रम उसे और उसके परिवार को उसके स्वास्थ्य की देखभाल करने के लिए प्रेरित करते हैं। अगर एक महिला स्वस्थ है तभी वह अपने परिवार की अच्छी देखभाल कर सकती है।

सभी कारकों को ध्यान में रखते हुए पहली पंचवर्षीय योजना 1951 में शुरू की गई थी।

1. प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56)

महिलाओं की समस्याओं से निपटने के लिए केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड (CSWB) की स्थापना की गई थी। इसका लक्ष्य गरीबी रेखा से नीचे की महिलाओं का कल्याण था। इसने महिलाओं को महिला मंडलों के रूप में जाने जाने वाले समूहों में संगठित करने की आवश्यकता महसूस की ताकि वे समुदायों के लिए आसानी से काम कर सकें।

2. दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956 - 61)

इस योजना में महिला मजदूरों के मुद्दों को ध्यान में रखा गया था। महिला श्रमिकों को काम पर कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जैसे बीमारी, मासिक धर्म के दिन, गर्भावस्था, छोटे बच्चों के साथ आदि। इसके अतिरिक्त , समान कार्य के लिए समान वेतन के मुद्दे पर भी विचार किया जाता है।

3. तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961 - 66)

उपर्युक्त स्थितियों में सुधार तभी हो सकता है जब महिलाएं शिक्षित हों। तीसरी पंचवर्षीय योजना में महिला कल्याण के लिए शिक्षा प्रदान करने के इस मुद्दे को गंभीरता से लिया गया। इस योजना ने सामाजिक कल्याण सेवाओं और शिक्षा के संघनित पाठ्यक्रमों को खर्च

करने के लिए सबसे बड़ा हिस्सा आवंटित किया। इसके साथ ही मातृ एवं शिशु कल्याण, पोषण और परिवार नियोजन से संबंधित मुद्दों पर भी ध्यान दिया गया।

4. चौथी पंचवर्षीय योजना (1969 - 1974)

चौथी पंचवर्षीय योजना में भी महिला शिक्षा पर जोर जारी रहा। मूल नीति संचालन के आधार के रूप में महिलाओं के कल्याण को बढ़ावा देना था। शिक्षा के माध्यम से जन्म दर को कम करने के लिए परिवार नियोजन पर परिव्यय बढ़ाया गया था। प्री-स्कूल बच्चों और पूरक आहार, गर्भवती और स्तनपान कराने वाली माताओं का टीकाकरण सुनिश्चित किया जाना था।

5. पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974-1978)

पांचवीं पंचवर्षीय योजना ने कार्यात्मक साक्षरता के एक रणनीतिक कार्यक्रम की सिफारिश की ताकि महिलाओं को एक अच्छी गृहिणी के रूप में कार्य करने के लिए कौशल और ज्ञान से लैस किया जा सके। महिलाओं में कौशल विकास के लिए आय सृजन प्रशिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया गया। इसे उन विभिन्न कार्यक्रमों में जोड़ा जाना था जिन पर पहले से ही पिछली पंचवर्षीय योजनाओं में जोर दिया जा चुका था। भारत में महिलाओं की स्थिति संबंधी समिति (सीएसडब्ल्यूआई) "समानता की ओर" की रिपोर्ट में बदलती सामाजिक और आर्थिक स्थितियों और महिलाओं की उन्नति से संबंधित समस्याओं के संदर्भ में महिलाओं के अधिकारों और स्थिति की व्यापक जांच की गई थी। सीएसडब्ल्यूआई ने बताया कि सामाजिक परिवर्तन और विकास की गतिशीलता ने महिलाओं के एक बड़े वर्ग

पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है और नए असंतुलन और असमानताएं पैदा की हैं। महिलाओं की स्थिति पर समिति ने अपनी रिपोर्ट "समानता की ओर" में उल्लेख किया है, "महिलाओं को सामाजिक रीति-रिवाजों और सामाजिक मूल्यों से विकलांग माना जाता है और इसलिए, सामाजिक कल्याण सेवाओं ने विशेष रूप से उनके पुनर्वास का प्रयास किया है"।

यह महसूस किया गया कि समानता की संवैधानिक गारंटी तब तक अर्थहीन और अवास्तविक होगी जब तक कि महिलाओं के आर्थिक स्वतंत्रता के अधिकार को स्वीकार नहीं किया जाता है और परिवार और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में योगदानकर्ताओं के रूप में कौशल में उनके प्रशिक्षण में सुधार नहीं किया जाता है।

राष्ट्रीय कार्य योजना (1976) 'महिलाओं के लिए संयुक्त राष्ट्र की विश्व कार्य योजना' के आधार पर दिशानिर्देश प्रदान करना लागू हुआ। राष्ट्रीय कार्य योजना ने महिलाओं के लिए कार्य कार्यक्रम तैयार करने और कार्यान्वित करने के लिए स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पोषण, शिक्षा, रोजगार, कानून और सामाजिक कल्याण के क्षेत्रों की पहचान की और भारत में महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए योजनाबद्ध हस्तक्षेप का आह्वान किया। विकास ब्यूरो के रूप में महिला कल्याण की स्थापना 1976 में भारत सरकार के भीतर नीतियों और कार्यक्रमों के समन्वय और महिलाओं के विकास के लिए उपाय शुरू करने के लिए एक नोडल बिंदु के रूप में कार्य करने के लिए की गई थी। 1978-1980 को रोलिंग प्लान कहा जाता था।

6. छठी पंचवर्षीय योजना (1980-1985)

इस योजना का मुख्य मानदंड परिवार नियोजन, स्वास्थ्य देखभाल और पोषण था ताकि महिलाएं समाज के विकास में योगदान दे सकें। इसलिए रणनीति तीन गुना थी: शिक्षा, रोजगार और स्वास्थ्य।

7. सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1985)

इसने महिलाओं के मध्य उनके अधिकारों और विशेषाधिकारों के विषयमें जागरूकता पैदा करने की मांग की। इस योजना का मुख्य उद्देश्य महिलाओं की आर्थिक और सामाजिक स्थिति को बढ़ाना था ताकि उन्हें राष्ट्रीय विकास की मुख्यधारा में लाया जा सके और विभिन्न सामाजिक-आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक गतिविधियों में योगदान देने में महिलाओं के महत्व को मान्यता दी जा सके। एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा महिला श्रमिकों के संगठन और संघीकरण की आवश्यकता है।

इस योजना के अंतर्गत महिला समूह और समाज के गरीब वर्गों की महिलाओं की योजनाओं का समर्थन करके रोजगार सृजन गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिए एक नई योजना महिला विकास निगम शुरू की गई है। कार्यक्रमों की निगरानी के लिए एक महिला विकास योजना और निगरानी सेल भी स्थापित किया गया था। 7 वीं योजना अवधि के दौरान, भारतीय संसद ने 1986 में शिक्षा पर एक राष्ट्रीय नीति को अपनाया जिसमें महिलाओं की समानता के लिए शिक्षा पर एक अध्याय सम्मिलित था। 1990-1992 को वार्षिक योजनाओं के रूप में माना जाता था।

8. आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-1997)

इस योजना ने यह सुनिश्चित किया कि जो भी विकास कार्यक्रम शुरू किए गए हैं, वे महिलाओं को बाईपास न करें। आठवीं योजना का मुख्य उद्देश्य गुणात्मक और मात्रात्मक

दोनों रूप से महिलाओं तक सेवाओं की पहुंच का विस्तार करना था। पंचायती राज संस्थाएं महिलाओं के कार्यक्रमों के डिजाइन और कार्यान्वयन में सम्मिलित हैं। आठवीं योजना के दृष्टिकोण ने विकास से महिलाओं के सशक्तिकरण की ओर एक निश्चित बदलाव किया।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56) में 4 करोड़ रुपये का परिव्यय आठवीं पंचवर्षीय योजना में बढ़कर 2000 करोड़ रुपये हो गया था।

9. नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)

यह 1 अप्रैल, 1997 से लागू हुआ। योजना आयोग द्वारा एक दृष्टिकोण पत्र विकसित किया गया था और राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा स्वीकार किया गया था, जो नौवीं पंचवर्षीय योजना के विकास का आधार बन गया था। इस दृष्टिकोण पत्र में महिलाओं के सशक्तिकरण और रणनीतियों के नियोजन और कार्यान्वयन में लोगों की भागीदारी पर ध्यान केंद्रित किया गया था। दृष्टिकोण पत्र का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य महिलाओं का सशक्तिकरण था। इसमें घर, स्कूल, धर्म, सरकार और कार्यस्थल द्वारा सभी चरणों में मैत्रीपूर्ण और सहकारी वातावरण प्रदान करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया। लैंगिक संवेदनशीलता का आह्वान किया गया। महिलाएं गरीबी, सामाजिक क्षेत्रों में अपर्याप्त निवेश, महिलाओं के विरुद्ध बढ़ती हिंसा और निजी और राज्य मीडिया विशेष रूप से टेलीविजन में महिलाओं के रूढ़िवादी चित्रण जैसी समस्याओं का सामना कर रही हैं। सूचना और प्रशिक्षण के अवसरों, आरक्षण और सामाजिक सेवाओं आदि की आवश्यकता है, और किसी भी कार्यक्रम की सफलता के लिए लोगों की भागीदारी आवश्यक है। सशक्तिकरण विकल्पों के विषयमें है और महिलाओं की पसंद का अभ्यास करने की क्षमता सीमित होगी जब तक कि वे नीति-निर्माण में अधिक सम्मिलित न हों। 9वीं पंचवर्षीय योजना नीति-निर्माण क्षेत्रों में महिलाओं के मुद्दों को लाने का एक प्रयास है।

सरकार ने एक समिति का गठन किया है '**राष्ट्रीय संसाधन इकाइयां**' महिलाओं के लिए जो राजनीति और सरकार के कार्यक्रमों में लिंग दृष्टिकोण को बढ़ावा देने और सम्मिलित करने के लिए एक शीर्ष निकाय के रूप में कार्य करता है। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कई पहल शुरू की गई हैं। इनमें लिंग निर्धारण परीक्षणों पर प्रतिबंध लगाने के लिए कानून बनाना सम्मिलित है ताकि कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सके। केंद्र सरकार द्वारा तय किए गए नियम का राज्य सरकारें भी समान रूप से पालन कर रही हैं। 1993 के 73 वें और 74 वें संविधान संशोधन अधिनियम ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में स्थानीय निकायों के सभी निर्वाचित कार्यालयों में महिलाओं के लिए 1/3 सीटों का आरक्षण सुनिश्चित करते हैं।

10.दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

इसका उद्देश्य हाल ही में अपनाई गई राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति (2001) को कार्य रूप में परिणत करके महिलाओं को सशक्त बनाना और अधिकार आधारित दृष्टिकोण के माध्यम से बच्चों की 'अस्तित्व' सुरक्षा और विकास सुनिश्चित करना है।

11.ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012)

इसका उद्देश्य 2011-12 तक 0-6 आयु वर्ग के लिए लिंग अनुपात को बढ़ाकर 935 और 2016-17 तक 950 करना है। इसके अतिरिक्त , इस योजना का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी सरकारी योजनाओं के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष लाभार्थियों में से 33 प्रतिशत महिलाएं और बालिकाएं हैं। इसमें यह सुनिश्चित करने का प्रस्ताव है कि 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को कोई भी शारीरिक श्रम करने के लिए मजबूर नहीं किया जाए।

महिलाओं के लिए राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना - एनपीपीडब्ल्यू (1988 - 2000 ए.डी.)

महिला एवं बाल विकास विभाग (मानव संसाधन विकास मंत्रालय) ने महिलाओं के लिए एक राष्ट्रीय परिपे्रक्ष्य योजना तैयार की है ताकि महिलाओं के विकास के कार्यक्रमों को बढ़ाया और बढ़ावा दिया जा सके। यह उन ग्रामीण महिलाओं पर विशेष ध्यान देता है जो दोहरे भेदभाव से पीड़ित हैं। यह योजना अधिक निवेश या अधिक संसाधनों की मांग नहीं करती है, लेकिन सभी स्तरों पर विकास कार्यक्रमों के लिए एक नया जोर और जवाबदेही देती है।

12.बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017)

विशेष रूप से ग्रामीण लोगों के लिए स्वच्छ और सुरक्षित पेयजल की आपूर्ति का सबसे कमजोर पहलू इस योजना में किया गया है। साथ ही सरकारी स्कूलों, आंगनवाड़ियों को पीने और शौचालय के प्रयोजनों के लिए पर्याप्त पानी की आपूर्ति प्रदान की जाएगी। इन सुविधाओं के अतिरिक्त सौर ऊर्जा से चलने वाले पंप भी प्रदान किए जाएंगे। मुख्य लक्ष्य शौचालय उपलब्ध कराना है ताकि किसी को शौच के लिए बाहर न जाना पड़े। इसने शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से उच्च शिक्षा को भी चुनौती दी है। क्षेत्र, लिंग और समुदायवार श्रेणियों में असमानता को दूर करने के प्रयास होंगे।

एनपीपीडब्ल्यू (NPPW) की सिफारिशें इस प्रकार हैं:

1. जबकि महिलाओं के लिए कार्यक्रम विभिन्न मंत्रालयों द्वारा लागू किया जाना जारी रहेगा, महिला और बाल विकास विभाग में एक मजबूत भेद -मंत्रालयी समन्वय और निगरानी निकाय की आवश्यकता है।
2. बालिकाओं की शिक्षा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और बालिकाओं को शिक्षित करने की आवश्यकता के विषयमें जागरूकता पैदा करने की आवश्यकता है।
3. रोजगार में सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने की मजबूत आवश्यकता है, विशेष रूप से साथ ही समान प्रकृति के काम के बावजूद पुरुषों और महिलाओं के मध्य वेतन भेद ।
4. योजना आयोग और सभी मंत्रालयों और सरकारी विभागों में एक महिला प्रकोष्ठ होना चाहिए।
5. राष्ट्रीय मीडिया और संचार प्रयासों में एक सचेत रणनीतिक परिवर्तन की आवश्यकता है ताकि महिलाओं के प्रति लोगों के दृष्टिकोण को बदला जा सके।
6. पुलिस, न्यायपालिका और अन्य घटकों सहित कानून का मसौदा तैयार करने वाली प्रौद्योगिकियों और प्रवर्तन तंत्र की समीक्षा, संवेदनशील और मजबूत करने की आवश्यकता है ताकि समानता और न्याय प्रदान किया जा सके।
7. सरकार को राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी को प्रभावी ढंग से सुनिश्चित करना चाहिए।
8. महिलाओं के लिए पंचायत और जिला स्तर पर 30% आरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।
9. स्वैच्छिक कार्रवाई की मात्रा, गति और प्रभावशीलता में सुधार करने की तत्काल आवश्यकता है।

महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय नीति

भारत सरकार ने 2001 को महिला सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया है। महिलाओं के सशक्तिकरण की राष्ट्रीय नीति ने कुछ स्पष्ट लक्ष्य और उद्देश्य निर्धारित किए हैं। इस नीति का उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक-सांस्कृतिक पहलुओं में उत्थान, विकास और सशक्तिकरण करना है, जिससे उनके सशक्तिकरण के संबंध में विभिन्न मुद्दों पर जागरूकता पैदा हो सके।

राष्ट्रीय नीतियों के विशिष्ट उद्देश्य

महिलाओं के पूर्ण विकास के लिए सकारात्मक, आर्थिक और सामाजिक नीतियों के माध्यम से एक वातावरण बनाना ताकि वे अपनी पूरी क्षमता का एहसास कर सकें।

सभी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और नागरिक क्षेत्रों में पुरुषों के साथ समान आधार पर महिलाओं द्वारा सभी मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता का वास्तविक और वास्तविक आनंद।

i. राष्ट्र के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी और निर्णय लेने के लिए समान पहुंच।
ii. स्वास्थ्य देखभाल, सभी स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कैरियर और व्यावसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान पारिश्रमिक, व्यावसायिक स्वास्थ्य और सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा और सार्वजनिक जीवन आदि के लिए महिलाओं की समान पहुंच, महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने के उद्देश्य से कानूनी प्रणालियों को मजबूत करना।
iii. पुरुषों और महिलाओं दोनों की सक्रिय भागीदारी और भागीदारी द्वारा सामाजिक दृष्टिकोण और सामुदायिक प्रथाओं को बदलना।
iv. विकास प्रक्रिया में लैंगिक दृष्टिकोण को बढ़ावा देना।
v. महिलाओं और बालिकाओं के प्रति भेदभाव और सभी प्रकार की हिंसा का उन्मूलन।

xi. नागरिक समाज, विशेष रूप से महिला संगठनों के साथ साझेदारी का निर्माण और सुदृढ़ीकरण।

xii. एक परिचालन रणनीति के रूप में बजट प्रक्रिया में लिंग परिप्रेक्ष्य पेश करना।

नीति नियोजन और प्रोग्रामिंग

छठी पंचवर्षीय योजना के अस्तित्व में आने से पहले महिलाओं को कमजोर वर्ग की श्रेणी में सम्मिलित किया गया था। इस योजना में महिला कल्याण और विकास को एक अलग अध्याय दिया गया था।

अध्याय चार रणनीतियों के अनुसार

(i) आर्थिक स्वतंत्रता,

(ii) शैक्षिक प्रगति,

(iii) स्वास्थ्य देखभाल और परिवार नियोजन तक पहुंच

(iv) जनजातीय महिलाओं की आय में सहायता पर बल दिया गया।

महिलाओं के लिए सरकार द्वारा शुरू किए गए कार्यक्रम

महिलाओं के लिए सरकार द्वारा शुरू किए गए कार्यक्रम निम्लिखित हैं:

- समाज कल्याण,
- पोषण सेवा,
- पूरक आय सृजन,
- बालिकाओं की शिक्षा,
- समान काम के लिए समान पारिश्रमिक,
- कामकाजी महिलाओं के लिए छात्रावास और

- बच्चों के लिए क्रेच,
- कार्यात्मक और कानूनी साक्षरता,
- स्वरोजगार का परिवार, संवर्धन और सुदृढ़ीकरण,
- महिलाओं आदि से संबंधित कानूनों की समीक्षा करना और उन्हें सुव्यवस्थित करना,

महिला एवं बाल विकास के लिए योजनाएं

महिला और बाल विकास मंत्रालय, महिलाओं के कल्याण, विकास और सशक्तिकरण से संबंधित सभी घटनाओं के लिए नोडल एजेंसी के रूप में, उनके लाभ के लिए योजनाएं और कार्यक्रम तैयार किए हैं। ये योजनाएं महिलाओं को आश्रय, सुरक्षा, सुरक्षा, कानूनी सहायता, न्याय, सूचना, मातृ स्वास्थ्य, भोजन, पोषण आदि की आवश्यकता के साथ-साथ कौशल विकास, शिक्षा और ऋण और विपणन तक पहुंच के माध्यम से आर्थिक जीविका की आवश्यकता है।

A. आर्थिक सशक्तिकरण मंत्रालय की योजनाएं हैं:-

i. स्वशक्ति:-

इसे अक्तूबर, 1999 में शुरू किया गया था जो एक केन्द्रीय प्रायोजित परियोजना थी। आईएफएडी, विश्व बैंक और भारत सरकार द्वारा संयुक्त रूप से स्थापित इस परियोजना का समापन 30 जून, 2005 को हुआ था। इस परियोजना की परिकल्पना 9 राज्यों के 57 जिलों के 335 ब्लॉकों में कार्यान्वित एक पायलट परियोजना के रूप में की गई थी। इस परियोजना ने लगभग 2,44,000 महिलाओं को कवर करते हुए 17,647 एसएचजी की स्थापना की।

उद्देश्य: - कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य महिला स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी), सूक्ष्म ऋण और आय सृजन गतिविधियों को बढ़ावा देने के माध्यम से महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक विकास और सशक्तिकरण को सामने लाना था।

ii. स्वयंसिद्धा

यह केन्द्रीय प्रायोजित स्कीम फरवरी, 2001 में शुरू की गई थी। यह स्वयं सहायता समूहों (एसएचजी) के गठन के माध्यम से महिला सशक्तिकरण के लिए एक एकीकृत योजना थी। उद्देश्य:- इस कार्यक्रम का उद्देश्य सूक्ष्म ऋण, आर्थिक संसाधनों आदि तक महिलाओं की पहुंच में सुधार करके सभी कार्यक्रमों के लामबंदी और अभिसरण की निरंतर प्रक्रिया के माध्यम से महिलाओं का समग्र सशक्तिकरण करना था। यह योजना महिला सशक्तिकरण, सामूहिक प्रतिबिंब और एकजुट कार्रवाई के लिए एक मंच प्रदान करने में सक्षम थी। यह कार्यक्रम देश के 650 ब्लॉकों में कार्यान्वित किया गया था और 67971 महिला स्वयं सहायता समूहों का गठन किया गया है जिससे 9,89,485 लाभार्थी लाभान्वित हुए हैं। यह योजना मार्च 2007 में समाप्त हो गई।

11वीं पंचवर्षीय योजना में स्वयंसिद्धा और स्वशक्ति की योजनाओं का विलय किया जाएगा और उन्हें स्वयंसिद्ध, चरण-II के रूप में कार्यान्वित किया जाएगा। दसवीं योजना की मध्यावधि मूल्यांकन रिपोर्ट में भी इन दोनों स्कीमों के विलय की सिफारिश की गई है क्योंकि इनके समान उद्देश्य हैं। स्वयंसिद्ध में अभिसरण मूल अवधारणा है। यह पारंपरिक और गैर-पारंपरिक क्षेत्रों में कौशल विकास और प्रशिक्षण सहित सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण से संबंधित प्रशिक्षण इनपुट का एक एकीकृत सेट प्रदान करेगा। स्वयंसिद्धा के द्वितीय चरण और आईएफएडी परियोजना दोनों के लिए 11वीं योजना अवधि के दौरान अनुमानित बजट आवश्यकता 3000 करोड़ रुपये है।

iii. स्वावलम्बन कार्यक्रम

इसे पहले एनओआरएडी / महिला आर्थिक कार्यक्रम के रूप में जाना जाता था। इसे 1982-83 में नॉर्वेजियन एजेंसी फॉर डेवलपमेंट कॉरपोरेशन (एनओआरएडी) की सहायता से लॉन्च किया गया था। एनओआरएडी और इसके समर्थन का लाभ 1996-97 तक उठाया गया था, जिसके बाद यह कार्यक्रम भारत सरकार के धन से चलाया जा रहा है।

उद्देश्य:- कार्यक्रम का उद्देश्य महिलाओं को प्रशिक्षण और कौशल प्रदान करना है ताकि उन्हें निरंतर आधार पर रोजगार या स्वरोजगार प्राप्त करने की सुविधा मिल सके। इस योजना के अंतर्गत लक्षित समूह गरीब और जरूरतमंद महिलाएं, समाज के कमजोर वर्गों जैसे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आदि की महिलाएं हैं। अधिक प्रभावी कार्यान्वयन सुनिश्चित करने और योजना की बेहतर निगरानी/मूल्यांकन के लिए इसे योजना आयोग के अनुमोदन से 1 अप्रैल, 2006 से राज्य सरकारों को अंतरित कर दिया गया है।

iv. प्रशिक्षण और रोजगार कार्यक्रम के लिए समर्थन (STEP)

यह 1987 में केंद्र सरकार द्वारा शुरू किया गया था। मंत्रालय इस कार्यक्रम का मूल्यांकन करने और फिर परिणामों के अनुसार इसे सुधारने की कोशिश कर रहा है।

उद्देश्य: – इस कार्यक्रम का उद्देश्य गरीब और आर्थिक रूप से कमजोर महिलाओं को कौशल और नया ज्ञान प्रदान करना है। इस परियोजना के अंतर्गत , महिला लाभार्थियों को व्यवहार्य और एकजुट समूहों या सहकारी समितियों में संगठित किया जाता है। स्वास्थ्य देखभाल, प्रारंभिक शिक्षा, क्रेच सुविधा, बाजार संपर्क आदि जैसी सेवाओं का एक व्यापक पैकेज। क्रेडिट तक पहुंच के अतिरिक्त प्रदान किया जाता है। महिलाओं के मध्य दस पारंपरिक कौशल में कौशल विकास प्रदान किया जाता है।

इसके अतिरिक्त , पारंपरिक और गैर-पारंपरिक दोनों क्षेत्रों में महिलाओं को प्रशिक्षण और कौशल प्रदान करने और क्रेडिट लिंकेज के लिए राष्ट्रीय महिला कोष के साथ एकीकृत

करने की संभावनाओं पर विचार किया जा रहा है। 11वीं योजना में इस योजना के लिए 240 करोड़ रुपये की राशि प्रस्तावित है।

B. सहायता सेवाएँ

उपर्युक्त योजनाओं और कार्यक्रमों के अतिरिक्त , महिलाओं को छात्रावास, क्रेच, स्टे होम आदि जैसी विभिन्न सहायता सेवाएं प्रदान की जाती हैं।

i. महिला छात्रावास

सुरक्षा और समर्थन प्रदान करने के लिए कामकाजी महिलाओं के छात्रावास की केंद्रीय योजना सामने आई। इस स्कीम के अंतर्गत गैर-सरकारी संगठनों, सहकारी निकायों और अन्य एजेंसियों को कामकाजी महिला छात्रावासों के लिए भवन के निर्माण/किराए पर लेने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है जिसमें बच्चों के लिए डे केयर सेंटर होता है ताकि उन्हें सुरक्षित और किफायती आवास प्रदान किया जा सके। लेकिन इस योजना के अच्छे परिणाम नहीं आ रहे हैं क्योंकि फंड जारी करने के संबंध में मानदंड और नियम सख्त हैं। इसलिए इस योजना में पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है।

ii. शिशु गृह

मंत्रालय क्रेच की एक योजना चलाता है जो गरीब कामकाजी महिलाओं या बीमार माताओं के बच्चों को सहायता और सहायता प्रदान करता है। यह कामकाजी माताओं के बच्चों को एक सुरक्षित वातावरण प्रदान करता है। इस योजना को इस मंत्रालय के बाल विकास संबंधी कार्यदल की रिपोर्ट में सम्मिलित किया जा रहा है।

C. महिलाओं के लिए राहत, संरक्षण और पुनर्वास

महिलाओं के जीवन में कुछ कठिन समय होते हैं जब वह परिस्थितियों का सामना करने में असमर्थ होती है। इन परिस्थितियों से लड़ने में उनकी सहायता करने के लिए सरकार द्वारा कुछ योजनाएं शुरू की गईं, जो निम्न हैं:-

i. स्वाधार

यह योजना 2001-2002 में कठिन परिस्थितियों में महिलाओं को राहत और पुनर्वास प्रदान करने के लिए शुरू की गई थी।

इस योजना के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं:

i. कठिन परिस्थितियों में रहने वाली महिलाओं/बालिकाओं को आश्रय, भोजन, कपड़े और देखभाल की प्राथमिक आवश्यकता प्रदान करना, जो किसी भी सामाजिक और आर्थिक सहायता के बिना हैं।

ii. महिलाओं को भावनात्मक समर्थन और परामर्श प्रदान करना।

iii. शिक्षा, जागरूकता, कौशल उन्नयन और व्यक्तित्व विकास के माध्यम से निराश्रित महिलाओं का सामाजिक और आर्थिक रूप से पुनर्वास करना।

iv. सरकारी और गैर-सरकारी दोनों क्षेत्रों में अन्य संगठनों के साथ जोड़कर और नेटवर्किंग करके उन हस्तक्षेपों की आवश्यकता वाली महिलाओं / बालिकाओं के लिए विशिष्ट नैदानिक, कानूनी और अन्य सहायता की व्यवस्था करना।

v. हेल्प लाइन या अन्य सुविधाएं प्रदान करना।

इस योजना के लाभार्थियों में अपने परिवारों द्वारा परित्यक्त विधवाएं, जेल से रिहा महिला कैदी, प्राकृतिक आपदा से बची महिलाएं, तस्करी की गई महिलाएं, आतंकवादी/उग्रवादी

हिंसा की शिकार महिलाएं, मानसिक रूप से विकलांग और एचआईवी/एड्स से पीड़ित महिलाएं आदि सम्मिलित हैं।

सफल योजना कार्यान्वयन में आने वाली मुख्य समस्या धन की कमी है। XIवीं योजना में, स्कीम के एक भाग के रूप में महिलाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए निधियां आबंटित करने का प्रस्ताव है।

ii. बलात्कार पीड़िताओं को मुआवजा

माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली घरेलू कामकाजी महिला मंच बनाम भारत संघ और अन्य रिट याचिका (सीआरएल) संख्या 362/93 में राष्ट्रीय महिला आयोग को बलात्कार की दुर्भाग्यपूर्ण पीड़ितों के आंसू पोंछने के लिए एक योजना विकसित करने का निर्देश दिया था। तदानुसार, राष्ट्रीय महिला आयोग ने बलात्कार पीड़ितों को राहत और पुनर्वास नामक एक योजना का मसौदा तैयार किया है। इस स्कीम को 11वीं योजना में शुरू करने का प्रस्ताव है।

D. घरेलू हिंसा के विरुद्ध सुरक्षा

घरेलू हिंसा से महिलाओं का संरक्षण अधिनियम (पीडब्ल्यूडीवीए) 26 अक्टूबर, 2006 को लागू हुआ। इस अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित कदम उठाए जाने का प्रस्ताव है -

i. अधिनियम को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे और आवश्यकताओं को स्थापित करना।

ii. घरेलू हिंसा के मुद्दे पर संरक्षण अधिकारियों, सेवा प्रदाताओं, न्यायपालिका के सदस्यों, पुलिस, चिकित्सा पेशेवरों, परामर्शदाताओं, वकीलों आदि को प्रशिक्षण, संवेदीकरण और क्षमता निर्माण प्रदान करना और इसके निवारण के लिए कानून (पीडब्ल्यूडीवीए और अन्य आपराधिक और नागरिक कानूनों) का उपयोग करना।

iii. विभिन्न राज्यों से नियमित फीडबैक द्वारा संरक्षण अधिकारियों की नियुक्ति की निगरानी करना।

iv. इसके कार्यान्वयन की निगरानी के लिए एक प्रभावी एमआईएस स्थापित करें।

v. इस अधिनियम के विषयमें जन जागरूकता बढ़ाएं। यौन उत्पीड़न की रोकथाम के संबंध में एक मसौदा भी प्रक्रियाधीन है।

E. संस्थागत सेवाएं

i. राजकीय गृह :

राजकीय गृह, सुधार संस्थानों से रिहा की गई महिलाओं के साथ-साथ चुनौतीपूर्ण सामाजिक परिस्थितियों से शरण लेने वाली महिलाओं के लिए एक सुरक्षित आश्रय प्रदान करते हैं। ये सुविधाएं उनकी भलाई सुनिश्चित करने के लिए निःशुल्क आवास और भोजन प्रदान करती हैं।

ii. सेवा गृह:

ये घर 18 से 35 वर्ष के मध्य की गरीब महिलाओं, कमजोर विधवाओं और परित्यक्त पत्नियों की सेवा करते हैं। निवासियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण कार्यक्रमों और कौशल विकास पहलों के माध्यम से पुनर्वास प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त, 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को उनके प्रवास के दौरान मानार्थ भोजन, आश्रय, कपड़े और स्वास्थ्य सेवाएँ प्रदान की जाती हैं।

iii. व्यावसायिक प्रशिक्षण केंद्र:

1. एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आईआरडीपी)

2. स्व-रोजगार के लिए ग्रामीण युवाओं के लिए प्रशिक्षण (TRYSEM)

3. ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों का विकास (डीडब्ल्यूसीआरए)

4. डीडब्ल्यूसीआरए योजना जिला ग्रामीण विकास द्वारा लागू की जाती है
मंडल प्रजा परिषदों के माध्यम से एजेंसियां (डीआरडीए)। कार्यान्वयन के लिए
योजना में एक महिला परियोजना अधिकारी की नियुक्ति की गई

इस कार्यक्रम के उद्देश्य हैं:

1. ग्रामीण महिलाओं को ऋण और सब्सिडी प्रदान करके उनके लिए आर्थिक आधार को मजबूत करना।

2. उन्हें उत्पादक कौशल और समूह गतिशीलता में प्रशिक्षित करने के लिए।

3. ग्रामीण महिलाओं को उनके उत्पादक कौशल और क्षमताओं को बढ़ाने के लिए समर्थन और सहायता प्रदान करना।

4. ग्रामीण महिलाओं को अपनी आर्थिक क्षमता में सुधार करने में सक्षम बनाना।

5. गरीब महिलाओं की जरूरतों और बाधाओं पर सकारात्मक प्रतिक्रिया देने के लिए विकास कार्यकर्ताओं को उन्मुख करना

iv.महिला समृद्धि योजना (एमएसवाई)

2 अक्टूबर 1993 को शुरू की गई महिला समृद्धि योजना एक केंद्र प्रायोजित योजना है। एमएसवाई के तहत, 18 वर्ष और उससे अधिक आयु की ग्रामीण महिलाओं को पैसे बचाने के लिए एमएसवाई खाता खोलने का अवसर मिलता

है। सरकार उनकी बचत का 25% प्रोत्साहन राशि देती है। रुपये तक की जमा राशि के लिए. खाते में न्यूनतम एक वर्ष की अवधि के लिए 300/- रखे जाने पर सरकार की अधिकतम वार्षिक भागीदारी रूपये तक सीमित है। 75/-. मानव संसाधन विकास मंत्रालय के तहत महिला एवं बाल विकास विभाग, ग्रामीण क्षेत्रों में संचालित 1.32 लाख डाकघरों के नेटवर्क के माध्यम से योजना के कार्यान्वयन की देखरेख करता है। कार्यक्रम का एक उल्लेखनीय पहलू सभी स्तरों पर गैर–सरकारी संगठनों (एनजीओ) की भागीदारी है।

iv. इंदिरा महिला योजना (आईएमवाई)

सरकार द्वारा शुरू की गई इंदिरा महिला योजना अगस्त 1995 में देश के 200 से अधिक ब्लॉकों में शुरू की गई थी। इस कार्यक्रम का उद्देश्य महिलाओं की शिक्षा, जागरूकता, आय-सृजन क्षमता और समग्र सशक्तिकरण को बढ़ावा देना है। प्रगति का प्राथमिक मार्ग जमीनी स्तर पर स्वयं सहायता समूहों की स्थापना है। इस योजना के हिस्से के रूप में, महिलाओं को आंगनवाड़ी स्तर पर महिला ब्लॉक सोसायटी (एमबीएस) में संगठित किया जाता है। प्रत्येक आंगनवाड़ी केंद्र में सामुदायिक स्तर पर संचालित महिला स्वयं सहायता समूहों की अपेक्षा की जाती है। महिला समूहों को बचत गतिविधियों में संलग्न होने के लिए भी प्रोत्साहित किया जाता है, और उन्हें राष्ट्रीय महिला कोष (आरएमके) और सोशल बोर्ड जैसे राज्य और राष्ट्रीय स्तर के ऋण संस्थानों द्वारा दी जाने वाली ऋण सुविधाओं तक पहुंच प्राप्त होती है।

v. राष्ट्रीय महिला कोष (आरएमके)

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के तहत महिला एवं बाल विकास विभाग ने आर्थिक रूप से वंचित महिलाओं को ऋण वितरण की सुविधा के लिए राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना की। इसमें महिला विकास निगम, गैर-सरकारी संगठन और स्वयं सहायता

समूह शामिल हैं। इसका उद्देश्य ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों की 2 लाख गरीब महिलाओं को सहायता प्रदान करना है, जिनकी पारिवारिक आय रुपये से अधिक नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में 11,000/- प्रति वर्ष और रु. शहरी क्षेत्रों में 11,800/- प्रति वर्ष। राष्ट्रीय महिला कोष इन महिलाओं को सशक्त बनाने और उन्हें अपनी आर्थिक परिस्थितियों में सुधार करने में सक्षम बनाने के लिए एक वित्तीय संसाधन के रूप में कार्य करता है।

v. स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई)

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (आईआरडीपी) और संबद्ध कार्यक्रमों के पुनर्गठन के बाद अप्रैल, 1999 में स्वर्णजयंती ग्राम स्वरोजगार योजना (एसजीएसवाई) शुरू की गई थी। यह वर्तमान में ग्रामीण गरीबों के लिए क्रियान्वित किया जाने वाला एकमात्र स्वरोजगार कार्यक्रम है। एसजीएसवाई का उद्देश्य सहायता प्राप्त स्वरोजगारियों को बैंक ऋण और सरकारी सब्सिडी के माध्यम से आय उत्पन्न करने वाली संपत्तियां प्रदान करके गरीबी रेखा से ऊपर लाना है। यह योजना केंद्र और राज्यों के बीच 75:25 के लागत बंटवारे के आधार पर कार्यान्वित की जा रही है।

अध्याय - 4

लिंग और शिक्षा: विभिन्न सिद्धांत

कार्यस्थल पर पारंपरिक लैंगिक गतिशीलता कायम है, जहां पुरुषों के समान कार्यभार संभालने के बावजूद महिलाओं को अक्सर वेतन में असमानता का सामना करना पड़ता है। अभिनेत्रियाँ अक्सर इस बात पर असंतोष व्यक्त करती हैं कि उनकी भूमिकाएँ कथानक में गौण हैं और उन्हें अपने पुरुष समकक्षों की तुलना में कम मुआवजा मिलता है। यह 'नायक' और 'नायिका' जैसे शब्दों के अंतर्निहित अर्थों पर सवाल उठाता है, जहां पुरुषों को बचावकर्ता के रूप में चित्रित किया जाता है जबकि महिलाओं को अक्सर संकट में युवतियों के रूप में चित्रित किया जाता है। महिला राजनीतिक नेताओं की उपस्थिति को अभी भी एक आश्चर्यजनक घटना माना जाता है, और इंदिरा गांधी, सुषमा स्वराज या मार्गरिट थैचर जैसी शख्सियतों को अक्सर उनके असाधारण नेतृत्व कौशल के लिए नहीं, बल्कि महिला होने के बावजूद अपने-अपने क्षेत्रों में उत्कृष्टता हासिल करने की उनकी क्षमता के लिए उद्धृत किया जाता है। हालाँकि सेवा-उन्मुख नौकरियों में महिलाओं का अच्छा प्रतिनिधित्व है, लेकिन उन भूमिकाओं में उनका प्रतिनिधित्व कम है जिनके लिए

मजबूत नेतृत्व या तकनीकी कौशल की आवश्यकता होती है, जैसे कि राजनीति, विज्ञान या गणित। महिलाओं के विरुद्ध अपराध की घटनाएं लगातार बढ़ रही हैं, जिसमें शारीरिक क्षति के पीछे मनोवैज्ञानिक दमन भी शामिल है। बॉडी शेमिंग और एक विशिष्ट छवि के अनुरूप होने के लिए सामाजिक दबाव जैसे मुद्दे एनोरेक्सिया जैसी समस्याओं में योगदान करते हैं, जो स्थिति की जटिल प्रकृति को उजागर करते हैं।

एक आंदोलन के रूप में नारीवाद को चार अलग-अलग तरंगों में विभाजित किया जा सकता है:

नारीवाद की पहली लहर 19वीं और 20वीं शताब्दी के दौरान उभरी और महिलाओं के लिए कानूनी और राजनीतिक समानता की वकालत करने पर केंद्रित थी, मुख्य रूप से महिलाओं के मताधिकार या वोट देने के अधिकार पर ध्यान केंद्रित किया गया।

नारीवाद की दूसरी लहर ने राजनीतिक और कानूनी असमानताओं को सांस्कृतिक और सामाजिक असमानताओं से जोड़कर आंदोलन को एक कदम आगे बढ़ाया। इस लहर का एक प्रतिष्ठित नारा, कैरोल हनीस्क द्वारा गढ़ा गया था, "व्यक्तिगत राजनीतिक है", जो इसके सार को समाहित करता है।

नारीवाद की तीसरी लहर दूसरी लहर की कथित सीमाओं की प्रतिक्रिया के रूप में उभरी, जिसकी आलोचना मुख्य रूप से उच्च-मध्यम वर्ग की श्वेत महिलाओं की चिंताओं को संबोधित करने के लिए की गई थी। इस लहर ने अपने पूर्ववर्ती के विपरीत, कामुकता को महिला सशक्तिकरण के एक उपकरण के रूप में अपनाया। इसके अतिरिक्त, इसमें अंतर नारीवादियों, जो लिंगों के बीच अंतर्निहित मतभेदों को स्वीकार करने के लिए तर्क देते हैं, और गैर-भेद नारीवादियों के बीच बहस शामिल थी।

कुछ का मानना है कि नारीवाद की चौथी लहर शुरू हो गई है। शिक्षा के संदर्भ में, जब महिला साक्षरता दर की बात आती है तो आशा की किरण दिखाई देती है। 2001 से 2011

तक, भारत में महिलाओं के बीच साक्षरता दर 53.67% से बढ़कर प्रेरक 65% हो गई, जबकि पुरुष साक्षरता दर, जो 2001 में 75% से अधिक थी, केवल 82% तक बढ़ गई। लिंग अंतर काफी कम हो गया है, महिला साक्षरता दर में बदलाव की उच्च दर का अनुभव हो रहा है। 1960 और 70 के दशक की तुलना में आज स्कूलों में लड़कियाँ खेल और विज्ञान में बढ़ी हुई रुचि और बेहतर प्रदर्शन प्रदर्शित कर रही हैं। अधिक महिलाएं उच्च शिक्षा प्राप्त कर रही हैं और डॉक्टरेट की डिग्री हासिल कर रही हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप और अन्य क्षेत्रों में, महिला कॉलेज स्नातकों की संख्या पुरुषों से अधिक है।

हालाँकि, पारंपरिक रूप से पुरुष-प्रधान क्षेत्रों में महिलाओं के बढ़ते नामांकन और भागीदारी के बावजूद, संकाय और साथी छात्रों का लैंगिक व्यवहार अक्सर उन्हें आगे की शैक्षणिक उपलब्धियों से हतोत्साहित करता है। विशेष रूप से तकनीकी शिक्षा कक्षाओं में, लिंग असंतुलन के कारण महिला छात्र अक्सर अलग-थलग और वंचित महसूस करती हैं। उनकी शैक्षणिक उपलब्धियाँ इस धारणा के कारण कमज़ोर हो सकती हैं कि उनकी भविष्य की भूमिकाएँ घरेलू ज़िम्मेदारियों तक ही सीमित रहेंगी। पुरुष समकक्षों और संकाय सदस्यों का यह पूर्वाग्रह यौन उत्पीड़न के चरम मामलों को जन्म दे सकता है, क्योंकि महिला छात्रों को कमजोर माना जाता है। दुर्भाग्य से, यह धारणा कई महिला छात्रों के लिए वास्तविकता बन सकती है, जिससे उन्हें विश्वास हो जाता है कि अकादमिक उत्कृष्टता वास्तव में उनके जीवन में कोई फर्क नहीं डालेगी। परिणामस्वरूप, वे ख़राब प्रदर्शन कर सकते हैं, स्कूल छोड़ सकते हैं, और बाद में अवसाद और पहचान की हानि का अनुभव कर सकते हैं। ये सामाजिक परिस्थितियाँ महिलाओं के लिए उत्पीड़न के चक्र को कायम रखती हैं, जिससे उन्हें सामाजिक बाधाओं के खिलाफ निरंतर संघर्ष में फँसना पड़ता है।

महिला रोल मॉडल की कमी चुनौतीपूर्ण स्थिति को बढ़ा देती है। भारतीय संदर्भ में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, अंतर सिद्धांतकारों के दृष्टिकोण पर विचार करना महत्वपूर्ण है। उनका तर्क है कि महिला छात्रों को अधिक महिला रोल मॉडल की

आवश्यकता होती है, जो परिस्थितियों को देखते हुए सच है। आश्चर्य की बात है कि भारत में कामकाजी महिलाओं का प्रतिशत कम हो रहा है, और महिला छात्रों को कुछ व्यवसायों को अपनाने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जब वे महिलाओं को पहले से ही उन क्षेत्रों में काम करते हुए नहीं देखती हैं। इससे जीवन संबंधी निर्णय लेने और करियर विकल्प चुनने में अनिश्चितता पैदा होती है, और यह उन व्यवसायों की सीमा को सीमित कर देता है जिन पर वे विचार करते हैं। स्कूली पाठ्यक्रम अक्सर गृह विज्ञान या कला जैसे स्त्री विषयों की तुलना में विज्ञान और गणित जैसे तथाकथित मर्दाना विषयों को प्राथमिकता देता है। प्रतिस्पर्धात्मकता, सामग्री अधिग्रहण और महत्वाकांक्षा से जुड़े मूल्यों को बढ़ावा दिया जाता है, जिससे व्यक्तिगत और सामाजिक विकास के लिए आवश्यक देखभाल और पोषण पहलुओं से ध्यान हट जाता है। ये मूल्य अक्सर स्त्रीत्व से जुड़े होते हैं।

इन मुद्दों के समाधान के लिए, शिक्षकों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कक्षा में लिंग आधारित भेदभाव या लिंग के आधार पर शक्ति की गतिशीलता का प्रदर्शन न हो। यदि पाठ्यक्रम में ऐसी कोई सामग्री है जो एक लिंग से दूसरे लिंग का पक्ष लेती है, तो ऐसे पूर्वाग्रहों को सुधारने के प्रयास किए जाने चाहिए। नारीवादियों ने इन उपेक्षित पहलुओं पर जोर देने के लिए पाठ्यक्रम में 'देखभाल' दृष्टिकोण को शामिल करने का सुझाव दिया है। लिंग भेद को रचनात्मक पुनर्निर्माण के अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए।

दूसरी ओर, कुछ नारीवादियों का तर्क है कि लिंग भेद स्थापित करना पुरानी विचारधारा पर आधारित है। उनके अनुसार, सच्ची समानता तभी हासिल की जा सकती है जब लड़कियां उतनी ही महत्वाकांक्षी बनने का प्रयास करें जितनी लड़कों से अपेक्षा की जाती है। उनका मानना है कि अगर दोनों लिंग समान रूप से योगदान दें तो समाज अधिक प्रगति करेगा। हालाँकि, इस परिप्रेक्ष्य की अपनी कमियाँ हैं, क्योंकि यह गलत तरीके से मानता है कि दोनों लिंगों के जीवन लक्ष्य और दृष्टिकोण समान होने चाहिए। शिक्षा मनुष्य के विकास के लिए होनी चाहिए, न कि इसके विपरीत। इस परिप्रेक्ष्य का एक और परिणाम

यह है कि जो महिलाएं पुरुषों की तरह प्रतिस्पर्धी और महत्वाकांक्षी हैं, वे अक्सर उन लोगों को हीन समझती हैं जो कमतर नहीं हैं।

लिंग अंतर सिद्धांत पोषण और देखभाल के मूल्यों पर ध्यान दिलाता है, जो अक्सर स्त्रीत्व से जुड़े होते हैं। स्कूल और कॉलेज जैसी सामाजिक संस्थाएँ, जो बड़े पैमाने पर मर्दाना प्रतिमानों द्वारा शासित होती हैं, इन मूल्यों के महत्व के साथ-साथ उन महिलाओं की भी अनदेखी करती हैं जो इनका अभ्यास करती हैं। यह सिद्धांत न केवल इन आवश्यक लेकिन उपेक्षित मूल्यों पर प्रकाश डालता है, बल्कि इस धारणा को भी चुनौती देता है कि वे आमतौर पर पुरुषों से जुड़े मूल्यों से कमतर हैं।

इन सिद्धांतों को पूरी तरह से समझने के लिए, उन संदर्भों पर विचार करना आवश्यक है जिनमें वे उभरे। हालाँकि ये सिद्धांत कभी-कभी ओवरलैप हो सकते हैं, एक निश्चित समय में एक सिद्धांत आमतौर पर दूसरों पर हावी होता है।

समाजीकरण का सिद्धांत

छात्रों के रूप में महिलाओं को ऐतिहासिक रूप से अपने पुरुष समकक्षों से कमतर माना गया है। उन्हें कम बुद्धिमान, कम बौद्धिक और कम कुशल माना जाता था। गणित और विज्ञान जैसे विषय, जो अकादमिक और व्यावसायिक महत्व रखते थे, आमतौर पर मर्दाना विशेषज्ञता के क्षेत्र के रूप में माने जाते थे, जिसके कारण महिला छात्रों को इन विषयों में प्रदर्शन करने के लिए संघर्ष करना पड़ता था। इन क्षेत्रों में महिला हीनता की प्रारंभिक धारणा ने कक्षा और बाद में कार्यस्थल दोनों में भेदभाव को और बढ़ावा दिया।

समाजीकरण सिद्धांत के समर्थकों का तर्क है कि महिला छात्रों द्वारा इन विषयों में कम प्रदर्शन या उपेक्षा उनके आसपास के अपमानजनक माहौल का परिणाम है। उनका प्रस्ताव है कि यदि महिला छात्रों को अनुकूल परिस्थितियाँ प्रदान की जाती हैं, तो वे

विकसित होंगी और अपने पुरुष समकक्षों के बराबर प्रदर्शन करेंगी। मुख्य बात यह है कि शिक्षक और माता-पिता बालिकाओं को गर्मजोशी से प्रोत्साहित करें और उनके साथ उचित व्यवहार करें। शिक्षा लिंग-तटस्थ होनी चाहिए, और संस्थानों को निष्पक्षता सुनिश्चित करनी चाहिए और भेदभाव को खत्म करना चाहिए। केवल इन उपायों से ही समाज को समग्र रूप से लाभ हो सकता है।

समाजीकरण सिद्धांत विशेषज्ञों द्वारा सुझाया गया समाधान सरल प्रतीत हो सकता है, क्योंकि बालिकाओं के लिए समान शैक्षणिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने के लिए पूरे समाज के सामूहिक समर्थन की आवश्यकता होती है। शिक्षकों को लड़के और बालिकाओं दोनों के साथ उचित व्यवहार करना चाहिए और माता-पिता को अपने सभी बच्चों को समान रूप से प्रोत्साहित करना चाहिए। हालाँकि, दोनों लिंगों के साथ उचित व्यवहार करने का इरादा रखना ही पर्याप्त नहीं है; इसे रोजमर्रा की जिंदगी में लगातार अभ्यास किया जाना चाहिए। परिवारों, प्रशासन और अन्य सहित संपूर्ण प्रणाली को भी इन प्रयासों का समर्थन करना चाहिए। एकरूपता सुनिश्चित करने के लिए पाठ्यक्रम को स्वयं पुनर्गठित और व्याख्या करने की आवश्यकता है।

शिक्षा में लैंगिक समानता हासिल करने में कई चुनौतियों और बाधाओं को संबोधित करना कठिन लग सकता है। इसलिए, सिद्धांतकार इन कदमों के प्रति धैर्य और अटूट प्रतिबद्धता की आवश्यकता पर जोर देते हैं। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, महिला रोल मॉडल की कमी स्थिति को और खराब कर देती है। यह देखते हुए कि महिलाओं के खिलाफ भेदभाव सदियों से जारी है, इन प्रयासों के प्रभाव प्रकट होने में लंबा समय लग सकता है। लचीला बने रहना और हार न मानना महत्वपूर्ण है। लिंग-तटस्थ दृष्टिकोण के आलोचकों का तर्क है कि बालिकाओं की शिक्षा को अलग करने के अन्य नारीवादी दृष्टिकोण के प्रयासों से बाधा उत्पन्न हो सकती है। इससे शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों के बीच संघर्ष पैदा हो सकता है, क्योंकि सामाजिक पूर्वाग्रह अभी भी पुरुष-केंद्रित पाठ्यक्रम के पक्ष में हैं।

शिक्षा में लैंगिक समानता हासिल करने के लिए लगातार प्रयासों, धैर्य और विभिन्न हितधारकों की सामूहिक प्रतिबद्धता की आवश्यकता है। दोनों लिंगों के लिए समान अवसरों को बढ़ावा देने में महिला रोल मॉडल की भूमिका, पाठ्यक्रम सुधार और एक निष्पक्ष और सहायक शैक्षिक वातावरण महत्वपूर्ण पहलू हैं।

समाजीकरण सिद्धांतकार एक ऐसी शिक्षा प्रणाली की वकालत करते हैं जो पुरुष और महिला दोनों दृष्टिकोणों से तर्कसंगतता को अपनाती है। मायरा सैडकर, डेविड सैडकर, रोबर्टा हॉल और बर्निस सैंडलर जैसे विद्वानों का तर्क है कि महिलाओं में निहित स्त्रीत्व अंतर्निहित नहीं है, बल्कि निम्न शिक्षा या उसके अभाव का परिणाम है। इस प्रकार, महिलाओं को अपनी क्षमताओं का प्रदर्शन करने की अनुमति देने के लिए दोनों लिंगों को समान शिक्षा प्रदान करना महत्वपूर्ण हो जाता है। महिलाओं को लंबे समय से कमजोर और आश्रित माना जाता रहा है और ये धारणाएं कम उम्र से ही उनके पालन-पोषण में शामिल हो जाती हैं। सुरक्षा चिंताओं के कारण उन्हें निश्चित समय पर बाहर जाने के प्रति आगाह किया जाता है। यहां तक कि उनके बोलने के तरीके में भी अक्सर आत्म-संदेह झलकता है और उनमें आत्मविश्वास की कमी होती है, क्योंकि भाषाविदों ने देखा है कि उनके बयान अक्सर सवालिया लहजे में खत्म होते हैं।

हालाँकि, समाजीकरण सिद्धांत व्यक्तियों की परिवर्तनशील प्रकृति को नजरअंदाज करता है। जिस प्रकार पुरुष एक-दूसरे से भिन्न होते हैं, उसी प्रकार महिलाओं के भी दृष्टिकोण और दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न होते हैं। सभी महिलाओं को एक समान मानकर, सिद्धांत व्यक्तित्व के महत्व को कम कर देता है। फिर भी, समाजीकरण सिद्धांत महिलाओं को पूर्वनिर्धारित भूमिकाओं, विशेषताओं और कर्तव्यों से मुक्त करता है। यह इस धारणा को भी खारिज करता है कि चूंकि महिला छात्रों को कुछ गतिविधियों में प्राथमिकता हो सकती है, इसलिए उन्हें केवल उन्हीं क्षेत्रों में शिक्षित किया जाना चाहिए। इसके बजाय, यह एक व्यापक शिक्षा प्रदान करने की वकालत करता है जो पुरुषों के लिए उपलब्ध अवसरों से

मेल खाती हो। समाजीकरण सिद्धांत महिलाओं को पहुंच प्रदान करने और पुरुषों के पक्ष में संस्थागत पूर्वाग्रहों को चुनौती देने के लिए विभिन्न नीतिगत सुझाव और समाधान प्रदान करता है। यह लिंग अंतर परिप्रेक्ष्य पर लिंग-तटस्थ दृष्टिकोण पर जोर देता है।

लिंग भेद सिद्धांत

लिंग भेद सिद्धांतकार लड़कों और बालिकाओं के बीच अंतर पर एक विपरीत दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। जबकि समाजीकरण सिद्धांतकारों का तर्क है कि लिंगों के बीच कोई अंतर नहीं होना चाहिए क्योंकि लिंग अंतर को एक पुरानी विचारधारा के रूप में देखा जाता है, लिंग अंतर सिद्धांतकार बालिकाओं को अपनी विशिष्टता को अपनाने और इसे अपने लाभ के लिए उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। बालिकाओं को लड़कों की तरह बनने के लिए प्रशिक्षित करने के बजाय, वे उनकी रुचियों का पोषण करने और आमतौर पर बालिकाओं से जुड़ी लेकिन अक्सर महत्वहीन समझी जाने वाली विशेषताओं के मूल्य को पहचानने की वकालत करते हैं। स्कूल की संस्कृति, जो तर्क, प्रतिस्पर्धा और पेशेवर महत्वाकांक्षा पर जोर देती है, बालिकाओं के लिए असहज माहौल बना सकती है, जिससे उन्हें नुकसान हो सकता है।

लिंग-तटस्थ शिक्षा की वकालत करने के बजाय, ये सिद्धांतकार लिंग-संवेदनशील शिक्षा को बढ़ावा देते हैं। जिस तरह लड़के प्रतिस्पर्धा, तर्कवाद और दुनिया में सफल होने की महत्वाकांक्षा जैसे मूल्यों से लैस होते हैं, उसी तरह बालिकाओं को भी अपनी क्षमताओं का सर्वोत्तम संभव तरीके से उपयोग करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। इस प्रशिक्षण को घरेलू क्षेत्र से जोड़ा जा सकता है और "देखभाल" सिद्धांत पर ध्यान केंद्रित किया जा सकता है। हालाँकि,

लिंग-संवेदनशील शिक्षा के गठन पर आम सहमति पर पहुँचना लिंग अंतर सिद्धांतकारों के लिए चुनौतियाँ पैदा करता है। वे अक्सर लिंग-संवेदनशील शिक्षा की व्यापक और समावेशी अवधारणा को परिभाषित करने के लिए संघर्ष करते हैं। पुरुष और महिला दोनों शिक्षा के प्रति अलग-अलग दृष्टिकोण रखते हैं, लेकिन वे एक ही निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं। उदाहरण के लिए, जहां पुरुषों को संदेहपूर्ण और जिज्ञासु होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, वहीं महिलाएं सक्रिय रूप से सुनने और निष्कर्ष पर पहुंचने से पहले कई दृष्टिकोणों पर विचार करने में उत्कृष्ट होती हैं। इस प्रकार, कक्षा में दोनों सीखने की शैलियों को अपनाया जाना चाहिए।

गिलिगन जैसे अंतर सिद्धांतकारों का तर्क है कि यह महिलाओं द्वारा अपनाई गई सीखने की शैली नहीं है जो मायने रखती है, बल्कि उनकी शैलियों और उनसे प्राप्त ज्ञान में आत्मविश्वास या कमी है। महिलाओं पर थोपी गई सामाजिक अपेक्षाएँ और उनके द्वारा अपनाई जाने वाली शैलियाँ अत्यधिक संदिग्ध हैं। उनके ज्ञान को अक्सर तुच्छ कहकर खारिज कर दिया जाता है, और उनसे डरपोक और विनम्र व्यवहार करने की अपेक्षा की जाती है। उनकी अभिव्यक्ति का दमन उनके आत्मविश्वास को ख़त्म कर देता है, ख़ासकर रिश्तों में। महिला रोल मॉडल उन्हें अपने लिए खड़े होने के लिए प्रेरित करती हैं।

अन्य विश्लेषणों से पता चलता है कि बालिकाओं की तरह लड़कों को भी शिक्षा में देखभाल वाले रुझान से लाभ होता है। नेल नोडिंग्स जैसे विद्वानों का मानना है कि सार्थक अनुभव प्रदान करने के लिए स्कूली शिक्षा में "जुनून, दृष्टिकोण, कनेक्शन, चिंताएं और अनुभवी जिम्मेदारियां" शामिल होनी चाहिए। नोडिंग्स का तर्क है कि लिंग-संवेदनशील पाठ्यक्रम न केवल बालिकाओं के लिए बल्कि पूरे समाज के लिए आवश्यक है। स्त्रीत्व और शिक्षा का अलगाव अनावश्यक है, और

एक शांत और तर्कसंगत दृष्टिकोण विशेष रूप से मर्दाना नहीं है। वर्तमान पाठ्यक्रम अमूर्त और वस्तुनिष्ठ होता है, और एक नए पाठ्यक्रम को केवल तर्क और अनुशासन पर जोर देने के बजाय "देखभाल के केंद्रों" को बढ़ावा देना चाहिए जो शरीर, मन और आत्मा को शामिल करते हैं।

जबकि कई लिंग सिद्धांतकार इस बात से सहमत हैं कि महिलाओं को अधिक लिंग-संवेदनशील पाठ्यक्रम से लाभ होगा जो उनके अंतर्निहित मूल्यों का पोषण करता है, इस बिंदु पर भी असहमति है। लिंग अंतर स्कूल के भीतर बहस इस बात के इर्द-गिर्द घूमती है कि क्या परंपरागत रूप से स्त्री विशेषताओं जैसे देखभाल, साझाकरण और निस्वार्थता को पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए। विरोधी दृष्टिकोण का तर्क है कि इन मूल्यों को केवल महिला के रूप में सामान्यीकृत करना सही नहीं है और इससे बालिकाओं पर अतिरिक्त दबाव पड़ सकता है। पितृसत्तात्मक समाजों में, बालिकाओं को अक्सर पुरुषों द्वारा निर्धारित शैक्षणिक मानकों से मेल खाने में असमर्थ माना जाता है। इसके साथ ही, यदि महिलाएं मातृत्व या देखभाल करने वाले गुण प्रदर्शित नहीं करती हैं, तो उन्हें आलोचना का सामना करना पड़ता है। यह विरोधाभास सभी महिलाओं को अपने हितों को व्यक्त करने और अपने व्यक्तिगत गुणों को प्रदर्शित करने की अनुमति देने के महत्व पर प्रकाश डालता है जो उन्हें दूसरों से अलग करते हैं।

हालाँकि, मतभेद सिद्धांतकार इस बात पर एकमत हैं कि अब तक स्कूली शिक्षा मुख्य रूप से पुरुषोन्मुख रही है। जो चीज लड़कों के लिए काम करती है, जरूरी नहीं कि वह बालिकाओं के लिए भी काम करे। यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि आज महिलाएं जिन मूल्यों का प्रतिनिधित्व करती हैं वे उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि पुरुष प्रतिनिधित्व करते हैं। अपने दैनिक जीवन में संरचनात्मक और विखंडनात्मक अवधारणाओं को लागू करने से, छात्रों को लिंग संबंधों की

वास्तविकता और स्कूल से समाज तक लिंग शक्ति गतिशीलता की जटिल कार्यप्रणाली की समझ प्राप्त होती है। यह समझ महिलाओं को पुरुषों के समानांतर एक स्वतंत्र दुनिया बनाने का अधिकार देती है। भेदभाव या वर्चस्व से बचते हुए, लिंग भेद को संबोधित करते हुए संवेदनशीलता के साथ संपर्क किया जाना चाहिए।

संरचनात्मक सिद्धांत

संरचनावाद एक समाज के भीतर संगठित शक्ति की गतिशीलता की जांच करता है, जो शक्ति और अल्पसंख्यक समूहों के बीच संबंधों के साथ-साथ उस शक्ति द्वारा प्रदत्त विशेषाधिकारों पर ध्यान केंद्रित करता है। यह सिद्धांत शक्ति की जिन संरचनाओं का विश्लेषण करता है, वे प्रकृति में पदानुक्रमित हैं। सरल शब्दों में, संरचनावाद शक्ति को कुछ चुनिंदा लोगों के पास संपत्ति के समान मानता है। यह कब्ज़ा विशिष्ट सामाजिक संस्थाओं द्वारा स्थापित कानूनों, नियमों और विनियमों द्वारा शासित होता है। ये शक्ति व्यवस्थाएँ किसी समाज में लैंगिक असमानता, जैसे पितृसत्तात्मक या नस्लीय आधिपत्य जैसी असमानताओं को नियंत्रित करती हैं। ये शक्ति व्यवस्थाएँ हमारे दैनिक जीवन में इतनी गहराई से व्याप्त हैं कि हम अक्सर उन्हें चुनौती देने या उनका विरोध करने, इन असमानताओं को कायम रखने और बनाए रखने में विफल रहते हैं।

इन गहरी असमानताओं को संरचनात्मक असमानताओं के रूप में जाना जाता है। वे बताते हैं कि समाज के भीतर ज्ञान के कुछ पैटर्न या प्रणालियां कैसे संचालित होती हैं। समाजीकरण सिद्धांत और संरचनावादी सिद्धांत दोनों इस बात पर जोर देते हैं कि कई समूहों को प्रमुख समूहों द्वारा उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। इस आधिपत्य के परिणामस्वरूप समाज के भीतर कुछ समूह हाशिये पर चले जाते हैं। यह आधिपत्यवादी संरचना कोई हाल की घटना नहीं है बल्कि सदियों के उत्पीड़न और वर्चस्व के माध्यम से

स्थापित की गई है। नतीजतन, इन हाशिये पर पड़े समूहों का इतिहास अक्सर मुख्यधारा की कहानियों में कम प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण के लिए, इतिहास की पाठ्यपुस्तकें अक्सर प्रमुख बहुमत के नजरिए से भारत का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत करती हैं, लेकिन अल्पसंख्यक समूहों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान करने में विफल रहती हैं। चूँकि महिलाओं को ऐतिहासिक रूप से शिक्षा और अपनी राय व्यक्त करने के अवसर से वंचित किया गया था, आज हम जिन ऐतिहासिक वृत्तांतों का अध्ययन करते हैं वे अनिवार्य रूप से एक शिक्षित पुरुष दृष्टिकोण को प्रतिबिंबित करते हैं जो जानबूझकर या अनजाने में अपनी तरह के पक्ष में पक्षपाती हो सकते हैं।

चूंकि महिलाओं को लंबे समय तक शैक्षिक अवसरों से बाहर रखा गया था, इसलिए उनके पास न केवल औपचारिक शिक्षा तक पहुंच की कमी थी, बल्कि खुद को प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व करने के साधन भी नहीं थे। "वास्तविक" या "प्रामाणिक" ज्ञान, जिसे तथ्यात्मक और तर्कसंगत माना जाता है, मुख्य रूप से विशेषाधिकार प्राप्त, शिक्षित पुरुषों द्वारा उत्पादित किया गया था। महिलाओं के पास मौजूद घरेलू कौशल, जैसे कि खाना बनाना या घर संभालना, को वैध ज्ञान नहीं माना जाता था क्योंकि वे स्कूलों या विश्वविद्यालयों जैसे ज्ञान के औपचारिक केंद्रों के भीतर उत्पादित नहीं किए जाते थे। लैंगिक असमानता के व्यावहारिक उदाहरणों में महिलाओं के लिए कम वेतन, साथ ही नौकरानियों या वेट्रेस जैसी छोटी या कम प्रतिष्ठित नौकरियां सौंपी जाना शामिल है, जहां उन्हें उनकी उपस्थिति या सुखद और मैत्रीपूर्ण माहौल बनाने की क्षमता के आधार पर काम पर रखा जा सकता है। नियुक्ति प्रक्रियाएँ अक्सर पुरुषों की कथित निर्भरता और महत्वाकांक्षा का हवाला देते हुए उनका पक्ष लेती हैं। गर्भावस्था को महिलाओं को नुकसान पहुंचाने के एक कारण के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है और गर्भपात की सुविधा से इनकार किया जा सकता है।

संरचनावादी दृष्टिकोण से, इस उत्पीड़न और हाशिए पर सवाल उठाने, चुनौती देने या खारिज करने का प्रयास करने से पहले इसकी बारीकी से जांच करना और पूरी तरह से

समझना आवश्यक है। पुरुष आधिपत्य ने लंबे समय से महिला आबादी की प्रगति को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनकी प्रगति को रोकने का एक प्रमुख तंत्र उन्हें औपचारिक शिक्षा से वंचित करना और घरेलू ज्ञान को वैध मानकर खारिज करना था। अब, चूंकि शिक्षा सभी के लिए अधिक सुलभ हो गई है, लिंग-संवेदनशील ज्ञान उत्पादन को वैध बनाने के लिए शिक्षाशास्त्र और पाठ्यक्रम में नारीवादी परिप्रेक्ष्य को शामिल करना महत्वपूर्ण है। घरेलू क्षेत्र की पारंपरिक धारणा, जिसे महिलाओं का प्राकृतिक क्षेत्र माना जाता है, को आसानी से नजरअंदाज कर दिया जाता है जब घर में कमाने वालों की संख्या सीमित होती है। यह ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धारणाओं की सुविधा को दर्शाता है।

एक उभरता हुआ क्षेत्र जिसने महत्व प्राप्त कर लिया है वह है महिला अध्ययन। यह अनुशासन अन्य ज्ञान की कमियों को इंगित करने पर ध्यान केंद्रित नहीं करता है, बल्कि छात्रों को महिला-केंद्रित ग्रंथों में डुबो देता है और उन्हें एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। यह वैकल्पिक परिप्रेक्ष्य उन्हें लिंग-संवेदनशील दृष्टिकोण से रोजमर्रा की स्थितियों को बेहतर ढंग से समझने और नेविगेट करने में सक्षम बनाता है।

डीकंस्ट्रक्शन सिद्धांत

डिकंस्ट्रक्टिव सिद्धांत निश्चित श्रेणियों की धारणा को खारिज करता है और इसके बजाय अवधारणाओं की तरलता और रचनात्मकता पर जोर देता है। संरचनात्मक विश्लेषण के विपरीत, जो खुद को पदानुक्रमित संरचनाओं से संबंधित करता है, डिकंस्ट्रक्शन सिद्धांत कठोर श्रेणियों की वैधता पर सवाल उठाता है। विखंडनात्मक दृष्टिकोण से, उदाहरण के लिए, लिंग कोई ठोस या तथ्यात्मक इकाई नहीं है, बल्कि एक अमूर्त और सामाजिक रूप से निर्मित अवधारणा है। डिकंस्ट्रक्टिव सिद्धांतकार एक समूह द्वारा दूसरे पर प्रभुत्व स्थापित करने के संदर्भ में शक्ति की गतिशीलता का विश्लेषण नहीं करते हैं, क्योंकि इस प्रकार का विश्लेषण

निश्चित श्रेणियों पर निर्भर करता है, जो उन्हें समस्याग्रस्त लगता है। इसके बजाय, उनका लक्ष्य सामान्यीकृत श्रेणियों को अस्थिर करना है जिन्हें मान लिया जाता है लेकिन स्वाभाविक रूप से प्राकृतिक या निर्धारित नहीं होते हैं। इन श्रेणियों को चुनौती देकर, विखंडनवादी सिद्धांतकार नए विचारों और दृष्टिकोणों के उभरने की क्षमता पैदा करते हैं।

इसे प्राप्त करने के लिए, डिकंस्ट्रक्टिव सिद्धांतकार लिंग, जाति, वर्ग या नस्ल जैसी निश्चित श्रेणियों को बाधित या नष्ट करने के लिए विभिन्न रणनीतियों का इस्तेमाल करते हैं। इन रणनीतियों में अपरिचितीकरण शामिल हो सकता है, जिसमें मौजूदा अवधारणाओं की इस तरह से व्याख्या करना या उनका नाम बदलना शामिल है जो उन्हें स्थापित अर्थों को चुनौती देने के लिए अपरिचित बना देता है। व्युत्क्रमण एक अन्य रणनीति है, जिसमें अपेक्षित पैटर्न या मानदंडों को इस तरह से बदलना शामिल है जो कि हम जिस चीज के आदी हैं उससे भटक जाते हैं। डिकंस्ट्रक्टिव सिद्धांतकार कुछ अवधारणाओं की पुनर्व्याख्या कर सकते हैं या स्थापित विचारों को समझाने के लिए नए शब्द पेश कर सकते हैं। इसलिए, विखंडनात्मक सिद्धांत न केवल कल्पित श्रेणियों का विखंडन करता है, बल्कि उन श्रेणियों से उत्पन्न होने वाली धारणाओं को भी चुनौती देता है। यह अंतर सिद्धांतकारों द्वारा समर्थित देखभाल संबंधी परिप्रेक्ष्य के लिए एक वैकल्पिक दृष्टिकोण प्रदान करता है। हालाँकि, सभी सिद्धांतों की तरह, डिकंस्ट्रक्टिव सिद्धांत वैकल्पिक आख्यानों और ग्रंथों की खोज पर ध्यान केंद्रित करता है जो मुख्यधारा के दृष्टिकोण से भिन्न होते हैं, नवीन पढ़ने की प्रथाओं को बढ़ावा देते हैं।

अध्याय - 5

लिंग पहचान और समाजीकरण प्रथाएं

समाजीकरण क्या है?

समाजशास्त्री, सामाजिक मनोवैज्ञानिक, मानवविज्ञानी, राजनीतिक वैज्ञानिक और शिक्षाविद विरासत और प्रसार की आजीवन प्रक्रिया का उल्लेख करते हैं मानदंडों, सीमा शुल्क और विचारधाराओं, कौशल के साथ एक व्यक्ति प्रदान करना और आदतों अपने स्वयं के भीतर भाग लेने के लिए आवश्यक समाज. इस प्रकार समाजीकरण "वह साधन है जिसके द्वारा सामाजिक और सांस्कृतिक निरंतरता प्राप्त की जाती है। समाजीकरण वह साधन है जिसके द्वारा मानव शिशु अपने समाज के एक कामकाजी सदस्य के रूप में प्रदर्शन करने के लिए आवश्यक कौशल प्राप्त करना शुरू करते हैं और यह सबसे प्रभावशाली सीखने की प्रक्रिया है जिसे कोई अनुभव कर सकता है।

वही 'खुद को देखना' एक सामाजिक मनोवैज्ञानिक अवधारणा है, जिसे चार्ल्स हॉर्टन कूली 1902 में, यह कहते हुए की कि एक व्यक्ति का स्वयं समाज की पारस्परिक बातचीत से बढ़ता है और धारणा दूसरों के बारे में। 'समाजशास्त्रीय' शब्द अन्य लोगों की धारणा के आधार पर खुद को आकार देने वाले लोगों

को संदर्भित करता है, जो लोगों को खुद पर अन्य लोगों के दृष्टिकोण को सुदृढ़ करने के लिए प्रेरित करता है। लोग खुद को इस आधार पर आकार देते हैं कि अन्य लोग क्या समझते हैं और खुद पर अन्य लोगों की राय की पुष्टि करते हैं। कई वैज्ञानिकों का कहना है कि समाजीकरण अनिवार्य रूप से जीवन के दौरान सीखने की पूरी प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व करता है और वयस्कों के साथ-साथ बच्चों के व्यवहार, विश्वासों और कार्यों पर एक बड़ा प्रभाव है।

समाजीकरण के विभिन्न रूप

i. **समूह समाजीकरण** -यह सिद्धांत है कि माता-पिता के आंकड़ों के के स्थान पर किसी व्यक्ति के सहकर्मी समूह, वयस्कता में उसके व्यक्तित्व और व्यवहार को प्रभावित करते हैं। किशोरों का खर्च अधिक माता-पिता की तुलना में साथियों के साथ समय बिताएं। इसलिए, सहकर्मी समूह मजबूत हैं। सहसंबंध माता-पिता के आंकड़ों की तुलना में व्यक्तित्व विकास के साथ हैं। यहां स्कूल के दोस्त, सहपाठी और पर्यावरण व्यक्ति को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, जुड़वां भाई, जिनका आनुवंशिक मेकअप समान है, व्यक्तित्व में भिन्न होंगे क्योंकि उनके पास दोस्तों के अलग-अलग समूह हैं, जरूरी नहीं कि उनके माता-पिता ने उन्हें अलग तरह से उठाया हो।

ii. **लिंग समाजीकरण**: - हेंसलिन (1999) का तर्क है कि "समाजीकरण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा सांस्कृतिक रूप से सीखना है"।लैंगिक भूमिकाएँ", लिंग समाजीकरण किसी दिए गए लिंग के लिए उपयुक्त माने जाने वाले व्यवहार और दृष्टिकोण के सीखने को संदर्भित करता है। लड़के,लड़के बनना सीखते हैं, और लड़कियां ,लड़कियां बनना सीखती हैं।

यह "सीखना" कई अलग-अलग तरीकों से होता है। एजेंटों समाजीकरण की मात्रा. लिंग भूमिकाओं को मजबूत करने में परिवार निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है, लेकिन किसी के दोस्त, स्कूल, औपचारिक और गैर-औपचारिक संगठन भी हैं। हेन्सलिन ने कहा कि लैंगिक भूमिकाओं को "अनगिनत सूक्ष्म और इतने सूक्ष्म तरीकों से प्रबलित नहीं किया जाता है।

iii. **सांस्कृतिक समाजीकरण:-** यह उन तरीकों को संदर्भित करता है जो माता-पिता विभिन्न प्रथाओं का उपयोग करते हैं जो बच्चों को उनके इतिहास या विरासत के बारे में सिखाते हैं और कभी-कभी, "गर्व विकास" के रूप में जाना जाता है। तैयारी के लिए पक्षपात संदर्भित करता है पालन पोषण प्रथाओं के लिए बच्चों को जागरूक होने और सामना करने के लिए तैयार करने पर ध्यान केंद्रित किया गया, विभेदन. अविश्वास को बढ़ावा देने से तात्पर्य बच्चों के सामाजिकरण की लालन पालन प्रथाओं से है ताकि वे अन्य लिंग, जाति या जाति के लोगों से सावधान रहें। जाति. समतावाद बच्चों को इस विश्वास के साथ सामाजिक बनाने को संदर्भित करता है कि सभी लोग समान हैं और उनके साथ एक समान मानवीय व्यवहार किया जाना चाहिए।

iv. **आर्थिक समाजीकरण:-** समाजीकरण "खपत के लिए स्वीकार्य विकल्प", "उपभोग विकल्पों के सामाजिक मूल्यों," "प्रमुख मूल्यों की स्थापना" और "खपत में भागीदारी की प्रकृति" के बारे में निर्णयों को प्रभावित करता है। दुर्भाग्य से, एक और एक ही शब्द, समाजीकरण इस संदर्भ में प्रति-प्रस्तुत घटनाओं का वर्णन करने के लिए उपयोग किया जाता है: अभिजात वर्ग के नियंत्रण में पूंजीवादी समाज का बढ़ता केंद्रीकरण और

अन्योन्याश्रितता; और बहुमत द्वारा लोकतांत्रिक, निचले स्तर पर नियंत्रण की संभावना। इस प्रकार, "समाजीकरण" दो बहुत अलग तरीकों का वर्णन करता है जिसमें समाज अधिक सामाजिक बन सकता है: पूंजीवाद के अंतर्गत , एक बढ़ते केंद्रीकरण और योजना की ओर एक प्रवृत्ति है जो अंततः वैश्विक है, लेकिन ऊपर से नीचे होती है; समाजवाद के अंतर्गत , उस प्रक्रिया को लोगों और उनके समुदायों द्वारा नीचे से लोकतांत्रिक नियंत्रण के अधीन किया जाता है।

लिंग पहचान और समाजीकरण

समाजीकरण प्रक्रिया का उपयोग आने वाली पीढ़ियों को विभिन्न सामाजिक भूमिकाओं को सिखाने के लिए किया जाता है। विभिन्न सिद्धांतों और आधुनिक समय ने एक शिशु को लाने के लिए अन्य विकल्पों को सामने रखा है और कई नौकरियों में शारीरिक शक्ति से अधिक बुद्धिमत्ता की आवश्यकता होती है, लिंग भूमिकाओं के बीच यह भेदभाव काफी हद तक अंतर्निहित हो गया है। समाजीकरण के माध्यम से, व्यक्ति उन चीजों के बीच भेद करना सीखते हैं जिन्हें समाज स्वीकार्य बनाम अस्वीकार्य व्यवहार मानता है और इस तरह से कार्य करता है जो समाज की जरूरतों के लिए उपयुक्त है। परिवार, रिश्तेदार, दोस्त और बाद में समाज जन्म के लगभग तुरंत बाद लिंग भूमिकाओं को सिखाना शुरू कर देता है। उदाहरण के लिए, अधिकांश छोटी बालिकाओं को युवा लड़कों की तुलना में अधिक कोमलता से रखा जाता है और अधिक कोमलता से व्यवहार किया जाता है। जैसे-जैसे बच्चा बड़ा होता है, माता और पिता दोनों आमतौर पर छोटी बालिकाओं की तुलना में छोटे लड़कों के साथ अधिक संभालते हैं और खेलते हैं। बच्चों के रूप में, लड़कों को छोटी बालिकाओं की तुलना में जब भी वे चाहते हैं, घर से बाहर जाने की अनुमति

दी जाती है। लड़कों से बालिकाओं की तुलना में सभी प्रकार के काम तेजी से करने की उम्मीद की जाती है।

लिंग पहचान और संरचनात्मक कार्यात्मकता

सामाजिक व्यवस्था की प्रकृति और समाज में विभिन्न भागों (संरचनाओं) के बीच संबंधों को समझाने का प्रयास करते हैं ताकि यह निर्धारित किया जा सके कि यह समग्र रूप से समाज की स्थिरता में कैसे योगदान देता है। यद्यपि अन्य दृष्टिकोणों का उपयोग करने वाले सिद्धांतकारों का तर्क है कि लिंग भेदभाव सामान्य रूप से समाज और विशेष रूप से महिलाओं के लिए बुरा है क्योंकि यह महिलाओं को अपनी क्षमता तक पहुंचने और समाज में पूरी तरह से योगदान देने से रोकता है, कार्यात्मकवादी परिप्रेक्ष्य से, लिंग भेदभाव एक समाज की स्थिरता में योगदान देता है। लिंग भूमिकाएं, इस दृष्टिकोण में, परिवार के भीतर श्रम का विभाजन स्थापित करने की आवश्यकता से उत्पन्न होती हैं। प्रसव और स्तनपान में उनकी जैविक भूमिका के कारण, ग्रह के आसपास लगभग हर संस्कृति और समाज में महिलाओं की बाल देखभाल के लिए प्राथमिक जिम्मेदारी है। प्रारंभिक मानव संसाधनों को इकट्ठा करने के लिए एक साथ गए लेकिन गर्भावस्था और छोटे बच्चों ने महिलाओं को वापस रहने के लिए मजबूर किया। इससे एक अधिक सुविधाजनक प्रबंधन हुआ जिसमें महिलाओं से परिवार और घर की देखभाल करने की उम्मीद की गई और पुरुषों ने बाहर मोर्चा संभालने और आजीविका के लिए कमाने का फैसला किया।

लिंग पहचान और सामाजिक साधन

समाजीकरण प्रक्रिया के माध्यम से, लड़कों और बालिकाओं को समाज में खेलने के लिए अलग-अलग भूमिकाएं सिखाई जाती हैं। उदाहरण के लिए, बेटों से किसी भी परिस्थिति में रोने या कोमल या भावनात्मक भावनाओं का प्रदर्शन नहीं करने की उम्मीद की जाती है, क्योंकि ये स्त्री होने के संकेत हैं। बेटियों से यह उम्मीद नहीं की जाती है कि वे किसी के सामने गुस्सा, हिंसा, हताशा या आक्रामकता दिखाएं। 'कार्यात्मकवादी' इन विभिन्न विचारों को वाद्य और अभिव्यक्ति के रूप में संदर्भित करते हैं। इसमें शामिल हैं-

- लड़कों को लक्ष्य निर्धारित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है और परिवार और समाज दोनों पूरे दिल से सहयोग करते हैं। परिवार और सामाजिक संगठन लक्ष्य-उन्मुख दृष्टिकोण विकसित करने में मदद करते हैं ताकि वे इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए काम कर सकें, चाहे काम कितना भी लंबा और थका हुआ हो। दूसरे शब्दों में, लड़कों को कठोर और मानसिक रूप से मजबूत होने के लिए तैयार किया जाता है ताकि वे अपनी निराशा या निराशा व्यक्त किए बिना आसानी से विफलता का सामना कर सकें।
- दूसरी ओर बालिकाओं को भावुक, देखभाल करने वाला और प्यार करने वाला माना जाता है। वे आसानी से टूट जाते हैं और संवेदनशील और भावुक भी होते हैं। चूंकि वे देखभाल करने वाले हैं, इसलिए उन्हें अपने परिवार की देखभाल करने के लिए सबसे अच्छा माना जाता है। जो लड़कियां परिवार की देखभाल कर सकती हैं और प्रभावशाली ढंग से घरेलू काम कर सकती हैं, उन्हें आदर्श दुल्हन सामग्री माना जाता है।

लिंग भूमिकाओं की समाजीकरण प्रक्रिया इतनी सूक्ष्म हो सकती है कि जब वे अपनी बेटियों और बेटों को पढ़ाने और व्यवहार करने के तरीके के बीच असमानता को कई माता-पिता को इंगित करते हैं, तो वे अक्सर जवाब देते हैं कि लिंग स्वाभाविक रूप से न केवल जैविक रूप से बल्कि व्यवहारिक रूप से भी भिन्न हैं। कार्यात्मकवादी परिप्रेक्ष्य के अनुसार, दुनिया के साथ बातचीत करने के ये अलग-अलग तरीके पारस्परिक रूप से सहायक हैं। उदाहरण के लिए, अभिव्यंजक होने और सामंजस्यपूर्ण घर और पारिवारिक जीवन को बनाए रखने से, महिलाएं पुरुषों को ऐसी जिम्मेदारियों से मुक्त करती हैं, जिससे उन्हें दुनिया में बाहर जाने और दीर्घकालिक कार्यों और लक्ष्यों पर ध्यान केंद्रित करने में सक्षम बनाया जाता है। इसी तरह, एक सहायक दृष्टिकोण रखने वाले पुरुषों और बड़े समाज के साथ बातचीत करने से, महिलाओं को एक सामंजस्यपूर्ण घर और पारिवारिक जीवन बनाने पर ध्यान केंद्रित करने के लिए स्वतंत्र किया जाता है।

औपचारिक और अनौपचारिक परिस्थिति में समाजीकरण प्रथाएं

हमारे समाज में विभिन्न औपचारिक, अनौपचारिक और गैर-औपचारिक सेटअप या संगठन हैं। वे सभी एक समाज में उपयुक्त हमारे व्यवहार को स्थापित करने और नियंत्रित करने में भूमिका निभाते हैं। दृष्टिकोण अलग हो सकता है लेकिन लक्ष्य एक ही है यानी मानव जीवन को पार करना। इनमें शामिल हैं-

- औपचारिक : - स्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय, कार्यालय या कोई अन्य औपचारिक स्थान
- गैर-औपचारिक : - घर, दोस्त, साथियों, परिवार और रिश्तेदारों या कोई अन्य अनौपचारिक सार्वजनिक स्थान।

i. लिंग पहचान और परिवार

परिवार समाजीकरण का सबसे महत्वपूर्ण जरिया है क्योंकि यह बच्चे के जीवन का केंद्र है, क्योंकि शिशु पूरी तरह से दूसरों पर निर्भर हैं। सभी समाजीकरण जानबूझकर नहीं है, यह आसपास पर निर्भर करता है। सबसे गहरा प्रभाव लिंग समाजीकरण है; जबकि , परिवार बच्चों को सांस्कृतिक मूल्यों और अपने और दूसरों के बारे में दृष्टिकोण सिखाने का कार्य भी करता है। बच्चे वयस्कों द्वारा बनाए गए वातावरण से लगातार सीखते हैं। बच्चे भी बहुत कम उम्र में कक्षा के बारे में जागरूक हो जाते हैं और तदनुसार प्रत्येक कक्षा को अलग-अलग मूल्य प्रदान करते हैं। समाजीकरण के एजेंट धार्मिक परंपराओं में प्रभाव में भिन्न होते हैं। कुछ का मानना है कि धर्म एक जातीय या सांस्कृतिक श्रेणी की तरह है, जिससे व्यक्तियों के लिए धार्मिक संबद्धता से टूटने और इस सेटिंग में अधिक समाजीकृत होने की संभावना कम हो जाती है। माता-पिता की धार्मिक भागीदारी धार्मिक समाजीकरण का सबसे प्रभावशाली हिस्सा है - धार्मिक साथियों या धार्मिक विश्वासों की तुलना में अधिक।

अपने बच्चों में लिंग आधारित आचरण विकसित करने के लिए, माता-पिता सक्रिय भूमिका निभाते हैं। जैसे-जैसे शिशु बड़े होते हैं, माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्य समाज की मांग के अनुसार लिंग से जुड़े आचरण को दिशा देते हैं। इस आचरण में भाषा का उपयोग और लिंग आधारित श्रेणियों में लोगों और वस्तुओं को अलग करना शामिल है। उदाहरण के लिए: वह गुड़िया के साथ खेलना पसंद करती है। वह उपहार के रूप में खिलौना बंदूक चुनेगा। गतिविधियों को लिंग के अनुसार भी विभाजित किया जाता है, जैसे लड़कों को बाहर के खेलों के लिए और बालिकाओं को घर के कामों के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। माता-पिता अपने बच्चों के साथ बातचीत करने के तरीके भी

उनके लिंग के आधार पर भिन्न होते हैं। जबकि बेटियों के साथ बातचीत अधिक सौम्य, सहायक, सतर्क और उत्साहजनक है; बेटों को अधिक सख्त, क्रोध और अनुशासित तरीके से बातचीत की जाती है। बेटों से अपेक्षा है कि वे अधिक जिम्मेदार और स्वतंत्र हों। अपने माता-पिता पर निर्भर बेटियों को स्नेही माना जाता है। भावनाएं लड़कों की तुलना में बालिकाओं के साथ अधिक जुड़ी हुई हैं। लड़कों और बालिकाओं दोनों के लिए आचार संहिता के मानदंड अलग-अलग हैं। हमारे भारतीय परिवारों में देखा गया है कि पिता अपनी बेटियों के बारे में बहुत सुरक्षात्मक होते हैं और माताएं बेटों के प्रति अधिक स्नेही होती हैं।

माता-पिता द्वारा लिंग आधारित उपचार जानबूझकर नहीं किया जा सकता है। यह अनजाने में आता है क्योंकि हमारा सामाजिक ढांचा ऐसा है कि हम वही करते हैं जो हमने बड़े होने के दौरान देखा है। यहां तक कि अगर माता-पिता को इंगित किया जाता है, तो वे असहमत हो सकते हैं कि वे बेटी और बेटे के बीच भेदभाव करते हैं। भेद शिशु अवस्था से देखा जा सकता है। परिवार के सदस्य और रिश्तेदार बच्चे के लिंग के आधार पर खिलौने और खेल पेश करते हैं। बाजार विभिन्न प्रकार के खिलौनों, कपड़ों आदि से भरा हुआ है। लिंग के आधार पर। हम कह सकते हैं कि दुनिया बदल रही है लेकिन लैंगिक रूढ़ियां हमारे समाज में गहराई से अंतर्निहित हैं।

यह माता-पिता का नैतिक कर्तव्य है कि वे शिक्षकों और स्कूल अधिकारियों की मदद से अपने बेटे और बेटी दोनों को समान गुणवत्ता वाली शिक्षा दें। उन्हें अपने बच्चों को अपनी पसंद और रुचि की शिक्षा और कैरियर बनाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। उन्हें समझना चाहिए कि लड़कियां समान

रूप से मेहनती और महत्वाकांक्षी होती हैं। वे भी सफल हो सकते हैं और उन विषयों में अच्छा कर सकते हैं जिनमें उन्होंने कम आंका है।

ii. लिंग पहचान और स्कूल

स्कूल और कॉलेज समाज के लघु चित्र हैं; इसलिए वे लैंगिक रूढ़ियों से अछूते नहीं रह सकते। स्कूल छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि को उनके लिंग के आधार पर आंकते हैं। माता-पिता के साथ-साथ स्कूलों को भी लगता है कि गणित, भौतिकी आदि जैसे विषयों में लड़कों का बालिकाओं की तुलना में बेहतर प्रदर्शन होता है। माता-पिता स्कूल से उम्मीद करते हैं कि वे अपने बेटों को पढ़ाई के साथ-साथ खेल में उत्कृष्टता प्राप्त करने के लिए और अधिक प्रेरित करें। दूसरी ओर, बहुत कम माता-पिता अपनी बेटियों के लिए स्कूलों से ऐसी उम्मीदें रखते हैं।

कुछ पाठ्यक्रमों में रुचि रखने वाले लड़के मैकेनिकल इंजीनियरिंग, एयरोनॉटिकल इंजीनियरिंग, सशस्त्र बलों, पायलटों आदि जैसी बालिकाओं की पसंद नहीं हो सकते हैं। मामला इसके विपरीत हो सकता है जिसमें लड़कियां शिक्षण, नर्स, स्त्री रोग आदि जैसे विषयों को चुनने के लिए अधिक इच्छुक हैं।

स्कूल प्राधिकरण लिंग के अनुसार विभिन्न गतिविधियों को भी विभाजित करता है। एक लिंग को उन गतिविधियों को करने के लिए हतोत्साहित किया जाता है जो अन्य लिंग को लेनी चाहिए। उदाहरण के लिए, बालिकाओं को बुनाई और कढ़ाई करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जबकि लड़कों को इसमें

दाखिला लेने के लिए हतोत्साहित किया जाता है। यहां तक कि जब वे अपने माता-पिता के साथ अपनी पसंद के बारे में घर पर चर्चा करते हैं, तो उन्हें लेने के लिए हतोत्साहित किया जाता है यदि वे अपने लिंग रूढ़ियों के खिलाफ हैं। यह भी पाया गया है कि कई शिक्षक लिंग पक्षपाती हैं और यह उनके पालन-पोषण के तरीके के कारण हो सकता है। कभी-कभी लड़कों को डांटा या बेंत से पीटा जाता है जबकि बालिकाओं को कम फटकार लगाई जाती है। इसका कारण यह हो सकता है कि लोगों को लगता है कि लड़कियां संवेदनशील और भावुक होती हैं। लेकिन यह हमेशा सच नहीं है। कुछ लड़के बालिकाओं की तुलना में अधिक संवेदनशील होते हैं और कोई भी सजा या आलोचना अच्छी नहीं लगती है। स्कूल वह स्थान है जहां ऐसे मूल्यों का प्रसार किया जाना चाहिए जो छात्रों को न केवल समाज में अवशोषित करने में मदद करते हैं बल्कि गलत प्रथाओं को भी समाप्त करते हैं। लेकिन स्कूल शैक्षिक उपलब्धियों पर अधिक ध्यान केंद्रित करते हैं क्योंकि वे उन्हें अपना करियर चुनने में मदद करते हैं। जबकि अब विभिन्न बोर्ड परीक्षाओं में बालिकाओं की शैक्षणिक उपलब्धियां अधिक हैं। दुर्भाग्य से, बहुत कम शिक्षक हैं जो लैंगिक पूर्वाग्रह से ऊपर उठते हैं और बालिकाओं को उन पाठ्यक्रमों को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं जो वे चाहते हैं या उनके द्वारा कम चलाए जाते हैं। यदि बालिकाओं को शिक्षकों द्वारा प्रेरित और प्रोत्साहित किया जाता है तो वे पुरुष प्रधान क्षेत्रों में लड़कों के समान उत्कृष्टता प्राप्त कर सकती हैं।

कैरियर परामर्श के दौरान भी यह देखा गया है कि विभिन्न लिंगों के लिए अनुकूल करियर को तदनुसार वर्गीकृत किया जाता है। इसके अलावा, शिक्षण या मूल्यांकन करते समय शिक्षक का रवैया लिंग पक्षपाती हो सकता है।

iii. लिंग पहचान और मित्र

एक सहकर्मी समूह एक सामाजिक समूह है जिसके सदस्यों में रुचियां, सामाजिक स्थिति और उम्र समान है। यह वह जगह है जहां बच्चे पर्यवेक्षण से बच सकते हैं और अपने दम पर संबंध बनाना सीख सकते हैं। सहकर्मी समूह का प्रभाव आमतौर पर किशोरावस्था के दौरान चरम पर होता है, जबकि सहकर्मी समूह आम तौर पर केवल अल्पकालिक हितों को प्रभावित करते हैं, परिवार के विपरीत जिसमें दीर्घकालिक प्रभाव होता है।

दोस्त समूह अगर लड़कों का हो तो उनका एक-दूसरे के साथ व्यवहार करने का तरीका अलग होता है और अगर यह मिश्रित समूह हो तो लड़के बातचीत का अपना तरीका बदल लेते हैं। वे बालिकाओं को प्रभावित करना चाहते हैं इसलिए सज्जन की तरह व्यवहार करते हैं। कठोर और कठोर प्रकृति का प्रदर्शन नहीं किया जाता है। कुछ लड़के बालिकाओं के साथ सहज नहीं होते हैं और यही सच हो सकता है जब लड़कियां लड़कों से बात करने से बचने की कोशिश करती हैं। किशोरावस्था में भी, समाज स्वस्थ तरीके से लड़की-लड़के की दोस्ती को निगलने लगता है।

ऐसी गतिविधियाँ हैं जिन्हें लड़के मर्दाना मानते हैं जैसे असभ्य, बहादुर, चुनौतीपूर्ण, स्वतंत्र आदि। और अगर कोई लड़का ये नहीं दिखाता है तो उसे लड़की जैसा माना जाता है। ऐसा ही उन लड़कों के साथ भी होता है जो किसी लड़की को मृदुभाषी, डरपोक, शर्मीला आदि समझते हैं। और अगर वह ऐसा नहीं दिखाती है तो उसे 'लड़का' माना जाता है। बच्चे अपने सहकर्मी समूह में सराहना करना पसंद करते हैं और इस प्रकार उन पर समाज द्वारा अपेक्षित व्यवहार प्रदर्शित करने के लिए दबाव डाला जाता है। स्कूल हो या परिवार,

वही स्थितियां साबित करती नजर आती हैं कि जेंडर डिफरेंस हमारी संस्कृति की रगों में है। लिंग पहचान को बालिकाओं या लड़कों द्वारा व्यक्त किए गए व्यवहार को मंजूरी देकर लागू किया जाता है।

iv. लिंग पहचान और कार्यस्थल

वर्तमान परिदृश्य में, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की भूमिका में काफी बदलाव आया है। जीवन यापन की लागत बढ़ गई है जिसके परिणामस्वरूप परिवार के सदस्य लिंग के बावजूद वित्तीय योगदान देते हैं। यह अवधारणा समाज के मध्यम वर्ग के वर्ग में तेजी से फैल रही है। यहां तक कि जो परिवार बहुएं ला रहे हैं, वे भी कामकाजी लोगों को स्वीकार कर रहे हैं। लड़कियां खुद को शिक्षित कर रही हैं ताकि वे लड़कों के साथ समान रूप से कार्यबल में प्रवेश कर सकें। कई विवाहित महिलाएं भी खुद को रोजगार-उन्मुख पाठ्यक्रमों में संलग्न कर रही हैं और उन्हें परिवारों के साथ-साथ समाज द्वारा भी पूरी तरह से समर्थन दिया जा रहा है। नौकरियों में महिलाओं की भागीदारी ने न केवल परिवार को आर्थिक स्थिरता दी है, बल्कि खुद के लिए पहचान भी दी है।

कार्यस्थल पर पुरुषों को आजकल एक महिला सहकर्मी या बॉस से कोई फर्क नहीं पड़ता है। व्यावसायिक परिवर्तन और दृष्टिकोण में परिवर्तन के साथ सामाजिक परिवर्तन ने कार्यस्थल पर महिलाओं को पहचान दी है। लेकिन अभी भी पूरा मेकओवर नहीं देखा गया है। कुछ स्थानों पर पुरुषों के बीच आपत्तियां, नकारात्मकता और नाराजगी है। उन्हें ऐसा लगता है जैसे वे कुछ क्षेत्रों में

अपनी पकड़ और पहचान खो रही हैं, जिन्हें महिलाएं आगे बढ़ाने की कोशिश कर रही हैं। यह नाराजगी आलोचनात्मक बयानों, अपमानजनक भाषा के उपयोग या यौन उत्पीड़न के रूप में कुछ पुरुष सहकर्मियों के व्यवहार में देखी जा सकती है। कई पुरुष बॉस अभी भी आउटडोर या देर रात के काम या फील्ड वर्क के लिए पुरुष कर्मचारियों को पसंद करते हैं। कभी-कभी इन मानदंडों पर महिलाओं को कम वेतन और प्रोत्साहन का भुगतान किया जाता है। हमारे समाज में ऐसे कई उदाहरण हैं जहां महिलाओं को अदालत का रुख करना पड़ा और अपने उचित अधिकारों के लिए लड़ना पड़ा।

कई अध्ययनों से साबित हुआ है कि पुरुषों की तुलना में महिलाएं मल्टीटास्किंग में अच्छा प्रदर्शन करती हैं। लेकिन पुरुष प्रधान समाज का कहना है कि अविवाहित महिलाएं विवाहित लोगों की तुलना में बेहतर काम कर सकती हैं क्योंकि उनका ध्यान अक्सर काम से परिवार और बच्चों की ओर भटक जाता है जो उनकी प्रभावकारिता को बाधित करता है। कभी-कभी यह माना जाता है कि चूंकि उसे घर के अंदर और बाहर काम करने की दोहरी भूमिका निभानी है, इसलिए वह अपनी दक्षता खो देती है और किसी एक भूमिका के साथ न्याय करने में असमर्थ होती है। लेकिन लिंग के आधार पर काम के वितरण के बावजूद कुछ पुरुष घर के कामों में मदद करके अपने भागीदारों का समर्थन करने और मदद करने के लिए बहादुरी से सामने आए हैं।

बालिकाओं की स्कूली शिक्षा

बालिकाओं के शैक्षिक स्तर में सुधार युवा महिलाओं के स्वास्थ्य और आर्थिक भविष्य पर स्पष्ट प्रभाव डालने के लिए प्रदर्शित किया गया है, जो बदले में उनके पूरे समुदाय की संभावनाओं में सुधार करता है। जिन शिशुओं की

माताओं ने प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है, उनकी शिशु मृत्यु दर उन बच्चों की तुलना में आधी है जिनकी माताओं ने प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है, उन बच्चों की तुलना में आधी है जिनकी माताएं अशिक्षित हैं।

महिला शिक्षा में सुधार और इस प्रकार महिलाओं की कमाई की क्षमता, अपने बच्चों के लिए जीवन स्तर में सुधार करती है क्योंकि महिलाएं पुरुषों की तुलना में अपने परिवारों में अपनी आय का अधिक निवेश करती हैं।

जैसा कि महिलाओं ने अधिकार प्राप्त किए हैं, औपचारिक शिक्षा प्रगति का प्रतीक और लिंग समानता की ओर एक कदम बन गई है। सही लैंगिक समानता के अस्तित्व के लिए, एक समग्र दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

मलाला को गोली मारने का कारण केवल एक लड़की के रूप में खुद को शिक्षित करने के बारे में था। संयुक्त राज्य अमेरिका के हस्तक्षेप, गरीबी और सरकारी भ्रष्टाचार और अस्थिरता को संबोधित नहीं किया गया था।

भारत में महिला शिक्षा के इतिहास की जड़ें प्राचीन वैदिक युग में हैं।

"घर की नींव, निश्चित रूप से, पत्नी में है"- ऋग्वेद

वैदिक काल (लगभग 1500-1200 ईसा पूर्व) की महिलाएं बौद्धिक और आध्यात्मिक उपलब्धियों के प्रतीक थीं।

महिलाओं के रोजगार और शिक्षा को 1854 में ईस्ट इंडिया कंपनी के कार्यक्रम: वुड डिस्पैच द्वारा स्वीकार किया गया था। धीरे-धीरे, उसके बाद महिला शिक्षा में प्रगति हुई, लेकिन यह शुरू में प्राथमिक विद्यालय स्तर पर केंद्रित था और

समाज के अमीर वर्गों से संबंधित था। महिलाओं के लिए समग्र साक्षरता दर 1882 में 0.2% से बढ़कर 1947 में 6% हो गई।

पश्चिमी भारत में ज्योतिबा फुले और उनकी पत्नी सावित्री बाई महिला शिक्षा के अग्रदूत बन गए जब उन्होंने 1848 में पुणे में बालिकाओं के लिए एक स्कूल शुरू किया।

1878 में, कलकत्ता विश्वविद्यालय अपने डिग्री कार्यक्रमों में महिला स्नातकों को प्रवेश देने वाले पहले विश्वविद्यालयों में से एक बन गया, इससे पहले कि किसी भी ब्रिटिश विश्वविद्यालय ने बाद में ऐसा किया था।

1947 में भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद, शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए सुझावों की सिफारिश करने के लिए विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग बनाया गया था। जबकि , उनकी रिपोर्ट ने महिला शिक्षा के खिलाफ बात की, इसका उल्लेख करते हुए: "महिलाओं की वर्तमान शिक्षा उस जीवन के लिए पूरी तरह से अप्रासंगिक है जिसका उन्हें नेतृत्व करना है। यह न केवल एक बर्बादी है, बल्कि अक्सर एक निश्चित विकलांगता है।

जबकि , इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है कि स्वतंत्रता के बाद महिला साक्षरता दर 8.9% थी। इस प्रकार, 1958 में, सरकार द्वारा महिलाओं की शिक्षा पर एक राष्ट्रीय समिति नियुक्त की गई थी, और इसकी अधिकांश सिफारिशों को स्वीकार कर लिया गया था। इसकी सिफारिशों का सार महिला शिक्षा को लड़कों के समान स्तर पर लाना था।

इसके तुरंत बाद, समितियों का निर्माण किया गया जो शिक्षा के क्षेत्र में पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता के बारे में बात करते थे। शिक्षा आयोग 1964 में स्थापित किया गया था, जिसने बड़े पैमाने पर महिला शिक्षा के बारे

में बात की थी, जिसने सरकार द्वारा विकसित की जाने वाली एक राष्ट्रीय नीति की सिफारिश की थी। यह 1968 में हुआ जिसमें महिला शिक्षा पर अधिक जोर दिया गया।

आजादी से पहले और बाद में, भारत महिलाओं की स्थिति और शिक्षा की दिशा में सक्रिय कदम उठा रहा है। 86वां संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 विशेष रूप से महिलाओं के लिए शिक्षा के विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम रहा है। इस अधिनियम के अनुसार, 6 से 14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा एक मौलिक अधिकार है। सरकार ने इस शिक्षा को मुफ्त में प्रदान करने और उस आयु वर्ग के लोगों के लिए इसे अनिवार्य बनाने का काम किया है, जिसे सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) के रूप में जाना जाता है।

बालिका शिक्षा में असमानताऐ

यूनिसेफ के अनुसार, बालिकाओं को बुनियादी शिक्षा प्रदान करना उन्हें बहुत अधिक शक्ति देने का एक निश्चित तरीका है - उन्हें उन प्रकार के जीवन पर वास्तविक विकल्प बनाने में सक्षम बनाना जो वे जीना चाहते हैं। बाल अधिकारों पर सम्मेलन और महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन इसे एक बुनियादी मानव अधिकार के रूप में स्थापित करता है।

समाज के एक स्वस्थ और खुशहाल वर्ग यानी महिलाओं के लिए, बालिका शिक्षा को उसके उच्चतम स्तर तक बढ़ावा दिया जाना चाहिए। यह सही कहा गया है कि एक लड़के को शिक्षित करें और एक व्यक्ति को शिक्षित किया जाए और दूसरे पर एक लड़की को शिक्षित किया जाए और एक पूरे परिवार

को शिक्षित किया जाए। एक शिक्षित लड़की के पास कौशल और ज्ञान है कि वह विशेषज्ञता के साथ परिवार और बाहरी दुनिया दोनों का प्रबंधन कैसे कर सकती है। वह एक बेहतर बेटी, बहन, पत्नी, मां, विश्वासपात्र और नागरिक बन जाती है। एक शिक्षित महिला का समाज में योगदान अशिक्षित की तुलना में बढ़ जाता है। शिक्षा महिलाओं को उनके अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में अच्छी तरह से जागरूक करती है। हाल के वर्षों में प्रगति के बावजूद, बालिकाओं को अपने पूरे जीवन में शिक्षा प्रणालियों में गंभीर नुकसान और बहिष्कार का सामना करना पड़ता है।

बालिकाओं की शिक्षा में बाधाएं

जबकि लिंग भेद में सुधार हुआ है, लिंग असमानताओं और भेदभाव के आसपास बाधाएं और बाधाएं बनी हुई हैं, खासकर माध्यमिक विद्यालय स्तर पर और सबसे हाशिए वाले बच्चों के बीच। दुनिया भर में बालिकाओं की शिक्षा के लिए विभिन्न बाधाएं हैं, वे इस प्रकार हैं: –

1. **बालिकाओं की शिक्षा में उनकी आवश्यकता के अनुसार प्रतिरोध-** हमारे समाज में ऐसे समुदाय हैं जो अपनी बेटियों को सह-शैक्षणिक संस्थानों में भेजने में सहज नहीं हैं। जबकि वे चाहते हैं कि उनकी लड़कियां शिक्षित हों, लेकिन यह उन्हें ऐसा करने से रोकता है। इसके अलावा, बालिकाओं को कुछ दृष्टिकोणों में कुछ लचीलेपन की आवश्यकता होती है जैसे कि जब वे शादी करते हैं या गर्भवती होते हैं। सरकारी कार्यालयों में मातृत्व अवकाश होता है लेकिन शैक्षिक स्तर पर नहीं।

2. **बालिकाओं की शिक्षा के खिलाफ समाज द्वारा निर्धारित मानदंड-** समाज में अभी भी बालिकाओं की शिक्षा के महत्व के बारे में जागरूकता की कमी है। यह देखा गया है कि बालिकाओं को शिक्षित होने की आवश्यकता होती है ताकि वे योग्य लड़कों से शादी कर सकें या शिक्षण, नर्सिंग, टाइपिस्ट आदि जैसे महिला उन्मुख नौकरियों तक पहुंच सकें। माता-पिता को लगता है कि उच्च शिक्षा के लिए बालिकाओं को बढ़ावा देने से कई जटिलताएं और समस्याएं आती हैं। वे अपनी बेटियों को घर से दूर स्थानों पर नहीं भेजना चाहते हैं।
3. **स्कूल फीस और अन्य संबंधित खर्च-** जैसा कि उपरोक्त बिंदु में चर्चा की गई है कि कुछ माता-पिता अपनी बेटियों को बहुत अधिक शिक्षित करने में विश्वास नहीं करते हैं। उन्हें लगता है कि बालिकाओं की शिक्षा पर खर्च करना पैसे की बर्बादी है क्योंकि वे शादी के बाद दूसरे घर में चली जाएंगी। बेटों को पैसे के बारे में दूसरा विचार दिए बिना शिक्षित किया जाता है क्योंकि माता-पिता को लगता है कि वे बाद में बूढ़े होने पर उनकी देखभाल करेंगे। अगर फीस कम हो सकती है तो ऐसे अभिभावकों को अपनी बेटियों को पढ़ने के लिए भेजने में कोई आपत्ति नहीं होगी।
4. **सामाजिक संरचना और प्रथाएं**- यदि किसी परिवार के पास आय का सीमित स्रोत है और उन्हें अपने बच्चों को शिक्षित करना है तो बेटियों की तुलना में बेटों को प्राथमिकता दी जाती है। यदि आर्थिक स्थिति अनुमति देती है तो लड़कों को भी बेहतर (अंग्रेजी माध्यम / सार्वजनिक / कॉन्वेंट) स्कूलों में और बालिकाओं को सरकारी या हिंदी माध्यम के स्कूलों में भेजा जाता है। और हम सभी सरकारी स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा की स्थितियों और स्तर से अवगत हैं।

5. **अनुचित स्वच्छता सुविधाएं-** अगर हम सरकारी स्कूलों के बारे में बात करते हैं तो शौचालय हैं लेकिन स्वच्छता और स्वच्छता की कमी है। निजी और सार्वजनिक स्कूलों में सुविधाएं हैं लेकिन फिर शुल्क संरचना अधिक है। अर्ध-ग्रामीण और ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल जाने वाली बालिकाओं को अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। कुछ स्कूलों में शौचालय, पेयजल आदि जैसी बुनियादी सुविधाएं भी नहीं हैं। शौचालयों की कमी बालिकाओं को नियमित रूप से स्कूल जाने से रोकती है, विशेष रूप से मासिक धर्म वाली लड़कियां शिक्षा को बीच में ही छोड़ सकती हैं।
6. **स्कूल के अंदर और बाहर प्रतिकूल वातावरण-** बालिकाओं को स्कूल जाने के रास्ते में छेड़खानी, दुर्व्यवहार, अनुचित परिवहन सुविधाओं आदि जैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। ऐसी कठिनाइयों का सामना करने के बाद बालिकाओं को स्कूल में भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। शिक्षक का व्यवहार भेदभावपूर्ण, लड़कों का अपमानजनक व्यवहार, यौन भेदभाव या उत्पीड़न आदि हो सकता है।
7. **महिला शिक्षकों की कमी**- सरकारी नौकरी पाने वाली महिलाएं शहरों में स्थित स्कूलों में सेवा करना चाहती हैं। वे आंतरिक ग्रामीण स्कूलों में सेवा नहीं करना चाहते हैं। नतीजतन, इन स्कूलों में महिला शिक्षकों की कमी है और इससे बालिकाओं की शिक्षा प्रभावित होती है।
8. **परिवार की मांग-** जैसे-जैसे लड़कियां बढ़ती हैं, परिवार उनसे घर के काम सीखने की उम्मीद करता है। नतीजतन, काम का बोझ उनकी पढ़ाई से रुचि को दूर कर देता है। कुछ समुदायों में कम उम्र में विवाह भी बालिकाओं को शिक्षा के अधिकार से दूर करते हैं।

अकेले शिक्षा तक बालिकाओं की पहुंच इन संरचनात्मक बाधाओं को संबोधित नहीं कर सकती है, जिसके लिए परिवर्तनकारी दृष्टिकोण और रणनीतियों की आवश्यकता होती है जो बड़े पैमाने पर स्कूल और समाज में पुरुषों और महिलाओं के बीच भेदभाव और शक्ति संबंधों से निपटते हैं। यूनिसेफ लैंगिक समानता की अधिक व्यापक समझ की ओर स्थानांतरित हो गया है।

बालिका शिक्षा में प्रतिरोध

दुनिया भर में, शैक्षिक उपलब्धि लिंग के आधार पर भिन्न होती है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त करने की महिला की क्षमता को रोकने वाली बाधाओं में लिंग भूमिकाओं, गरीबी, भौगोलिक अलगाव, लिंग-आधारित हिंसा और प्रारंभिक विवाह और गर्भावस्था के प्रति पारंपरिक दृष्टिकोण शामिल हैं।दुनिया भर में अनुमानित 7 मिलियन अधिक लड़कियां लड़कों की तुलना में स्कूल से बाहर हैं। पुरुष पसंदीदा लिंग हैं और उन्हें कंप्यूटर और वैज्ञानिक शिक्षा में संलग्न होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जबकि महिलाएं घरेलू कौशल सीखती हैं। महिलाओं को कम से कम 15 देशों में हमले का खतरा दिखाया गया है। हमले हो सकते हैं क्योंकि उन देशों के भीतर व्यक्तियों का मानना नहीं है कि महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। हमलों में अपहरण, बमबारी, यातना, बलात्कार और हत्या शामिल हो सकते हैं। हम पाकिस्तानी लड़की 'मलाला' के मामले को कैसे भूल सकते हैं; जिसे उन कट्टरपंथियों ने गोली मार दी थी जो उसके शिक्षा लेने के खिलाफ थे।

यह सर्वविदित है कि कई विकासशील देशों में पहुंच और उपलब्धि में एक स्पष्ट लिंग भेद है। देशों के बीच कुल स्कूल नामांकन दर में भी व्यापक विसंगति है, विशेष रूप से लेकिन किसी भी तरह से केवल विकास के विभिन्न

स्तरों पर उन लोगों के बीच नहीं। स्कूली शिक्षा के कथित लाभों पर श्रम बाजार का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। जहां कई नौकरियां आरक्षित हैं – चाहे औपचारिक रूप से या अनौपचारिक रूप से, पुरुषों के लिए, जहां बेरोजगारी अधिक है और औपचारिक रोजगार का लिंग संतुलन दृढ़ता से पुरुष है और जहां श्रम बाजार में लिंग भेदभाव समान क्षमताओं और योग्यता वाले पुरुषों के सापेक्ष महिलाओं की औसत कमाई को कम करता है, स्कूली शिक्षा के कथित लाभ बालिकाओं की तुलना में लड़कों के लिए अधिक होंगे।

"मैं महिलाओं के अधिकारों के मामले में शामिल नहीं हूं। मेरी राय में उसे किसी भी कानूनी विकलांगता के अंतर्गत श्रम नहीं करना चाहिए, न कि पुरुषों द्वारा पीड़ित किया जाना चाहिए। मुझे बेटियों, बेटियों और बेटों के साथ पूर्ण समानता के स्तर पर व्यवहार करना चाहिए। – महात्मा गांधी, यंग इंडिया, 17-10'29

लिंग एक सामाजिक निर्माण है जो सभी समाजों में लड़कों और बालिकाओं , पुरुषों और महिलाओं के दृष्टिकोण, भूमिकाओं, जिम्मेदारियों और व्यवहार पैटर्न को प्रभावित करता है। लेकिन यह समाज से समाज में भिन्न हो सकता है। बालिकाओं की शिक्षा के खिलाफ प्रतिरोध भी समाज और समुदायों के भीतर भिन्न होते हैं। यह विकसित और विकासशील समाजों में संस्कृतियों में संचालित भेदभाव का सबसे स्थानिक रूप रहा है। शिक्षा में लिंग संबंधों के संदर्भ में सामाजिक परिवर्तन शुरू करने की अंतर्निहित क्षमता है। इसलिए, केंद्र और राज्य स्तर पर शिक्षा में लैंगिक समानता को संबोधित करने के लिए भारत सरकार द्वारा जागरूक और बहुलवादी हस्तक्षेप किए गए हैं। 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनपीई) और इसके संशोधित पीओए 1992 के अधिनियमन के साथ एक ऐतिहासिक पहल शुरू की गई थी। यह दर्शन राष्ट्रीय महिला

सशक्तिकरण नीति 2001 में भी परिलक्षित हुआ है। यह नीति शिक्षा के सभी स्तरों पर लैंगिक भेदभाव को दूर करने के लिए लिंग संवेदनशील पाठ्यक्रम को बढ़ावा देने पर केंद्रित है। राष्ट्रीय नीति के नए मसौदे में सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना सभी को प्रोत्साहित करने, शिक्षित करने और रोजगार देने पर जोर दिया गया है।

जबकि शिक्षा में लिंग संबंधी चिंताओं को एकीकृत करने पर बहुत सारे प्रयास किए गए हैं; वैश्वीकरण, उदारीकरण और सूचना प्रौद्योगिकी में विस्तार ने एक बार फिर एक महत्वपूर्ण विकास एजेंडे के रूप में सक्रिय तरीके से शिक्षा में लैंगिक चिंताओं की समीक्षा करना अनिवार्य बना दिया है। अब परिवार, समुदाय, स्कूल और कार्यस्थल आदि में लिंग संबंधों को प्रभावित करने वाले दृष्टिकोण, विश्वासों और व्यवहार पैटर्न को बदलने पर सक्रिय तरीके से प्रतिबिंबित करने और ध्यान केंद्रित करने की एक उभरती हुई आवश्यकता है। हाल ही में आशाजनक पहल राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान (आरएमएसए) है जो माध्यमिक स्तर पर शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने का प्रयास करता है। यह कार्यक्रम 2009 में शुरू हुआ था।

माध्यमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण को प्रभावी बनाने और लैंगिक अंतराल को पाटने के लिए बालिकाओं के लिए शिक्षा के इस स्तर पर उनकी भागीदारी बढ़ाने के लिए विशेष प्रावधान किए गए हैं। माध्यमिक शिक्षा के लिए बालिकाओं को प्रोत्साहन की एक राष्ट्रीय योजना 2008 में शुरू की गई थी।

i. इसमें उन सभी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की बालिकाओं को शामिल किया गया है जो आठवीं कक्षा उत्तीर्ण करती हैं और कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (चाहे वे अनुसूचित जाति या जनजाति

की हों) से कक्षा आठवीं की परीक्षा उत्तीर्ण करती हैं और शैक्षिक वर्ष 2008-09 के बाद से राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के सरकारी सहायता प्राप्त या स्थानीय निकाय स्कूलों में नौवीं कक्षा के लिए दाखिला लेती हैं।

ii. 3000/- रुपये की राशि फिक्स्ड डिपॉजिट के रूप में पात्र बालिकाओं के नाम पर जमा की जाती है। यह फंड बालिकाओं को उनकी शैक्षिक जरूरतों की मांगों को पूरा करने में मदद करता है।

iii. अन्य पहल माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों के लिए बालिका छात्रावास के निर्माण और प्रबंधन से संबंधित है। इस तरह स्कूल जाने के रास्ते में आने वाली कठिनाइयों को रोका जा सकता है और इससे बालिकाओं के समय और ऊर्जा की भी बचत होगी। साथ ही मासिक धर्म वाली बालिकाओं को होने वाली समस्याओं को रोका जा सकता है।

iv. केजीबीवी (कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय) से उत्तीर्ण होने वाली छात्राओं को छात्रावास में प्रवेश और आवास में वरीयता दी जाएगी। यह योजना बालिकाओं की शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए सरकार द्वारा खोले गए केजीबीवी में प्रवेश लेने के लिए बालिकाओं को प्रेरित करेगी।

v. बालिकाओं का नामांकन बढ़ाने के लिए स्कूलों में अधिक महिला शिक्षकों को काम पर रखा जा रहा है। साथ ही शिक्षकों के बीच लैंगिक संवेदनशीलता विकसित की जा रही है।

vi. बालिकाओं के लिए अलग शौचालय ब्लॉक की परिकल्पना की गई है। इससे स्कूलों में सुरक्षा की भावना आएगी साथ ही स्वच्छता के पहलू का भी ध्यान रखा जाएगा।

अध्याय - 6

लिंग और पाठ्यक्रम तथा प्रच्छन्न पाठ्यक्रम

पुस्तकें ज्ञान का महत्वपूर्ण भंडार होती हैं। पुस्तकों के बिना शिक्षा, विशेष रूप से पाठ्यक्रम आधारित पाठ्यपुस्तकों, की कल्पना किसी भी छात्र या शिक्षक द्वारा नहीं की जा सकती है। शिक्षक कक्षा में शिक्षण हेतु मार्गदर्शन के लिए इन पुस्तकों पर विश्वास करते हैं। यह पुस्तक छात्र एवं अभिभावक के लिए भी आवश्यक सामग्री के रूप में भी महत्वपूर्ण रहती हैं। पुस्तक उस क्षेत्र के विशेषज्ञों द्वारा लिखी और संपादित की जाती हैं; इसलिए हम आसानी से सामग्री पर विश्वास करते हैं और उस पर निर्भर रहते हैं। प्रकाशक, लेखक और संपादक यह सुनिश्चित करते हैं कि पुस्तक की भाषा सरल और आसानी से समझने योग्य हो।

इसके अतिरिक्त, किताबें सामाजिक परिवेश का हिस्सा हैं और वे सामाजिक वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित करने का प्रयास करती हैं। इस प्रौद्योगिकी के युग में शिक्षकों और छात्रों ने सामग्री के लिए इंटरनेट का भी प्रयोग करना शुरू कर दिया है लेकिन फिर भी इन्टरनेट पुस्तकों को प्रतिस्थापित नहीं कर सकता है। इसका कारण यह है कि इंटरनेट की तुलना में पुस्तकों की आयु लंबी होती है, इन का उपयोग हर पल कहीं भी किया जा सकता है या सहेजा जा सकता है लेकिन इन्टरनेट केवल इलेक्ट्रॉनिक यंत्र से या प्रिंटआउट निकाल के ही पढ़ा जा सकता है (जो मुद्रित या पुस्तक रूप ही हुआ)। इंटरनेट सामग्री के साथ समस्या यह है कि यह बहुत विशाल होते है तथा उसका उपयोग पूरी तरह से कर पाना या समझना की यह कितना उपयोगी होगा भी बहोत कठिन है। लेकिन आज की पीढ़ी इतनी तकनीकी है इसलिए वे इस पर अत्यधिक निर्भर होते जा रहे हैं। इसलिए इंटरनेट फ़ाइलों में प्रदर्शित सामग्री पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है। चूंकि पाठ ज्ञान के

महत्वपूर्ण स्रोत हैं, इसलिए यह ज़रूरी है कि वे समता और समानता के मुद्दों को सम्मिलित करें, क्योंकि समाज के सभी वर्गों के छात्र उन तक पहुंचते हैं।

पुस्तकें और लिंग

दुनिया भर में और भारतीय संदर्भ में पाठ्य सामग्री का लिंग सहित विभिन्न दृष्टिकोण से विश्लेषण किया गया है। पाठ्य सामग्री की लिंग के दृष्टिकोण से विश्लेषण करना यह जानने में सहायता करेगा–

- क्या पाठ्य सामग्री सभी विषय से संबंधित है, व पर्याप्त तरीके से पुरुषों और महिलाओं के योगदान और उपलब्धि को संबोधित करती है।
- यदि सामग्री में लैंगिक पूर्वाग्रह परिलक्षित हो रहा है।
- क्या पाठ्य वस्तु बढ़ते लड़कों और बालिकाओं को गुमराह तो नहीं कर रहा है।
- क्या पाठ्य पुस्तकें लिंग, जाति, वर्ग और धर्म और स्थान से संबंधित समाज के सभी वर्गों को जोड़ती हैं।
- क्या पुस्तक कुछ समुदाय में अभी भी प्रचलित खंडों की निंदा करती हैं और यह समझाती हैं कि उन्हें कैसे दूर किया जा सकता है|
- क्या शिक्षार्थियों के मध्य व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए प्रेरणा, सहायता व मार्गदर्शन कर रहा है
- क्या वे लिंग भेद, जाति, वर्ग, धर्म आदि के आधार पर संघर्ष के विभिन्न रूपों को संबोधित करने में सहायता करते हैं जो हमारे समाज में व्याप्त है।
- क्या वे महिलाओं की स्थिति के लिए अपमानजनक रूढ़ियों, मिथकों और गलत धारणाओं और प्रथागत प्रथाओं पर सवाल उठाने के लिए छात्र में आलोचनात्मक सोच को बढ़ावा देने के लिए संवेदनशील हैं।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया और लिंग संवेदीकरण

माध्यमिक स्तर पर पाठ्य सामग्री में विज्ञान, सामाजिक विज्ञान, भाषाओं और गणित से संबंधित उत्तम रूपरेखा होती है। इस स्तर पर यह महत्वपूर्ण है कि बच्चे विभिन्न विषयों में अंतर्निहित ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम हों □□□ लिंग परिपेक्ष से अपने परिवेश को समझने के लिए ज्ञान को लागू करें। इसके लिए विभिन्न विषयों के शिक्षण को अच्छी तरह से योजनाबद्ध किया जाना चाहिए और शिक्षक द्वारा कक्षाओं में अच्छी तरह से निष्पादित किया जाना चाहिए। शिक्षक और छात्रों को लैंगिक रूप से संवेदनशील होना चाहिए और सामग्री शिक्षण और सीखने में लैंगिक पूर्वाग्रह के बिना आगे बढ़ना चाहिए।

कक्षा में शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का छात्रों के व्यक्तित्व पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए कक्षा शिक्षण में एक शिक्षक द्वारा उपयोग की जाने वाली विधि और कार्यप्रणाली को शिक्षा के सभी क्षेत्रों से संबंधित होना चाहिए। इससे छात्रों के समग्र व्यक्तित्व विकास में सहायता मिलेगी। हम पहले ही बालिकाओं द्वारा सामना की जाने वाली विभिन्न लैंगिक बाधाओं पर चर्चा कर चुके हैं। इन बाधाओं को दूर करने के लिए व्याख्यान की पारंपरिक पद्धति के अतिरिक्त विभिन्न तरीकों को शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सम्मिलित किया जा सकता है। ये विधियां चर्चा, समस्या समाधान, प्रश्नोत्तरी, वाद-विवाद, परियोजना, प्रश्नों की जांच, विश्लेषणात्मक आदि हो सकती हैं। कक्षा, धर्म या लिंग अंतर के बावजूद छात्रों को शिक्षक और एक-दूसरे के साथ अपने संदेह और भ्रम को दूर करने में सहायता दी जानी चाहिए। केवल एक बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि कोई भी संवेगात्मक या भावनात्मक रूप से आहत न हो।

शिक्षण अंतर-अनुशासनात्मक और बहु-अनुशासनात्मक दोनों होना चाहिए। कोई भी विषय को पढ़ाते समय □□□□□□ लिंग संबंधी गतिविधियों को सम्मिलित कर सकते है। साथ ही लड़कों और बालिकाओं दोनों को अपने ज्ञान का प्रदर्शन करने के लिए समान अवसर दिए जाने चाहिए।

प्रच्छन्न या प्रच्छन्न पाठ्यक्रम

फिलिप डब्ल्यू जैक्सन द्वारा **1968** में गढ़ा गया '□□□□□□□□□ पाठ्यक्रम' शब्द ने कहा कि 'शिक्षा' समाजीकरण की एक प्रक्रिया थी, जिससे छात्रों को उनकी स्कूली शिक्षा के दौरान अंतर्निहित सीखने के दृश्य की अनुमति मिलती थी। वे मानदंड, मूल्य और सामाजिक संबंध जो अब तक प्रच्छन्न हुए थे और अक्सर स्कूली जीवन के स्पष्ट आयाम में बने रहे, अब सामने आए हैं और दिखाई देने लगे हैं। नए शिक्षाविदों के रचना के लिए "प्रच्छन्न पाठ्यक्रम" के समावेश का उपयोग इक्कीसवी शताब्दी के शैक्षिक सुधारों के आधार पर प्रस्तावित दक्षताओं को विकसित करने के लिए किया गया है।

शिक्षा का समाजशास्त्र 'प्रच्छन्न पाठ्यक्रम' को पाठ्यक्रम के गैर-स्पष्ट पहलुओं के रूप में परिभाषित करता है। पेरेनौद (**2004)** का मानना है कि इस प्रकार की प्रथाएं वास्तव में प्रच्छन्न नहीं हैं (इतनी छिपी हुई नहीं हैं); यह ज्ञात है कि स्कूल में आप समाज में रहना, एक अच्छा नागरिक बनना, गंभीरता से काम करना और सामान्य रूप से, सामाजिक वातावरण की रूढ़ियों का हिस्सा बनना सीखते हैं।

'प्रच्छन्न पाठ्यक्रम' मानदंड, मूल्य, विश्वास और व्यवहार के संचरण से संबंधित है जो या तो समाज के मौजूदा सामाजिक और सांस्कृतिक लोकाचार को मजबूत

करता है या उन पर सवाल उठाने और आलोचना करने का प्रयास करता है। यह हमारे देश भर में संचालित विविध स्कूली शिक्षा प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक है। यह कक्षाओं के भीतर और बाहर होने वाली सभी गतिविधियों का एक अभिन्न अंग है जो सीखे जाते हैं लेकिन खुले तौर पर दिखते नहीं है। प्रच्छन्न पाठ्यक्रम को प्रतिबिंबित करने वाली महत्वपूर्ण दृश्यमान साइटें, शैक्षणिक प्रक्रियाएं, कक्षा प्रबंधन और स्कूलों में होने वाली सभी पाठ्यचर्या गतिविधियां हैं।

अनपेक्षित शिक्षा शैक्षिक प्रशासकों, शिक्षकों, साथियों और अन्य कार्यकर्ताओं के साथ बातचीत से हो सकती है जो समग्र व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस अजीब तंत्र से प्राप्त ज्ञान न केवल छात्रों को प्रभावित करता है बल्कि सभी शिक्षा हितधारकों को भी प्रभावित करता है। यह संस्था के भीतर सभी व्यक्ति के लिए सीखने का एक स्रोत है और यह एक सांस्कृतिक का विनियोग पैदा करता है, जिसे कभी-कभी अनुनय और अन्य द्वारा 'अस्तित्व' की प्रतिक्रिया से प्राप्त किया जाता है।

प्रच्छन्न पाठ्यक्रम' में पर्यावरण, शैक्षणिक और प्रशासनिक संरचनाएं सम्मिलित हैं:

i. भौतिक वातावरण जब स्कूल के प्रदर्शन की बेहतरी के लिए परिस्थितियों के अनुकूल नहीं होता है तो यह संस्थान के नियंत्रण की नीतियों को विकृत करता है। पर्यावरण में प्रबंधन, प्रशासक, शिक्षाविद, अन्य कर्मचारी, छात्र, स्थान और इसकी आबादी आदि सम्मिलित हैं।

ii. लिंग संवेदीकरण के लिए अभिविन्यास कार्यक्रमों की अनुपलब्धता कई शिक्षकों के लैंगिक समानता व्यवहार में कमी बनाती है। सेवारत और प्रशिक्षु शिक्षकों के लिए कार्यशालाओं, संगोष्ठियों, चर्चाओं आदि का आयोजन करके लिंग संवेदीकरण सफलतापूर्वक किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, बीएड पाठ्यक्रम में मुख्य

पेपर के रूप में 'लैंगिक मुद्दे और मानवाधिकार' को सम्मिलित करना सराहनीय है।

iii. कभी-कभी यह देखा जाता है कि सेवारत शिक्षकों में खुद को पेशेवर रूप से अपग्रेड करने में रुचि की कमी होती है जिसके परिणामस्वरूप शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में ठहराव होता है, जो बच्चे के व्यक्तित्व विकास में बाधा डाल सकता है।

iv. यह भी देखा गया है कि नीतियां बनाते समय संस्थानों द्वारा शिक्षकों से परामर्श नहीं किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ नीति व्यावहारिक रूप से लागू होने पर विफल हो जाते हैं।

v. जब प्रशासन संस्थागत विकास कारणों के लिए प्रतिबद्ध नहीं है, लेकिन आत्मीयता, सहानुभूति, फैलोशिप, भाई-भतीजावाद जैसे अन्य मानदंडों के लिए प्रतिबद्ध है, तो संगठन के मिशन और दृष्टि के साथ छात्रों की पहचान विकृत हो सकती है।

इस में , फ्रीयर (**1973),** गिरौक्स और मैकलारेन (**1997) (**महत्वपूर्ण सिद्धांत के शैक्षणिक प्रमोटर), आवश्यक मानते हैं कि प्रभुत्व वाले शब्द को लें, और स्कूल को इसे बढ़ावा देना चाहिए; इससे भी अधिक, इस प्रत्योक्षकरण से और ' प्रच्छन्न पाठ्यक्रम' के शैक्षिक मॉडल में इसका समावेश पराधीन पहचानों के निर्माण में प्रभाव के विषय में जागरूक होने और सामाजिक चेतना की मुक्ति के लिए संघर्षों की नींव स्थापित करने की संभावना की अनुमति देता है।

शिक्षा के व्यवहार मॉडल के भीतर "दक्षताओं" की संरचना में, प्रच्छन्न पाठ्यक्रम 'एक विषय वस्तु' बन जाता है और 'दक्षताओं द्वारा मॉडल' के भीतर इसे एक

सामान्य एक्सियोलॉजी या दृष्टिकोण, आदतों, कौशल और व्यक्तिगत पूर्ति की व्यावहारिक श्रेणियों के क्षेत्र के रूप में माना जाता है।

लैंगिक और प्रछन्न पाठ्यक्रम

लिंग के संदर्भ में यह या तो लिंग के मध्य चल रहे असमान शक्ति संबंधों को बनाए रखता है, या इस पर सवाल उठाने के तरीकों को विकसित करने में सहायता करता है और इस तरह शिक्षा और प्रथाओं में लैंगिक समानता पर नीतियों के मध्य विरोधाभासों को संबोधित करने के लिए एक महत्वपूर्ण समानता एजेंसी बन जाता है। विभिन्न पहलू विभिन्न प्रकार के स्कूलों में संचालित प्रथाओं, प्रक्रियाओं, नियमों, संबंधों और संरचना हैं।

हाल के वर्षों में लिंग पर अनुसंधान विकसित किया गया है, उन्होंने लिंग के प्रच्छन्न पाठ्यक्रम (एचसीओजी) को स्पष्ट बना दिया है, जिसे विचारों, मूल्यों, अर्थ और विश्वासों के निर्माण से बने सेट के रूप में परिभाषित किया गया है जो पुरुषों और महिलाओं के मध्य संबंधों और सामाजिक प्रथाओं की संरचना, निर्माण और निर्धारण करते हैं (गोल्डबर्ग, **1973;** गोल्डबर्ग, **1973)** लेगार्ड, **1990;** लियो, **2000;** लामास, **2002)**। यह एचसीओजी निश्चेतक अवस्था में स्थित है।

एचसीओजी में यौन भूमिकाओं, कार्यों और व्यक्तिगत और सामाजिक अपेक्षाओं का निर्धारण करके व्यक्तिगत विकास की सांस्कृतिक स्थितियों को सम्मिलित और परिभाषित किया गया है और प्रत्येक सामाजिक कार्य की सफलता या विफलता को काफी हद तक प्रभावित करता है।

एचसीओजी, संस्कृति में अंतर्निहित होने के कारण, एक अचेतन तरीके से अधिग्रहित किया जाता है; और यह अवधारणाओं, मूल्यों को स्थापित, समर्थन और व्याप्त

करता है, एक प्रवचन रखता है जो खुद को शक्ति के रूप में स्थापित करता है।

प्रच्छन्न पाठ्यक्रम' मूल्यों, व्यवहार और व्यक्तिगत गुणों के क्षेत्रों में काम करता है। मूल्यों का महत्व इस संभावना में निहित है कि शिक्षकों और छात्रों को वैचारिक अवधारणाओं, वास्तविकता को देखने और हस्तक्षेप करने के विभिन्न तरीकों पर पुनर्विचार करना, विश्लेषण करना और स्वतंत्र रूप से चर्चा करना होगा, ताकि धीरे-धीरे एक उचित मानसिक ढांचे का निर्माण किया जा सके जो राजनीतिक और नैतिक स्वायत्तता में योगदान देता है, यानी अपनी नैतिकता के लिए, व्यक्ति की सभी घटनाओं पर लागू होता है।

हिडन करिकुलम ऑफ जेंडर (एचसीओजी) और स्कूल शिक्षा पर इसका प्रभाव

एचसीओजी, चूंकि यह पुरुषों और महिलाओं के व्यक्तित्व की संरचना का हिस्सा है, इसलिए लिंग रूढ़ियों में व्याप्त है, जैसे कि औरो केंद्रवाद (एंड्रो-सेंट्रिज्म) और पितृसत्ता; ये अदृश्य क्रियाएं हैं, और यह कि दिन के अंत में व्यक्तियों को अपने स्वयं के हित के प्रति आलोचनात्मक प्राणी बनने के लिए बदल दिया जाता है, जिससे उन्हें बदलती वास्तविकता तक पहुंच तक सीमित कर दिया जाता है।

शैक्षिक प्रक्रिया में, चरित्र का मॉडल तैयार किया जाता है, व्यवहार को परिभाषित किया जाता है, लेकिन यह मातृ गर्भ से होता है, जहां सवाल पूछने के लिए 'कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है', जहां लिंग आकृतियों का निर्माण शुरू होता है, लिंग का पाठ्यक्रम (सीओजी) औपचारिक और अनौपचारिक दोनों शिक्षा से निकटता से संबंधित है।

प्रच्छन्न पाठ्यक्रम में वास्तव में महत्वपूर्ण बात यह है कि छात्र 'कल्पना करते हैं' कि वे सीखते हैं कि शिक्षा मूल्यवान है जब इसे महत्वपूर्ण विश्लेषण के माध्यम से स्कूल में प्राप्त किया जाता है; इसके अतिरिक्त , सफलता की डिग्री जो व्यक्ति समाज में आनंद लेगा, उस ज्ञान की मात्रा पर निर्भर करता है जो वह उपभोग करता है; और यह कि दुनिया के विषयमें अर्जित ज्ञान दुनिया के ज्ञान से अधिक मूल्यवान है (फर्नांडीज, **1994)**।

इस उत्तर-आधुनिक समाज में, स्कूली शिक्षा संस्थानों में लिंग के परिप्रेक्ष्य को सम्मिलित करना एक तत्कालीन आवश्यकता है क्योंकि अभी भी शैक्षिक संस्थानों, कक्षाओं और ग्रंथों में, महिलाओं के लिए लिंगभेदी प्रथाएं अदृश्य हैं जो उन्हें पुरुषों की तुलना में महिलाओं की कथित हीनता पर पूर्वाग्रहों से भरी स्थिति में रखती हैं।

पुरुषों और महिलाओं के व्यक्तित्व के निर्माण में सबसे महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में स्कूल लिंग के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा के लिए प्राथमिक स्थान होना चाहिए और इस तरह से किसी भी प्रकार की सामाजिक असमानता को ठीक करने में सक्षम होना चाहिए।

इस परिदृश्य में, शैक्षिक संस्थानों का कार्य लिंग रूढ़ियों से रहित ज्ञान को प्रसारित करना है; छात्रों को एक गैर-लिंगवादी शिक्षा सिखाने और स्वतंत्र व्यक्तियों के रूप में व्यक्तियों के व्यक्तिगत विकास को प्राप्त करने के लिए।

लिंग के परिप्रेक्ष्य के साथ शिक्षा में एक नए व्यक्ति के नए व्यक्तित्व का गठन सम्मिलित है; लिंगों के मध्य समानता के आधार पर शिक्षित व्यक्ति, उन विकल्पों की तलाश करता है जो उन सेवाओं तक पहुंच की अनुमति देते हैं

जो भेदभाव या बहिष्करण के बिना समता के साथ एक शैक्षिक प्रणाली प्रदान करते हैं।

लिंग के दृष्टिकोण से एक शोध और एक सामाजिक जांच करने का अर्थ है संबंधों, उनके प्रतीकात्मक आदान-प्रदान, भाषा रूप आदि पर एक उद्देश्य विश्लेषण की प्राप्ति। लिंगों के मध्य ; इसमें इस विरोध को प्रभावित करने वाले कारकों की जांच सम्मिलित है; यह उन संस्थानों की संस्कृति में गहरा होता है जो इन नियमों को मंजूरी देते हैं या वैध बनाते हैं।

शैक्षणिक दृष्टिकोण से, मेक्सिको में, हम विश्वविद्यालयों में लिंग अध्ययन पर एक कुख्यात अनुपस्थिति पाते हैं; इसलिए विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाली महिलाओं की वर्तमान स्थिति को जानने के लिए एक शोध करना जरूरी है, ताकि उनकी तैयारी, प्रशिक्षण, रोजगार, स्वास्थ्य, उनके सामाजिक और पारिवारिक मुद्दों के संदर्भ में उनकी जरूरतों की पहचान की जा सके। उसी समय, इसे परिवर्तन का एक आंदोलन माना जाना चाहिए जो भेदभाव की कल्पना करता है और उनकी प्रथाओं को विकृत करता है; यह एक ऐसा आंदोलन होना चाहिए जो निंदा करता है, जो यथास्थिति को हटा देता है, जो काल्पनिक और सामाजिक परिपेक्ष के तंत्र पर परेशान करता है और हिचकिचाहट पैदा करता है। सामूहिक काल्पनिक के परिवर्तन में जीना सीखना ताकि जीवन जीने के एक नए तरीके का अनुभव किया जा सके जो "सदियों से लिंग असमानताओं को वैध बनाने वाले प्रतिमान के टूटने में विभिन्न दरारों" की कल्पना करने में सक्षम है (फर्नांडीज, **1994)**।

ये दो क्रियाएं एक प्रोपेलर के ब्लेड की तरह जुड़ी हुई हैं जिसमें आत्म-छवि का संशोधन और संवेदनशीलता के परिवर्तन में बदलाव, सोचने के तरीके में, जीने के तरीके और यहां तक कि सपने देखने का तरीका सम्मिलित है।

इस कार्य के लिए वर्गीकरण के कुछ मानदंडों की आवश्यकता होती है; चूंकि दृश्य के क्षेत्र और काल्पनिक के मध्य मौजूदा संबंध का खुलासा करना आवश्यक है; एक विशिष्ट अनुशासन में क्या नहीं देखा जा सकता है, हालांकि यह सिद्धांत की संरचना और इसमें अंतर्निहित सामाजिक प्रथाओं द्वारा निर्धारित किया जाता है।

यह महत्वपूर्ण है कि पुरुष और महिला शिक्षक दोनों, अपने छात्रों के साथ भेदभाव के लिंग विकल्प तैयार करें और इन मतभेदों को तर्क और समझाया जाए। दूसरे, परिवार में, यह वह जगह है जहां लिंग के महत्व को परिभाषित किया गया है; इसलिए यह आवश्यक है कि अधिक न्यायसंगत जीवन जीने के लिए लिंग के परिप्रेक्ष्य में पारिवारिक प्रथाओं को स्थापित किया जाए।

बुनियादी प्रक्रियाओं में से एक जिसके द्वारा सीओजी स्थापित किया जाता है, शिक्षकों की अपने इतिहास को पहचानने में असमर्थता के कारण है; शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया में अपने व्यक्तिगत सीखने के अनुभवों पर विचार न करने में विफलता; मूल्यों, दृष्टिकोण, व्यवहार और सामाजिक कौशल के प्रजनन में अकेली जागरूकता के अतिरिक्त ; इससे यह होता है कि शिक्षण का अभ्यास एक आवश्यक आलोचनात्मक दृष्टिकोण के बिना होना चाहिए; इसलिए, शिक्षा वास्तव में व्यक्तिगत और सामाजिक परिवर्तन के लिए एक समर्थन के रूप में नहीं माना जा सकता है।

सुझाव

• शिक्षा को आज प्रच्छन्न पाठ्यक्रम में लिंग के योगदान को एकीकृत करना चाहिए, या तो प्रच्छन्न पाठ्यक्रम के रूप में शास्त्रीय अवधारणाओं के माध्यम से या दक्षताओं के मॉडल में इसके परिवर्तन से।

• सह-संबंध एक तीसरी पहचान (यूनिसेक्स) में बनाया गया है जो वास्तविक दैनिक जीवन में होने वाले विशिष्ट मतभेदों को नष्ट कर देता है।

• इसे उन गलत प्रस्तुतियों पर गूढता से ध्यान दिया जाना चाहिए जिन्हें सबसे अनैतिक, अन्यायपूर्ण और खतरनाक रणनीतियों के रूप में समझा जाता है, क्योंकि वे केवल चुनिंदा ग्रंथों को विवेकपूर्ण रेखाओं के ढांचे के भीतर प्रस्तुत करते हैं जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, जातीय, भाषाई और लिंग असमानताओं को वैध बनाने का काम करते हैं (जुरजो टोरेस, **2011);** सत्ता की सामाजिक संरचनाओं ने एक स्किज़ोफ्रेनिक और झूठी चेतना पैदा की है।

प्रच्छन्न पाठ्यक्रम कक्षाओं में प्रेषित ज्ञान के आंतरिककरण की प्रक्रियाओं से संबंधित ज्ञान है जो छात्रों में समझ के पैटर्न बनाता है, लेकिन ये ऐसी प्रक्रियाएं हैं जो केवल आंशिक रूप से नियंत्रित होती हैं। परिवार पारंपरिक स्त्रीत्व और मर्दानगी की अवधारणा को बढ़ावा देता है और सुदृढ़ करता है और परिणामस्वरूप पितृसत्ता की संस्कृति को पुन: पेश करता है। स्कूल और परिवार दो उदाहरण हैं जो लिंग असमानताओं के विरोधाभासों को वैध बनाते हैं। अपने पितृसत्ता के साथ अपने प्रच्छन्न पाठ्यक्रम और परिवार के साथ स्कूलों को जागने और लिंग की भूमिकाओं और रूढ़ियों की कल्पना शुरू करने की आवश्यकता है।

अध्याय - 7

मानव अधिकार

मानवाधिकार: परिभाषा, प्रकृति, आवश्यकता और महत्व

जब मनुष्य पृथ्वी पर उभरे, तो उन्होंने समान गरिमा और अस्तित्व के साथ ऐसा किया। ये नैतिक दावे अंतर्निहित और अविभाज्य हैं, प्रत्येक व्यक्ति का संबंध उनकी मानवता के आधार पर है, चाहे उनका सामाजिक वर्ग, जाति, पंथ, रंग, जन्म, लिंग, संस्कृति, धर्म आदि कुछ भी हो। पूरे इतिहास में, मानव जाति अन्याय, शोषण और अनादर के खिलाफ निरंतर संघर्ष में लगी रही है। न्यायमूर्ति वी.आर. कृष्णा अय्यर ने अपनी पुस्तक "ह्यूमन राइट्स एंड इनह्यूमन रॉन्स" में ठीक ही कहा है, "आखिरकार, मानव अधिकारों को एक व्यवहार्य वास्तविकता बनाने के लिए मानवता की इतिहास के प्रति प्रतिबद्धता है।"

मानवाधिकार में नैतिक सिद्धांत या मानदंड शामिल हैं जो मानव व्यवहार के कुछ मानकों को परिभाषित करते हैं। इन्हें राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत कानूनी अधिकारों के रूप में व्यापक रूप से मान्यता प्राप्त और संरक्षित किया गया है। मानवाधिकारों को आमतौर पर सभी व्यक्तियों में उनके मानव होने के आधार पर निहित मौलिक अधिकारों के रूप में समझा जाता है। वे सार्वभौमिक और समतावादी हैं, राष्ट्रीयता, स्थान, भाषा, धर्म, जातीय मूल या किसी अन्य स्थिति के बावजूद सभी पर लागू होते हैं। मानवाधिकार सहानुभूति, कानून के शासन की मांग करते हैं और व्यक्तियों पर दूसरों के अधिकारों का सम्मान करने का दायित्व डालते हैं। विशिष्ट परिस्थितियों में उचित प्रक्रिया के अलावा उन्हें हटाया नहीं जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, मानवाधिकारों में गैरकानूनी कारावास, यातना और फांसी से मुक्ति शामिल हो सकती है।

"सही" शब्द का सटीक अर्थ चल रही दार्शनिक बहस का विषय है। हालाँकि इस बात पर आम सहमति है कि मानवाधिकारों में निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार, दासता के खिलाफ सुरक्षा, नरसंहार पर रोक, बोलने की स्वतंत्रता और शिक्षा का अधिकार जैसे कई प्रकार के अधिकार शामिल हैं, लेकिन इस बात पर असहमति है कि किन विशिष्ट अधिकारों को शामिल किया जाना चाहिए मानवाधिकारों के व्यापक ढांचे के भीतर। कुछ लोगों का तर्क है कि मानवाधिकारों को सबसे गंभीर दुरुपयोग को रोकने के लिए न्यूनतम आवश्यकता के रूप में काम करना चाहिए, जबकि अन्य इसे उच्च मानक के रूप में देखते हैं।

डॉ. न्यायमूर्ति दुर्गा दास बसु मानवाधिकारों को "उन न्यूनतम अधिकारों के रूप में परिभाषित करते हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव परिवार का सदस्य होने के नाते, किसी भी विचार की परवाह किए बिना, राज्य या अन्य निजी प्राधिकारी के विरुद्ध प्राप्त होने चाहिए।" बेनेट कहते हैं, "मानवाधिकारों में व्यक्तिगत या समूह की स्वतंत्रता के वे क्षेत्र शामिल हैं जिन्हें सरकारी हस्तक्षेप से बचाया जाता है क्योंकि वे मानव गरिमा या कल्याण में आवश्यक योगदान देते हैं, जो सरकारी गारंटी, पदोन्नति या सुरक्षा के अधीन हैं।"

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (1948) मानवाधिकारों को "मानव व्यक्ति की अंतर्निहित गरिमा से प्राप्त अधिकार" के रूप में परिभाषित करती है।

मानवाधिकार से तात्पर्य उन बुनियादी अधिकारों और स्वतंत्रता से है जिसके सभी मनुष्य हकदार हैं। इनमें जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और कानून के समक्ष समानता जैसे नागरिक और राजनीतिक अधिकार शामिल हैं। इनमें सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक अधिकार भी शामिल हैं, जिनमें संस्कृति में भाग लेने का अधिकार, काम करने का अधिकार और शिक्षा का अधिकार शामिल

है। मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति की भलाई और गरिमा सुनिश्चित करने के लिए एक मौलिक ढांचे के रूप में कार्य करता है।

मानवाधिकार की प्रकृति

i. मानवाधिकार अपरिहार्य हैं

सामाजिक, जैविक, नैतिक, भौतिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों जैसे विभिन्न पहलुओं में मानवता की भलाई और प्रगति के लिए मानवाधिकार आवश्यक हैं। वे सभी परिस्थितियों में व्यक्तियों की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक हैं।

ii. मानवाधिकार गरिमा को कायम रखते हैं

प्रत्येक व्यक्ति समान अधिकार और सम्मान के साथ पैदा होता है। किसी के आत्मसम्मान को ठेस पहुंचाने वाले कृत्य अस्वीकार्य हैं। उदाहरण के लिए, किसी अन्य व्यक्ति के मल को जबरदस्ती ले जाने या हाथ से रिक्शा खींचने पर रोक लगाने के लिए कानून बनाए गए हैं, जो कभी ब्रिटिश काल में प्रचलित थे।

iii. मानवाधिकार सार्वभौमिक हैं

मानव अधिकारों में अंतर्निहित मूल्य, जैसे देवत्व, गरिमा, गौरव, निष्पक्षता और समानता, मानव स्वभाव में अंतर्निहित हैं। वे कुछ चुनिंदा लोगों या किसी विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग का विशेषाधिकार नहीं हैं। मानवाधिकार सभी व्यक्तियों के लिए हैं और उनके लिए फायदेमंद हैं।

iv. मानवाधिकार पूर्ण नहीं हैं

हालाँकि मानवाधिकार महत्वपूर्ण हैं, लेकिन उनकी सीमाएँ भी हैं। वे कानून के शासन के अधीन हैं और उनका दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए। उनका उद्देश्य समाज के भीतर व्यक्तियों की सुरक्षा सुनिश्चित करना है, जिससे वे सम्मानित इंसान के रूप में अपने अस्तित्व का आनंद ले सकें।

v. मानवाधिकार बिना शर्त हैं

ये अधिकार सशर्त या किसी व्यक्ति की पृष्ठभूमि पर निर्भर नहीं हैं। प्रत्येक व्यक्ति, अपनी परिस्थितियों की परवाह किए बिना, बिना किसी हस्तक्षेप के इन अधिकारों का आनंद लेने का हकदार है। कोई भी शक्तिशाली संस्था इन अधिकारों का उल्लंघन नहीं कर सकती, क्योंकि इनका उद्देश्य सभी मनुष्यों की भलाई है। इन अधिकारों का प्रयोग करने के लिए किसी शर्त, श्रेणी, आरक्षण या योग्यता की आवश्यकता नहीं है।

vi. मानवाधिकार अनुकूली हैं

नए विकास के कारण समय के साथ सामाजिक मानदंड विकसित होते हैं, और मानवाधिकारों को तदनुसार अनुकूलित होना चाहिए। उदाहरण के लिए, रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डे, बैंक, स्कूल आदि जैसे सार्वजनिक स्थानों पर अब विकलांग लोगों के लिए सुविधाएं प्रदान करना आवश्यक है। समाज की आवश्यकताओं के आधार पर नए कानूनी अधिकार सामने आते हैं। समाज में सामाजिक-आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास के साथ-साथ मानवाधिकारों का विस्तार होता है।

vii. मानवाधिकार अपरिवर्तनीय हैं

स्थितियों, स्थानों या मानदंडों के बावजूद, ये अधिकार प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान हैं। उन्हें किसी विशेष समूह के पक्ष में बदला या संशोधित नहीं किया जा सकता है। उन्हें मूल रूप से तैयार और प्रारूपित किए जाने के अनुसार ही लागू किया जाना चाहिए।

viii. राजनीतिक शक्तियों द्वारा मानवाधिकारों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता

किसी भी राज्य या देश को किसी भी मानव अधिकार को कम करने या समाप्त करने का अधिकार नहीं है। संयुक्त राष्ट्र किसी भी राजनीतिक शक्ति को इन अधिकारों में हस्तक्षेप करने से रोकता है। जैसा कि चर्चा की गई है, मानवाधिकार सभी व्यक्तियों के लिए मौलिक अधिकार हैं, और सभी सरकारें इन सिद्धांतों को बनाए रखने और उनका पालन करने के लिए बाध्य हैं।

मानवाधिकारों का वर्गीकरण एवं महत्व

मानवाधिकारों को पाँच श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:

i. नागरिक मानवाधिकार
ii. राजनीतिक मानवाधिकार
iii. आर्थिक मानवाधिकार
iv. सामाजिक एवं सांस्कृतिक मानवाधिकार
v. विकासोन्मुख मानव अधिकार

नागरिक और राजनीतिक मानवाधिकार, जिन्हें "स्वतंत्रता-उन्मुख मानवाधिकार" या "नीले अधिकार" के रूप में भी जाना जाता है, राज्य और उसकी एजेंसियों के खिलाफ व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करते हैं। उन्हें मानवाधिकारों की पहली पीढ़ी माना जाता है।

अल्पसंख्यकों के अधिकारों सहित आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक मानवाधिकारों को सामूहिक रूप से "सुरक्षा-उन्मुख मानवाधिकार" या "लाल अधिकार" के रूप में जाना जाता है। वे मानवीय गरिमा और व्यक्तियों के पूर्ण विकास के लिए आवश्यक हैं। उन्हें मानवाधिकारों की दूसरी पीढ़ी माना जाता है।

विकास-उन्मुख मानवाधिकार, जिसे "हरित अधिकार" या "एकजुटता अधिकार" के रूप में भी जाना जाता है, **20**वीं सदी के अंत में उभरा। वे सर्वांगीण विकास में व्यक्ति की भागीदारी को बढ़ावा देते हैं और इसमें पर्यावरणीय अधिकार शामिल हैं जो स्वच्छ हवा, पानी, भोजन और प्राकृतिक संसाधनों तक पहुंच सुनिश्चित करते हैं। वे अंतर्राष्ट्रीय सहयोग पर निर्भर हैं और मानवाधिकारों की तीसरी पीढ़ी माने जाते हैं।

मानवाधिकारों की आवश्यकता और महत्व

मानवाधिकारों की आवश्यकता और महत्व को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है:

i. वे सभी के लिए आवश्यक हैं, क्योंकि वे मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता की गारंटी देते हैं।
ii. वे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त और संरक्षित हैं, जिससे उनका सार्वभौमिक अनुप्रयोग सुनिश्चित होता है।

iii. वे मानवीय गरिमा को नुकसान पहुंचने से रोकते हैं और व्यक्तियों को दुर्व्यवहार से बचाते हैं।

iv. वे किसी व्यक्ति के आंतरिक मूल्य की रक्षा करते हैं और उनकी गरिमा का उल्लंघन होने से रोकते हैं।

v. वे समानता को बढ़ावा देते हैं और किसी भी आधार पर भेदभाव पर रोक लगाते हैं।

vi. वे जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित करते हुए व्यक्तियों और सरकार के बीच संबंध स्थापित करते हैं।

vii. वे स्वतंत्र समान पहुंच प्रदान करते हैं और व्यक्तियों के हितों की रक्षा करते हैं।

viii. वे समाज के उत्पीड़ित, हाशिये पर पड़े और आवाजहीन सदस्यों का समर्थन और वकालत करते हैं।

ix. वे एक ऐसे समुदाय को बढ़ावा देते हैं जो विविधता को अपनाता है और सभी व्यक्तियों के अधिकारों का सम्मान करता है।

x. वे मानव अधिकारों की संस्कृति को प्रोत्साहित करते हुए सामाजिक प्रथाओं, व्यवहारों और दृष्टिकोणों को आकार देते हैं।

xi. वे व्यक्तियों को उनके जीवन के तरीके, आत्म-अभिव्यक्ति और राजनीतिक भागीदारी के बारे में विकल्प चुनने के लिए सशक्त बनाते हैं।

xii. वे भोजन, आवास और शिक्षा जैसी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए आवश्यक साधनों की गारंटी देते हैं।

xiii. जीवन, स्वतंत्रता, समानता और सुरक्षा की रक्षा करके, मानवाधिकार व्यक्तियों को सत्ता के पदों पर बैठे लोगों द्वारा दुर्व्यवहार से बचाता है।

मानवाधिकार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

मानवाधिकार की अवधारणा सदियों से विकसित हुई है, जिसकी जड़ें प्राचीन सभ्यताओं से जुड़ी हैं। कुछ अधिकारों की रक्षा करने वाले लिखित कानूनों के शुरुआती उदाहरणों में से एक हम्मुराबी के कोड में पाया जा सकता है, जिसमें

- उचित मजदूरी,
- संपत्ति संरक्षण और
- निष्पक्ष परीक्षण का अधिकार जैसे क्षेत्र शामिल थे।

मानव अधिकारों की नींव प्राचीन विचार और दार्शनिक अवधारणाओं जैसे "प्राकृतिक कानून" और "प्राकृतिक अधिकार" में खोजी जा सकती है। सार्वभौमिक नैतिक आचरण के शुरुआती समर्थक प्लेटो और अरस्तू, जिन्होंने माना कि अधिकार विभिन्न परिस्थितियों और राजनीतिक नियमों के अनुसार बदलते हैं, ने इन विचारों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सोफोकल्स राज्य के ख़िलाफ़ अभिव्यक्ति और राय की स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले पहले लोगों में से थे। मानवाधिकारों की उत्पत्ति ग्रीको-रोमन प्राकृतिक कानून सिद्धांतों "स्टोइज़िज्म" में भी पाई जा सकती है, जिसे थॉमस हॉब्स और जॉन लॉक जैसे विचारकों द्वारा आगे विकसित किया गया है।

वर्ष 1215 में, इंग्लैंड के राजा जॉन ने राजशाही के मनमाने कृत्यों के खिलाफ सुरक्षा के रूप में अंग्रेजी बैरनों को मैग्ना कार्टा प्रदान किया। इसने विभिन्न अधिकारों की गारंटी दी, जिनमें

- भूमि या संपत्ति की जब्ती पर रोक,
- कानून का सम्मान,

- निष्पक्ष सुनवाई,
- उपयुक्त कराधान और
- यात्रा का अधिकार शामिल है।

1297 में अंग्रेजी संसद द्वारा मैग्ना कार्टा की पुष्टि की गई, 1628 में अधिकारों की याचिका द्वारा इसे मजबूत किया गया, और 1689 में अधिकारों के विधेयक और बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम द्वारा इसे और मजबूत किया गया।

1776 में वर्जीनिया अधिकारों की घोषणा ने स्वतंत्रता और आजादी पर जोर देते हुए सभी व्यक्तियों की समानता और अंतर्निहित अधिकारों की घोषणा की। इसी प्रकार, 1789 में मनुष्य और नागरिक के अधिकारों की फ्रांसीसी घोषणा का उद्देश्य कानूनी प्रावधानों के माध्यम से मानव अधिकारों की रक्षा करना था।

"मानव अधिकार" शब्द 1798 में थॉमस पेन द्वारा गढ़ा गया था, लेकिन इसका वैचारिक विस्तार हेनरी डेविड थोरो ने अपने ग्रंथ "सिविल डिसओबिडिएंस" में किया। 19वीं शताब्दी तक, मानवाधिकारों को लागू करने के प्रयासों को अक्सर राज्य संप्रभुता की अवधारणा के लिए चुनौती के रूप में देखा जाता था। हालाँकि, द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान नाज़ियों द्वारा किए गए अत्याचारों ने शांति को बढ़ावा देने और मानवाधिकारों की रक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों की स्थापना को मजबूर किया।

प्रथम जिनेवा कन्वेंशन (1864)

1864 में जिनेवा, स्विट्जरलैंड में सोलह यूरोपीय देशों और कई अमेरिकी राज्यों की भागीदारी के साथ एक राजनयिक सम्मेलन आयोजित किया गया था। जिनेवा समिति

द्वारा शुरू और स्विस फेडरल काउंसिल द्वारा आयोजित इस सम्मेलन का उद्देश्य युद्ध में घायल सैनिकों के इलाज के लिए एक सम्मेलन को अपनाना था।

कन्वेंशन ने प्रमुख सिद्धांतों की स्थापना की जिन्हें बाद के जिनेवा कन्वेंशन में बरकरार रखा गया और विस्तारित किया गया। इन सिद्धांतों में घायल और बीमार सैन्य कर्मियों को बिना किसी भेदभाव के देखभाल प्रदान करने का दायित्व और चिकित्सा कर्मियों के परिवहन और उपकरणों को सफेद पृष्ठभूमि पर लाल क्रॉस के विशिष्ट प्रतीक के साथ चिह्नित करने की आवश्यकता शामिल है।

1939 से 1945 तक चले द्वितीय विश्व युद्ध के विनाशकारी प्रभाव ने यूरोप और एशिया भर के शहरों को खंडहर बना दिया। लाखों लोगों की जान चली गई, जबकि कई लोग विस्थापित हो गए या भुखमरी का सामना करना पड़ा। जर्मनी की बमबारीग्रस्त राजधानी बर्लिन में, रूसी सेनाएँ जर्मन प्रतिरोध के अवशेषों की ओर बढ़ रही थीं। इस बीच, प्रशांत क्षेत्र में, अमेरिकी नौसैनिकों ने ओकिनावा जैसे द्वीपों पर मजबूत जापानी सेनाओं से लड़ाई जारी रखी।

अप्रैल 1945 में, पचास देशों के प्रतिनिधि आशावाद और आशा की भावना के साथ सैन फ्रांसिस्को में एकत्र हुए। अंतर्राष्ट्रीय संगठन पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का उद्देश्य शांति को बढ़ावा देने और भविष्य के युद्धों को रोकने के लिए समर्पित एक अंतर्राष्ट्रीय निकाय की स्थापना करना था। संगठन के आदर्शों को इसके प्रस्तावित चार्टर की प्रस्तावना में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया था, जिसमें भविष्य की पीढ़ियों को युद्ध के विनाशकारी प्रभाव से बचाने के लिए "हम संयुक्त राष्ट्र के लोग" के दृढ़ संकल्प की पुष्टि की गई थी, जिसने उनके जीवनकाल में अत्यधिक दुःख का कारण बना था।

नवगठित संयुक्त राष्ट्र संगठन का चार्टर 24 अक्टूबर, 1945 को लागू हुआ, इस तिथि को प्रतिवर्ष "संयुक्त राष्ट्र दिवस" के रूप में मनाया जाता है। इस चार्टर ने वैश्विक

चुनौतियों से निपटने और दुनिया भर में शांति और सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और सामूहिक प्रयासों की रूपरेखा प्रदान की।

मानव अधिकारों का सार्वजनिक घोषणापत्र

6 जनवरी, 1941 को अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट ने घोषणा की कि "स्वतंत्रता का अर्थ हर जगह मानवाधिकारों की सर्वोच्चता है।" इसके बाद, 14 अगस्त, 1941 को रूजवेल्ट और ब्रिटेन के प्रधान मंत्री विंस्टन चर्चिल ने एक संयुक्त घोषणा जारी की जिसमें स्पष्ट रूप से "मानवाधिकार" शब्द का इस्तेमाल किया गया था। कुछ सदस्य देशों ने मानवाधिकारों पर मजबूत प्रावधानों के लिए समर्थन व्यक्त किया। संयुक्त राष्ट्र चार्टर में मानव अधिकारों पर एक महत्वपूर्ण अध्याय शामिल है, जिसमें प्रस्तावना और अनुच्छेद 1, 13 (बी), 55, 56, 62 (2), 68 और 76 (सी) में विभिन्न प्रावधान शामिल हैं।

i. संयुक्त राष्ट्र चार्टर की प्रस्तावना इस कथन से शुरू होती है, "हम संयुक्त राष्ट्र के लोग मौलिक मानवाधिकारों, मानव व्यक्ति की गरिमा और मूल्य, पुरुषों और महिलाओं और राष्ट्रों के समान अधिकारों में विश्वास की पुष्टि करने के लिए दृढ़ हैं। बड़े और छोटे।"
ii. अनुच्छेद 1 (पैराग्राफ- 3), जाति, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर किसी भी भेदभाव के बिना मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के लिए सम्मान को बढ़ावा देने और प्रोत्साहित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य पर जोर देता है।
iii. अनुच्छेद 13 महासभा को बिना किसी भेदभाव के मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता को साकार करने के लिए अध्ययन शुरू करने और सिफारिशें करने का अधिकार देता है।

iv. अनुच्छेद 55 बिना किसी भेदभाव के मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के प्रति सम्मान को बढ़ावा देने की संयुक्त राष्ट्र की जिम्मेदारी को रेखांकित करता है।
v. अनुच्छेद 56 अनुच्छेद 55 में उल्लिखित उपलब्धियों को साकार करने में संगठन के साथ सहयोग करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों की प्रतिबद्धता पर प्रकाश डालता है।
vi. अनुच्छेद 62 आर्थिक और सामाजिक परिषद को सभी के लिए मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के सम्मान और पालन को बढ़ावा देने के लिए सिफारिशें करने का अधिकार देता है।
vii. अनुच्छेद 68 मानवाधिकारों को बढ़ावा देने के लिए आर्थिक और सामाजिक परिषद पर आयोगों की स्थापना पर जोर देता है।
viii. अनुच्छेद 76, पैराग्राफ (सी), मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के लिए सम्मान को प्रोत्साहित करने का मूल उद्देश्य बताता है।

हालाँकि संयुक्त राष्ट्र चार्टर में मानव अधिकारों पर कोई विशिष्ट चार्टर शामिल नहीं था, फिर भी 10 दिसंबर, 1948 को मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा (यूडीएचआर) को अपनाया गया, जिसे "अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार दिवस" के रूप में मनाया जाता है।

यूडीएचआर सभी व्यक्तियों के लिए मौलिक अधिकारों की एक श्रृंखला की रूपरेखा तैयार करता है, चाहे उनका लिंग, जाति, भाषा, धर्म, मूल, या किसी अन्य श्रेणी का कुछ भी हो। जबकि कई संयुक्त राष्ट्र सदस्य देशों ने यूडीएचआर को अपनाया है, यह राज्यों पर वैधानिक दायित्व नहीं थोपता है क्योंकि इसमें कानूनी अधिकार का अभाव है।

1948 से 1966 तक की बाद की बातचीत मानव अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय चार्टर में परिणत हुई, जिसमें विभिन्न पहलुओं को संबोधित किया गया,

- जिसमें भेदभाव के विरुद्ध लड़ाई,
- युद्ध अपराध,
- राज्य हिरासत में व्यक्तियों की सुरक्षा,
- विकलांग व्यक्तियों के अधिकार,
- महिलाओं के राजनीतिक और सामाजिक अधिकार,
- आतंकवाद विरोधी प्रयास,
- सांस्कृतिक सहयोग,
- मानवाधिकारों को बढ़ावा देना,
- अंतर्राष्ट्रीय शांति और मानव जाति की भलाई शामिल थे। ।

मानवाधिकार का प्रसार

मानवाधिकार की अवधारणा बेबीलोन में उत्पन्न हुई और तेजी से भारत, ग्रीस और अंततः रोम तक फैल गई। इन समाजों में, "प्राकृतिक कानून" का विचार उभरा, यह मानते हुए कि लोग स्वाभाविक रूप से अपने जीवन में कुछ अलिखित कानूनों का पालन करते हैं। रोमन कानून, विशेष रूप से, चीजों की प्रकृति से प्राप्त तर्कसंगत विचारों पर आधारित था।

मानवता के लिए एक महत्वपूर्ण प्रगति तब हुई जब प्राचीन फारस के पहले राजा साइरस महान ने 539 ईसा पूर्व में बेबीलोन पर विजय प्राप्त की। अपने बाद के कार्यों में, उन्होंने दासों को मुक्त कराया, लोगों को अपना धर्म चुनने का अधिकार घोषित किया और नस्लीय समानता स्थापित की। ये उद्घोषणाएं साइरस सिलेंडर पर दर्ज की गईं, जो एक पकी हुई मिट्टी का सिलेंडर है जिस

पर अक्काडियन भाषा में क्यूनिफॉर्म लिपि अंकित है। आज, साइरस सिलेंडर को दुनिया के पहले मानवाधिकार चार्टर के रूप में मान्यता प्राप्त है और इसका संयुक्त राष्ट्र की सभी छह आधिकारिक भाषाओं में अनुवाद किया जाता है। इसके प्रावधान मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के पहले चार अनुच्छेदों के अनुरूप हैं।

पूरे इतिहास में, विभिन्न दस्तावेजों ने व्यक्तिगत अधिकारों पर जोर दिया है, जो समकालीन मानवाधिकार दस्तावेजों के अग्रदूत के रूप में कार्य कर रहे हैं। उदाहरणों में मैग्ना कार्टा (1215), अधिकार की याचिका (1628), अमेरिकी संविधान (1787), मनुष्य और नागरिक के अधिकारों की फ्रांसीसी घोषणा (1789), और अमेरिकी अधिकारों का विधेयक (1791) शामिल हैं।

मैग्ना कार्टा, जिसे "महान चार्टर" के रूप में भी जाना जाता है, का अंग्रेजी भाषी दुनिया में संवैधानिक कानून के विकास पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। 1215 में, इंग्लैंड के राजा जॉन, जिन्होंने देश पर शासन करने वाले कई प्राचीन कानूनों और रीति-रिवाजों का उल्लंघन किया था, को उनकी प्रजा द्वारा मैग्ना कार्टा पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया था। इस दस्तावेज़ में बताया गया कि बाद में मानव अधिकारों के रूप में क्या मान्यता प्राप्त हुई। इसने सरकारी हस्तक्षेप से चर्च की स्वतंत्रता की रक्षा की, स्वतंत्र नागरिकों के संपत्ति के स्वामित्व और विरासत के अधिकारों की रक्षा की, और अत्यधिक करों के खिलाफ सुरक्षा उपाय प्रदान किए। मैग्ना कार्टा ने उन विधवाओं के लिए पुनर्विवाह न करने का अधिकार स्थापित किया, जिनके पास संपत्ति है, ताकि वे पुनर्विवाह न कर सकें, उचित प्रक्रिया के सिद्धांतों को बढ़ावा दिया, कानून के समक्ष समानता, और रिश्वतखोरी और आधिकारिक कदाचार के खिलाफ प्रावधान शामिल किए।

मैग्ना कार्टा को आधुनिक लोकतंत्र के विकास में सबसे प्रभावशाली कानूनी दस्तावेजों में से एक माना जाता है। इसने स्वतंत्रता के संघर्ष में एक निर्णायक क्षण का प्रतिनिधित्व किया और संवैधानिक कानून का शासन स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

अधिकार की याचिका (1628)

1628 में अंग्रेजी संसद द्वारा बनाई गई और चार्ल्स प्रथम को प्रस्तुत अधिकार की याचिका, मानव अधिकारों की उन्नति में एक और महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुई। राजा की अलोकप्रिय विदेश नीति को वित्तपोषित करने से संसद के इनकार के कारण मजबूरन ऋण देना पड़ा और लागत-बचत उपायों के रूप में नागरिकों के घरों में सैनिकों को तैनात करना पड़ा। इन नीतियों का विरोध करने वाले व्यक्तियों की मनमानी गिरफ्तारी और कारावास ने चार्ल्स प्रथम और ड्यूक ऑफ बकिंघम जॉर्ज विलियर्स के प्रति संसद की बढ़ती शत्रुता को बढ़ावा दिया। सर एडवर्ड कोक ने पहले के क़ानूनों और चार्टरों को आधार बनाते हुए अधिकार की याचिका शुरू की, और इसमें चार प्रमुख सिद्धांतों पर जोर दिया गया: (1) संसद की सहमति के बिना कर नहीं लगाया जा सकता था, (2) व्यक्तियों को उचित कारण के बिना कैद नहीं किया जा सकता था (पुनः पुष्टि करते हुए) बंदी प्रत्यक्षीकरण का अधिकार), (3) सैनिकों को नागरिकों में विभाजित नहीं किया जा सकता था, और (4) शांतिकाल के दौरान मार्शल लॉ नहीं लगाया जा सकता था।

4 जुलाई, 1776 को संयुक्त राज्य कांग्रेस ने स्वतंत्रता की घोषणा को मंजूरी दे दी। इसके प्राथमिक लेखक थॉमस जेफरसन ने ग्रेट ब्रिटेन से स्वतंत्रता की घोषणा करने के कांग्रेस के फैसले की औपचारिक व्याख्या के रूप में घोषणा

की रचना की। इसने एक बयान के रूप में घोषणा की कि तेरह अमेरिकी उपनिवेश अब ब्रिटिश साम्राज्य का हिस्सा नहीं थे। स्वतंत्रता की घोषणा को विभिन्न रूपों में प्रसारित किया गया था, जिसमें व्यापक रूप से वितरित मुद्रित ब्रॉडशीट भी शामिल थी जिसे जनता के लिए जोर से पढ़ा गया था।

घोषणा में दो केंद्रीय विषयों पर जोर दिया गया: व्यक्तिगत अधिकार और क्रांति का अधिकार। ये विचार अमेरिकियों को बहुत पसंद आए और इनका महत्वपूर्ण अंतरराष्ट्रीय प्रभाव पड़ा, खासकर फ्रांसीसी क्रांति पर।

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान (1787) और अधिकार विधेयक (1791)

फिलाडेल्फिया में गर्मियों के दौरान 1787 में लिखा गया संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान, अमेरिकी संघीय प्रणाली के मूलभूत कानून के रूप में खड़ा है और पश्चिमी दुनिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है। सबसे पुराने लिखित राष्ट्रीय संविधान के रूप में जो आज भी उपयोग में है, यह सरकार की संरचना, इसकी विभिन्न शाखाओं, उनकी शक्तियों और नागरिकों के आवश्यक अधिकारों की रूपरेखा तैयार करता है।

अधिकारों का विधेयक, जिसमें संविधान में पहले दस संशोधन शामिल हैं, 15 दिसंबर 1791 को प्रभावी हुआ। यह संघीय सरकार की शक्तियों को सीमित करने और अमेरिकी के भीतर सभी व्यक्तियों, चाहे नागरिक, निवासी या आगंतुक हों, के अधिकारों की रक्षा करने का कार्य करता है। इलाका।

अधिकारों का विधेयक बोलने, धर्म और सभा की स्वतंत्रता जैसी मौलिक स्वतंत्रता की गारंटी देता है। यह हथियार रखने का अधिकार, सरकार को याचिका दायर करने की स्वतंत्रता भी सुनिश्चित करता है, और अनुचित खोजों

और जब्ती, क्रूर और असामान्य सजा और आत्म-दोषारोपण के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है। इसके अलावा, इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कांग्रेस धर्म की स्थापना के संबंध में कोई कानून नहीं बनाएगी और संघीय सरकार को कानून की उचित प्रक्रिया के बिना किसी भी व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित करने से रोकती है। संघीय आपराधिक मामलों में, इसके लिए मृत्युदंड या कुख्यात अपराधों के लिए ग्रैंड जूरी द्वारा अभियोग की आवश्यकता होती है, जिस जिले में अपराध किया गया था, वहां एक निष्पक्ष जूरी द्वारा त्वरित सार्वजनिक सुनवाई की गारंटी देता है, और दोहरे खतरे पर रोक लगाता है।

अधिकारों का विधेयक अमेरिकी संवैधानिक ढांचे का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है और संयुक्त राज्य अमेरिका में नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करता है।

मनुष्य और नागरिक के अधिकारों की घोषणा (1789)

फिलाडेल्फिया में गर्मियों के दौरान 1787 में लिखा गया संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान, अमेरिकी संघीय प्रणाली के मूलभूत कानून के रूप में खड़ा है और पश्चिमी दुनिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है। सबसे पुराने लिखित राष्ट्रीय संविधान के रूप में जो आज भी उपयोग में है, यह सरकार की संरचना, इसकी विभिन्न शाखाओं, उनकी शक्तियों और नागरिकों के आवश्यक अधिकारों की रूपरेखा तैयार करता है।

अधिकारों का विधेयक, जिसमें संविधान में पहले दस संशोधन शामिल हैं, 15 दिसंबर 1791 को प्रभावी हुआ। यह संघीय सरकार की शक्तियों को सीमित करने और अमेरिकी के भीतर सभी व्यक्तियों, चाहे नागरिक, निवासी या आगंतुक हों, के अधिकारों की रक्षा करने का कार्य करता है। इलाका।

अधिकारों का विधेयक बोलने, धर्म और सभा की स्वतंत्रता जैसी मौलिक स्वतंत्रता की गारंटी देता है। यह हथियार रखने का अधिकार, सरकार को याचिका दायर करने की स्वतंत्रता भी सुनिश्चित करता है, और अनुचित खोजों और जब्ती, क्रूर और असामान्य सजा और आत्म-दोषारोपण के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करता है। इसके अलावा, इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कांग्रेस धर्म की स्थापना के संबंध में कोई कानून नहीं बनाएगी और संघीय सरकार को कानून की उचित प्रक्रिया के बिना किसी भी व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित करने से रोकती है। संघीय आपराधिक मामलों में, इसके लिए मृत्युदंड या कुख्यात अपराधों के लिए ग्रैंड जूरी द्वारा अभियोग की आवश्यकता होती है, जिस जिले में अपराध किया गया था, वहां एक निष्पक्ष जूरी द्वारा त्वरित सार्वजनिक सुनवाई की गारंटी देता है, और दोहरे खतरे पर रोक लगाता है।

अधिकारों का विधेयक अमेरिकी संवैधानिक ढांचे का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है और संयुक्त राज्य अमेरिका में नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करता है।

यूडीएचआर में नागरिक और राजनीतिक अधिकार

i. अनुच्छेद **3** – लोगों के जीवन**,** स्वतंत्रता और सुरक्षा का अधिकार
ii. अनुच्छेद **4** - दासता से मुक्ति
iii. अनुच्छेद **5** - अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध निषेध
iv. अनुच्छेद **6** - कानून के समक्ष मान्यता
v. अनुच्छेद **7** - कानून के समक्ष कोई भेदभाव नहीं
vi. अनुच्छेद **8** - न्यायाधिकरणों के समक्ष प्रभावी उपाय
vii. अनुच्छेद **9** - मनमानी गिरफ्तारी से मुक्ति

viii. अनुच्छेद **10** - निष्पक्ष और सार्वजनिक सुनवाई का अधिकार

ix. अनुच्छेद **11** - पूर्व-कार्योत्तर कानूनों से स्वतंत्रता

x. अनुच्छेद **12** - निजता, परिवार और घर का अधिकार

xi. अनुच्छेद **13** - राज्य/देश के भीतर आवागमन की स्वतंत्रता का अधिकार।

xii. अनुच्छेद **14** - दूसरे देश में शरण लेने का अधिकार

xiii. अनुच्छेद **15** - राष्ट्रीयता का अधिकार

xiv. अनुच्छेद **16** - विवाह करने का अधिकार

xv. अनुच्छेद **17** - संपत्ति रखने का अधिकार

xvi. अनुच्छेद **18** - विचार और धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

xvii. अनुच्छेद **19** – विचारों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार

xviii. अनुच्छेद **20** - शांतिपूर्ण सभा की स्वतंत्रता का अधिकार

xix. अनुच्छेद **21** - अपने देश की सरकार में भाग लेने का अधिकार

यूडीएचआर में आर्थिक और सामाजिक अधिकार

i. अनुच्छेद **22** - सामाजिक सुरक्षा का अधिकार

ii. अनुच्छेद **23** - व्यवसाय चुनने का अधिकार

iii. अनुच्छेद **24** - आराम और अवकाश का अधिकार

iv. अनुच्छेद **25** - स्वस्थ जीवन स्तर का अधिकार

v. अनुच्छेद **26** - शिक्षा का अधिकार

vi. अनुच्छेद **27** - सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का अधिकार

vii. अनुच्छेद **28** - सही अच्छी सामाजिक और अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था

viii. अनुच्छेद **29** - इन अधिकारों तक पहुंचने के दौरान कर्तव्यों और जिम्मेदारियों को निर्धारित करता है

ix. अनुच्छेद **30** – अधिकारों और स्वतंत्रता के विनाश के उद्देश्य से गतिविधि में संलग्न नहीं होना

अध्याय - 8

भारतीय संविधान में मानव अधिकार

भारतीय संविधान में मानव अधिकार हेतु प्रावधान

भारतीय संविधान दुनिया भर में सबसे अधिक अधिकार-उन्मुख संविधान में से एक के रूप में प्रसिद्ध है। इसका मसौदा लगभग उसी समय तैयार किया गया था जब 1948 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा को अपनाया जा रहा था। भारतीय संविधान अपनी प्रस्तावना के साथ-साथ मौलिक अधिकारों और निदेशक सिद्धांतों से संबंधित अनुभागों में मानव अधिकारों का सार प्रस्तुत करता है। राज्य की नीति का.

व्यक्ति, आंशिक रूप से या पूर्ण रूप से, अपने समग्र विकास के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किए जाने की अपेक्षा करते हैं। अधिकारों के माध्यम से ही ऐसा वातावरण स्थापित होता है। अधिकारों को किसी व्यक्ति के वैध दावों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो उनके व्यक्तिगत विकास के लिए आवश्यक हैं और राज्य या समाज द्वारा मान्यता प्राप्त हैं। इनमें से कुछ अधिकार, राज्य द्वारा गारंटीकृत और संविधान में प्रतिष्ठापित, मौलिक अधिकार के रूप में जाने जाते हैं। ये मौलिक अधिकार कानून की अदालत के माध्यम से लागू करने योग्य हैं।

भारतीय संविधान उन सिद्धांतों पर आधारित है जिन्होंने ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ भारत के संघर्ष को निर्देशित किया, जिसमें लोगों के नागरिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों का उल्लंघन देखा गया।

परिणामस्वरूप, स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद, संविधान निर्माताओं ने नागरिकों को कुछ मौलिक अधिकार प्रदान किए, जो संविधान के भाग III में निहित हैं। इन मौलिक अधिकारों को प्रत्येक भारतीय नागरिक के व्यक्तित्व के समुचित और सामंजस्यपूर्ण विकास के लिए आवश्यक मानवीय स्वतंत्रता माना जाता है। वे सभी भारतीय नागरिकों पर लागू होते हैं, चाहे उनकी जाति, पंथ, रंग, लिंग, नस्ल या जन्म स्थान कुछ भी हो। इसके अलावा, ये अधिकार कुछ सीमाओं के अधीन, अदालतों द्वारा लागू किए जा सकते हैं।

इन अधिकारों की उत्पत्ति का पता विभिन्न स्रोतों से लगाया जा सकता है, जिनमें इंग्लैंड का बिल ऑफ राइट्स, यूनाइटेड स्टेट्स बिल ऑफ राइट्स और फ्रांस का मनुष्य के अधिकारों की घोषणा शामिल है। भारतीय संविधान अपने नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करने और एक न्यायपूर्ण और समावेशी समाज को बढ़ावा देने के लिए इन ऐतिहासिक दस्तावेजों से प्रेरणा लेता है।

मौलिक अधिकार

मौलिक अधिकार भारतीय संविधान का एक अभिन्न अंग हैं, जो भाग III (अनुच्छेद 12-35) में शामिल हैं। इन अधिकारों को सरदार वल्लभभाई पटेल के नेतृत्व वाली संविधान सभा की एक समिति द्वारा अंतिम रूप दिया गया था। हालाँकि संविधान इन अधिकारों के लिए कोई विशिष्ट परिभाषा प्रदान नहीं करता है, फिर भी इन्हें मौलिक माना जाता है क्योंकि ये सामान्य कानूनों पर श्रेष्ठता रखते हैं और इन्हें केवल संवैधानिक संशोधन के माध्यम से बदला जा सकता है।

मौलिक अधिकार मानव व्यक्तित्व के संपूर्ण विकास को सुविधाजनक बनाने, व्यक्तिगत गरिमा को बनाए रखने और कल्याण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अन्य न्यायसंगत अधिकारों के विपरीत, उन्हें संवैधानिक उपचारों के

माध्यम से सुरक्षा प्राप्त होती है, जैसे अनुच्छेद 32 के तहत सर्वोच्च न्यायालय में सीधे आवेदन, जो स्वयं भाग III में शामिल है।

हालाँकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि मौलिक अधिकार पूर्ण नहीं हैं और कुछ प्रतिबंधों के अधीन हो सकते हैं। इनमें से कुछ प्रतिबंधों का संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है, जबकि अन्य सरकार द्वारा लगाए जा सकते हैं। इन प्रतिबंधों की तर्कसंगतता अंततः अदालतों द्वारा निर्धारित की जाती है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक नियंत्रण के बीच संतुलन बनाती है।

आपातकाल के समय मौलिक अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है। यह भी उल्लेखनीय है कि ये अधिकार राज्य के विरुद्ध लागू होते हैं, न कि निजी पार्टियों के विरुद्ध, जो व्यक्तियों और सरकार के बीच संबंधों पर उनके फोकस को उजागर करते हैं।

भारतीय संविधान में 'छह मौलिक अधिकार' निहित हैं-

- **समानता का अधिकार** -संविधान के अनुच्छेद **14, 15, 16, 17** और **18** में सम्मिलित है। यह अन्य सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं का प्रमुख आधार है।

  अनुच्छेद **14** में कहा गया है कि भारत के सभी नागरिकों को देश के कानूनों द्वारा समान रूप से संरक्षित किया जाएगा।

  संविधान के अनुच्छेद **15** में प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति के साथ जाति**,** रंग**,** भाषा आदि के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाएगा। जबकि **,** राज्य महिलाओं**,** बच्चों और सामाजिक या शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग या अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष प्रावधान कर सकता है।

संविधान का अनुच्छेद **16** परिभाषित करता है कि राज्य रोजगार के घटनाओं में किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकता है, जबकि , कुछ अपवाद हैं, संसद को यह वर्णन करते हुए कानून बनाने का अधिकार है कि कुछ नौकरियां केवल उन आवेदकों द्वारा भरी जा सकती हैं जो पद के लिए क्षेत्र में अधिवासित हैं जिनके लिए ज्ञान और इलाके या क्षेत्र की भाषा की आवश्यकता होती है। राज्य नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए शैक्षिक और आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों के लिए पद भी आरक्षित कर सकता है। अनुच्छेद **17** अस्पृश्यता की प्रथा को समाप्त करता है।

संविधान का अनुच्छेद **18** राज्य को कोई भी उपाधि देने से रोकता है। इसका तात्पर्य है कि भारत का नागरिक किसी विदेशी राज्य से उपाधियां स्वीकार नहीं कर सकता है। लेकिन सैन्य और अकादमिक सम्मान भारत के नागरिकों को प्रदान किए जा सकते हैं और निम्नलिखित के पुरस्कार भी दिए जा सकते हैं। *भारत रत्न* और '*पद्म विभूषण*' प्राप्तकर्ता द्वारा शीर्षक के रूप में उपयोग नहीं किया जा सकता।

- **स्वतंत्रता का अधिकार-** अनुच्छेद **19, 20, 21** और **22** में दिया गया है। भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता **(**इसमें प्रेस की स्वतंत्रता सम्मिलित है**),** हथियारों के बिना शांतिपूर्वक इकट्ठा होने की स्वतंत्रता, संघ या संघ बनाने की स्वतंत्रता, भारत के पूरे क्षेत्र में स्वतंत्र रूप से घूमने की स्वतंत्रता, भारत के क्षेत्र के किसी भी हिस्से में रहने और बसने की स्वतंत्रता, किसी भी पेशे का अभ्यास करने या किसी भी व्यवसाय को करने की स्वतंत्रता, व्यापार या व्यवसाय कुछ स्वतंत्रताएं हैं जो भारतीय नागरिक को प्रदान की जाती हैं। जबकि , एक ही समय में इन स्वतंत्रताओं को सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और भारत की संप्रभुता और अखंडता के हित में प्रतिबंधित किया जा सकता है।

- **स्वतंत्र रूप से जीने का अधिकार** - संविधान अनुच्छेद **20** और **21** के अंतर्गत जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की भी गारंटी देता है।

  अनुच्छेद **20** में कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को सजा नहीं दी जा सकती है जो उस समय देश के कानून से अधिक है। यह कानूनी सिद्धांत इस सिद्धांत पर आधारित है कि किसी भी आपराधिक कानून को पूर्वव्यापी नहीं बनाया जा सकता है। इसलिए, किसी कार्य को अपराध या अपराध बनने के लिए आवश्यक शर्त यह है कि इसे करते समय यह कानूनी रूप से अपराध होना चाहिए था। इसमें यह भी प्रावधान है कि किसी भी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए दो बार दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

  अनुच्छेद **21** घोषित करता है कि किसी भी नागरिक को कानून के अतिरिक्त उसके जीवन और स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसलिए, किसी व्यक्ति की व्यक्तिगत स्वतंत्रता केवल तभी विवादित हो सकती है जब व्यक्ति ने अपराध किया हो। इस अधिकार में मरने का अधिकार सम्मिलित नहीं है इसलिए आत्महत्या या उसका प्रयास एक अपराध है। **2002** में, अनुच्छेद **21 (**ए**)** को **86** वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम द्वारा सम्मिलित किया गया था। प्राथमिक शिक्षा को जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार के अंतर्गत एक मौलिक अधिकार बना दिया गया है। इसमें कहा गया है कि "छह से चौदह वर्ष के आयु वर्ग के बच्चों को राज्य द्वारा मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान की जाएगी"।
- अनुच्छेद **23** और **24** **शोषण के विरुद्ध अधिकार** प्रदान करता है। इसमें दो प्रावधान हैं, एक, मानव तस्करी और भिखारी **(**जबरन श्रम**)** का उन्मूलन और दूसरा कारखानों और खानों जैसी खतरनाक नौकरियों में **14** वर्ष से कम उम्र के बच्चों के रोजगार का उन्मूलन।

- **धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार** - संविधान के अनुच्छेद **25, 26, 27** और **28** में धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार सम्मिलित है। इस अधिकार का उद्देश्य भारतीय राज्य की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति को बनाए रखना है। इस प्रकार सभी धर्मों को राज्य के समक्ष समान माना जाता है और किसी भी धर्म को अन्य धर्मों पर वरीयता नहीं दी जाएगी। नागरिक अपनी पसंद के किसी भी धर्म का प्रचार, अभ्यास और प्रचार करने के लिए स्वतंत्र हैं। इसमें किसी धर्म का पालन न करने और ऐसे विचारों का प्रचार करने की स्वतंत्रता भी सम्मिलित है। जबकि , राज्य सार्वजनिक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य के हित में धर्मों की कुछ प्रथाओं को प्रतिबंधित कर सकता है, उदाहरण के लिए पहनना और ले जाना। *कृपाण* सिख धर्म के पेशे में राज्य द्वारा प्रतिबंधित किया जा सकता है। कुछ अन्य प्रावधान हैं जैसे धार्मिक समुदाय धर्मार्थ संस्थान स्थापित कर सकते हैं और किसी भी व्यक्ति को किसी विशेष धर्म के प्रचार के लिए करों का भुगतान करने के लिए मजबूर नहीं किया जाएगा। यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि राज्य द्वारा संचालित संस्थान धर्म समर्थक शिक्षा प्रदान नहीं कर सकते हैं।

  अनुच्छेद **29** और **30** अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा के लिए विशेष उपाय प्रदान करता है। सभी अल्पसंख्यक, धार्मिक या भाषाई, अपनी संस्कृति को संरक्षित और विकसित करने के लिए अपने स्वयं के शैक्षिक संस्थान स्थापित कर सकते हैं।
- **संवैधानिक उपचार का अधिकार**- संविधान का अनुच्छेद **32** संवैधानिक उपचार के अधिकार से संबंधित है। यह नागरिकों को मौलिक अधिकारों से इनकार के मामले में कानून की अदालत की मांग करने का अधिकार देता है, अदालतों को नागरिकों के मौलिक अधिकारों को संरक्षित करने या उनकी रक्षा करने के लिए कहता है। यह विभिन्न तरीकों से किया जा सकता है, उदाहरण के लिए अदालतें विभिन्न प्रकार की रिट जारी कर सकती हैं। ये रिट हैं *बंदी*

प्रत्यक्षीकरण, मैंडमस, निषेध, ***quo warranto*** और *सर्टिओररी.* राष्ट्रीय या राज्य आपातकाल घोषित होने की स्थिति में केंद्र सरकार द्वारा इस अधिकार को निलंबित किया जा सकता है।

संपत्ति का अधिकार - संपत्ति का अधिकार अब मौलिक अधिकार नहीं, बल्कि संवैधानिक अधिकार है। अनुच्छेद **19** और **31** के अंतर्गत संपत्ति के अधिकार का प्रावधान था। अनुच्छेद **19** सभी नागरिकों को संपत्ति के अधिग्रहण, धारण और निपटान के अधिकार की गारंटी देता है। अनुच्छेद **31** में प्रावधान किया गया था कि "किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के अतिरिक्त अपनी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। **44**वां **1978** के संविधान संशोधन अधिनियम ने संपत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की सूची से हटा दिया। एक नया अनुच्छेद **(**अनुच्छेद **300** ए**)** पेश किया गया था, जो कहता है कि 'किसी भी व्यक्ति को कानून के अधिकार के अतिरिक्त अपनी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा'। इसलिए, यदि कोई विधायिका एक कानून बनाती है जो किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करती है, तो राज्य की ओर से मुआवजे के रूप में कुछ भी भुगतान करने की कोई बाध्यता नहीं होगी।

पीड़ित व्यक्ति को अनुच्छेद **32** के अंतर्गत अदालत जाने का कोई अधिकार नहीं होगा।

संविधान में उल्लिखित विभिन्न 'अनुच्छेदों' के प्रावधानों के माध्यम से हमारे संविधान द्वारा मानवाधिकारों की रक्षा की जाती है। अखरोट के खोल में वे हैं -

अनुच्छेद **14**- कानून के समक्ष सभी समान हैं।

अनुच्छेद **15**- जाति, पंथ, नस्ल, लिंग, धर्म, जन्म स्थान के बावजूद मानव होने की समान स्थिति

अनुच्छेद **16**- सभी के लिए समान अवसर

अनुच्छेद **19-** कानूनी रूप से रहने, व्यक्त करने, भूमि और धन का अधिग्रहण करने, सुरक्षा का उपयोग करने और जीवित रहने की स्वतंत्रता।

अनुच्छेद **20 -** जीवन का अधिकार

अनुच्छेद **21-** व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद **23-** श्रम बंधन और मानव तस्करी का प्रतिषेध।

अनुच्छेद **24- 14** वर्ष से कम आयु के बच्चों को किसी भी प्रकार के श्रम में सम्मिलित करने का प्रतिषेध।

अनुच्छेद **25-** अपनी मर्जी से किसी भी धर्म का पालन करने के लिए स्वतंत्र

अनुच्छेद **26, 27, 28-** धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

अनुच्छेद **29-** अपनी संस्कृति का संरक्षण करना

अनुच्छेद **30-** अल्पसंख्यकों द्वारा शैक्षणिक संस्थान खोलने का अधिकार

अनुच्छेद **31-** किसी भी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद **39-** लैंगिक भेद के बावजूद किए गए समान कार्य के लिए मजदूरी की समानता

अनुच्छेद **41-** अपनी पसंद के अनुसार काम करने का अधिकार

अनुच्छेद **45- 14** वर्ष की आयु तक के सभी बच्चों के लिए निशुल्क और अनिवार्य शिक्षा।

अनुच्छेद **46-** अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और समाज के अन्य कमजोर वर्ग का विकास

मानव अधिकारों और मौलिक अधिकारों के मध्य भेद

अधिकारों को एक व्यक्ति के दावों के रूप में परिभाषित किया जाता है जो अपने स्वयं के निर्णय के लिए आवश्यक हैं और जिन्हें समाज या राज्य द्वारा

मान्यता प्राप्त है। अधिकारों को अक्सर सभ्यता के लिए मौलिक माना जाता है, जिसे समाज और संस्कृति के स्थापित स्तंभों के रूप में माना जाता है।

लेकिन अधिकारों का वास्तविक अर्थ केवल तभी होता है जब व्यक्ति कर्तव्यों का पालन करते हैं। अधिकार वे हैं जो हम चाहते हैं कि दूसरे हमारे लिए करें जबकि कर्तव्य वे कार्य हैं जिन्हें हमें दूसरों के लिए करना चाहिए। इस प्रकार, एक अधिकार दूसरों के अधिकारों के प्रति सम्मान दिखाने के दायित्व के साथ आता है। अधिकारों के साथ आने वाले दायित्व कर्तव्यों के रूप में हैं। अगर हमें स्वतंत्रता का अधिकार है, तो यह हमारा कर्तव्य बन जाता है कि हम इसका दुरुपयोग न करें और दूसरों को नुकसान न पहुंचाएं।

वे अधिकार जो न केवल समाज द्वारा बल्कि राज्य द्वारा भी मान्यता प्राप्त हैं और संविधान में निहित हैं, मौलिक अधिकार कहलाते हैं। उनका उल्लेख भारत के संविधान के भाग III (अनुच्छेद 12 - अनुच्छेद 35) में किया गया है। वे मौलिक हैं क्योंकि:-

- संविधान में उनका उल्लेख है जो उन्हें गारंटी देता है।
- ये न्यायोचित हैं अर्थात न्यायालयों के माध्यम से प्रवर्तनीय हैं और भारत सरकार को इनकी रक्षा करनी है।

पहले सात मौलिक अधिकार थे, लेकिन संपत्ति के अधिकार को 1978 में 44वें संविधान संशोधन द्वारा सूची से हटा दिया गया था । अब मूल रूप से छह मौलिक अधिकार हैं।

जबकि मानवाधिकार एक व्यक्ति को उसके जन्म से दिए गए अधिकार हैं। वे मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में निहित हैं।

मौलिक अधिकार	मानवाधिकार
1. एक नागरिक होने के नाते अधिकार	मनुष्य होने के अधिकार
2. वे संविधान द्वारा प्रतिष्ठापित हैं और मानव अधिकारों की तुलना में काफी पुराने हैं।	वे अपेक्षाकृत नए हैं।
3. मौलिक अधिकार विशिष्ट हैं	सार्वभौमिक मानवाधिकारों पर कोई आम सहमति नहीं है।
4. वे मूल रूप से एक विशेष राज्य के सदस्य के रूप में आपके अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं जो एक निवासी और आगंतुक के मध्य भेद करता है।	वे मौलिक अधिकारों की तुलना में प्रकृति में अधिक बुनियादी हैं। वे एक निवासी और एक आगंतुक के मध्य भेद नहीं करते हैं।
5. मौलिक अधिकार देश विशेष के लिए हैं।	मानव अधिकार पृथ्वी के चेहरे पर सभी मनुष्यों पर लागू होते हैं।
6. भारत सरकार और न्यायिक तंत्र मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए उत्तरदायी है।	मानवाधिकार उचित नहीं हैं (सिवाय उन लोगों के जो मौलिक अधिकारों के साथ ओवरलैप करते हैं)।
7. मौलिक अधिकार संविधान से अपनी पवित्रता प्राप्त करते हैं।	मानवाधिकार अपनी पवित्रता विवेक से प्राप्त करते हैं।
8. सभी मौलिक अधिकार केवल भारत के नागरिक के लिए उपलब्ध हैं; केवल कुछ ही विदेशियों के लिए उपलब्ध हैं। (राष्ट्रीय आपातकाल के मामले में, भारत के संविधान के अनुच्छेद 352 के अंतर्गत मौलिक अधिकार मौजूद नहीं हैं)	मानव अधिकारों को कानून की अदालत में लागू नहीं किया जा सकता है; वे अधिक सार्वभौमिक और बुनियादी हैं।
9. मौलिक अधिकार वैधता के आधार पर हैं।	मानव अधिकार नैतिकता और मानवता के आधार पर हैं।

10. उन्हें किसी भी अनुमान या विशेषाधिकार की लागत के साथ प्रदान नहीं किया जाता है।	वे अधिकारों के नैतिक दर्शन हैं जो लगभग हर कोई सहमत है कि एक इंसान के पास होना चाहिए।
11. इनमें सम्मिलित हैं- आत्मनिर्णय का अधिकार, स्वतंत्रता, कानून की उचित प्रक्रिया, विचार, धर्म, अभिव्यक्ति, संघ, शांतिपूर्ण सभा आदि की स्वतंत्रता।	इनमें सम्मिलित हैं- जीवन का अधिकार, यातना से मुक्ति, दासता से, निष्पक्ष परीक्षण, बोलने की स्वतंत्रता, विचार, विवेक, आंदोलन, धर्म आदि।

कभी-कभी मौलिक और मानवाधिकार समान लगते हैं क्योंकि बाद में पूर्व के लिए नींव के रूप में कार्य करता है। अतिव्यापी अधिकार हैं –

जीवन का अधिकार
काम करने का अधिकार
विभिन्न स्वतंत्रताओं आदि का अधिकार।

एक और समानता यह भी है कि दोनों एक व्यक्ति को वृद्धि और विकास के लिए सभी आवश्यकताओं के साथ प्रदान करना चाहते हैं। संक्षेप में, वे बीज को जड़ें लेने और सुंदर हरे पेड़ में पनपने के लिए एक उपजाऊ जमीन बनाते हैं।

मौलिक अधिकारों पर विचार करने पर, समाज अपने नागरिकों से कुछ अपेक्षाएँ भी रखता है, जिन्हें "कर्तव्यों" के रूप में जाना जाता है। मौलिक कर्तव्यों के रूप में जाने जाने वाले इन कर्तव्यों को 42वें संवैधानिक संशोधन के माध्यम से 1976 में अनुच्छेद 51-ए के तहत संविधान के भाग ।V में पेश किया गया था। मौलिक अधिकारों के विपरीत, जो न्यायसंगत और लागू करने योग्य हैं, मौलिक कर्तव्य प्रकृति में गैर-न्यायसंगत हैं।

अध्याय - 9

भारत में मानवाधिकार शिक्षा

यह सार्वभौमिक रूप से स्वीकार किया जाता है कि शिक्षा व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तरों पर सामाजिक गतिशीलता, समानता और सशक्तिकरण का सबसे अच्छा स्रोत है। इसके अतिरिक्त , इसे एक स्वस्थ लोकतांत्रिक समाज के लिए एक शर्त के रूप में माना जाता है। इस प्रकार यह महत्वपूर्ण है कि शिक्षा में समाज के विकास के लिए आवश्यक शांति, मानव अधिकारों और लोकतंत्र का अध्ययन सम्मिलित हो।

मानव अधिकार शिक्षा स्कूलों और शैक्षिक संस्थानों में मानव अधिकारों के इतिहास, सिद्धांत और कानून का शिक्षण है, साथ ही साथ आम जनता के लिए पहुंच भी है।

मानवाधिकार शिक्षा को प्रशिक्षण, प्रसार और सूचना प्रयासों के रूप में परिभाषित किया गया है जिसका उद्देश्य ज्ञान और कौशल प्रदान करके और दृष्टिकोण को ढालकर मानव अधिकारों की सार्वभौमिक संस्कृति का निर्माण करना है।

मानव अधिकार शिक्षा के पांच आयाम हैं:

- मानव व्यक्तित्व और उसकी गरिमा के लिए सम्मान को मजबूत करना;

• मानव व्यक्तित्व और इसकी गरिमा को पूरी तरह से विकसित करना;

• सभी देशों, स्वदेशी लोगों और नस्लीय, राष्ट्रीय, जातीय, धार्मिक और भाषाई समूहों के मध्य समझ, सहिष्णुता, लिंग समानता और दोस्ती को बढ़ावा देना;

• सभी व्यक्तियों को एक स्वतंत्र समाज में प्रभावी ढंग से भाग लेने में सक्षम बनाना; और

• शांति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ाना (मानवाधिकार शिक्षा के लिए कार्रवाई की राष्ट्रीय योजनाओं के लिए दिशानिर्देश-यूएन-ए/**52/469**/ऐड**. 1.)**

मानव अधिकार शिक्षा के उद्देश्य

मानवाधिकार शिक्षा का उद्देश्य निम्नलिखित करना है:

• मानव अधिकारों के ज्ञान और समझ को बढ़ाएं।

• सहिष्णुता, सम्मान, एकजुटता और जिम्मेदारी के दृष्टिकोण को बढ़ावा देना।

• मानव अधिकारों को सामाजिक और राजनीतिक वास्तविकता में कैसे अनुवादित किया जा सकता है, इसके विषयमें जागरूकता विकसित करना।

- मानव अधिकारों की रक्षा के लिए कौशल विकसित करना।

पाठ्यक्रम की रूपरेखा को पाठ्यक्रम योजना और विकास के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय आधारों पर बनाया जाना चाहिए। स्कूल पाठ्यक्रम को व्यक्ति के समग्र विकास की दिशा में काम करना चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने इसे मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा (यूडीएचआर) में निहित अधिकारों की उपलब्धि के लिए केंद्रीय घोषित किया है:

अब, इसलिए महासभा मानव अधिकारों की इस सार्वभौमिक घोषणा को सभी लोगों और सभी राष्ट्रों के लिए उपलब्धि के एक सामान्य मानक के रूप में घोषित करती है, अंत तक कि प्रत्येक व्यक्ति और समाज का हर अंग, इस घोषणा को लगातार ध्यान में रखते हुए, इन अधिकारों और स्वतंत्रताओं के लिए सम्मान को बढ़ावा देने के लिए शिक्षण और शिक्षा द्वारा प्रयास करेगा। (यूडीएचआर की प्रस्तावना, **1948)**।

यूडीएचआर का अनुच्छेद **26.2** घोषणा द्वारा सामाजिक आदेश को प्राप्त करने में शिक्षकों की भूमिका को बताता है: शिक्षा को मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के सम्मान को मजबूत करने के लिए निर्देशित किया जाएगा। यह सभी राष्ट्रों, नस्लीय या धार्मिक समूहों के मध्य समझ, सहिष्णुता और दोस्ती को बढ़ावा देगा, और शांति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों को आगे बढ़ाएगा।

मानव अधिकार शिक्षा का विकास

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (**1976)** मानव अधिकार शिक्षा प्रदान करने के प्रावधानों की पुष्टि करता है और उन्हें मजबूत करता है। मानव अधिकारों के शिक्षण पर **1978** की अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस और **1993** के वियना सम्मेलन ने संयुक्त राष्ट्र के सदस्य-राज्यों से शिक्षा के सभी स्तरों पर मानवाधिकार शिक्षा शुरू करने का आह्वान किया।

दिल्ली में मानव अधिकारों पर विश्व कांग्रेस, **1990** ने आग्रह किया कि मानवाधिकार शिक्षा को औपचारिक, अनौपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा प्रणालियों को सम्मिलित करने के रूप में समझा जाना चाहिए, और माता-पिता और नीति निर्माताओं तक भी पहुंचना चाहिए। इसका उद्देश्य मानव अधिकारों को सामाजिक और राजनीतिक वास्तविकता में अनुवाद करने के विषयमें जागरूकता विकसित करना था।

1993 के वियना घोषणा और कार्रवाई कार्यक्रम में संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानवाधिकारों के महत्व की पुष्टि की गई थी "मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन इस बात की पुष्टि करता है कि राज्य कर्तव्यबद्ध हैं, जैसा कि मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध और अन्य अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपकरणों में निर्धारित किया गया है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि शिक्षा का उद्देश्य मानवाधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के सम्मान को मजबूत करना है " (अनुच्छेद **33,** वियना घोषणापत्र और क्रियान्वयन कार्यक्रम की धारा **1)**।

मानव अधिकारों के विषय में छात्रों को शिक्षित करने की आवश्यकता के लिए पहला औपचारिक अनुरोध यूनेस्को के **1974** के लेख में अंतर्राष्ट्रीय समझ, सहयोग और शांति के लिए शिक्षा और मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता से संबंधित शिक्षा से संबंधित सिफारिश में आया था। **1993** में मानव अधिकारों पर विश्व सम्मेलन के बाद मानवाधिकार शिक्षा भेद राष्ट्रीय स्तर पर एक आधिकारिक केंद्रीय चिंता बन गई। मानवाधिकार शिक्षा पर जोर **1995** में मानवाधिकार शिक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र दशक की शुरुआत के साथ शुरू हुआ" (जबकि पहले **1953** में यूनेस्को एसोसिएटेड स्कूल प्रोग्राम के साथ संबोधित किया गया था, जिसने "औपचारिक स्कूल सेटिंग्स में मानवाधिकारों को पढ़ाने के लिए प्रारंभिक प्रयास" के रूप में कार्य किया। वियना घोषणापत्र के परिणामस्वरूप **1995** से **2004** तक के दशक को घोषित किया गया था संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार शिक्षा दशक.

यूनेस्को मानवाधिकार शिक्षा को बढ़ावा देने की जिम्मेदारी है, और मानवाधिकार शिक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र के दशक का एक प्रमुख आयोजक था। यूनेस्को निम्नलिखित के माध्यम से मानवाधिकार शिक्षा को बढ़ावा देने का प्रयास करता है:

- राष्ट्रीय और उप-क्षेत्रीय स्तरों पर विकास परियोजनाओं और कार्यक्रमों में अपने सहयोग के माध्यम से मानवाधिकार शिक्षा के लिए राष्ट्रीय और स्थानीय क्षमताओं का विकास।
- शिक्षण सामग्री और प्रकाशनों का विस्तार और राष्ट्रीय और स्थानीय भाषाओं में उनका अनुवाद और अनुकूलन।
- वकालत और नेटवर्किंग गतिविधियाँ।

राज्यों को उन्मूलन का प्रयास करना चाहिए "निरक्षरता" और मानव व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और मानव अधिकारों और मौलिक स्वतंत्रता के सम्मान को मजबूत करने की दिशा में शिक्षा को निर्देशित करना चाहिए। मानव अधिकारों पर विश्व सम्मेलन सभी देशों और संस्थानों से औपचारिक और अनौपचारिक सेटिंग्स में सभी शिक्षण संस्थानों के पाठ्यक्रम में मानवाधिकारों, मानवीय कानून, लोकतंत्र और कानून के शासन को विषयों के रूप में सम्मिलित करने का आह्वान करता है।

मानव अधिकारों के प्रति सार्वभौमिक प्रतिबद्धता को मजबूत करने की दृष्टि से आम समझ और जागरूकता प्राप्त करने के लिए, मानव अधिकारों की शिक्षा में शांति, लोकतंत्र, विकास और सामाजिक न्याय सम्मिलित होना चाहिए, जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मानवाधिकार उपकरणों में निर्धारित किया गया है।

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन के मानव अधिकारों और लोकतंत्र के लिए शिक्षा पर अंतर्राष्ट्रीय कांग्रेस और अन्य मानवाधिकार उपकरणों द्वारा मार्च **1993** में अपनाई गई मानव अधिकारों और लोकतंत्र के लिए शिक्षा पर विश्व योजना को ध्यान में रखते हुए, मानवाधिकारों पर विश्व सम्मेलन सिफारिश करता है कि राज्य व्यापक मानवाधिकार शिक्षा और सार्वजनिक सूचना के प्रसार को सुनिश्चित करने के लिए विशिष्ट कार्यक्रम और रणनीतियां विकसित करें। मानव अधिकारों की जरूरतों का विशेष ध्यान रखना "महिलाएं".

स्कूली पाठ्यक्रम में 'मानवाधिकार शिक्षा' की आवश्यकता

राष्ट्रीय पहचान को मजबूत करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुए, स्कूल शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचा (एनसीईआरटी **2000)** राष्ट्रीय शिक्षा नीति (**1986)** में पहचाने गए **10** मुख्य घटकों की पुष्टि करता है:

- भारत के स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास;
- संवैधानिक दायित्व;
- राष्ट्रीय पहचान का पोषण करने के लिए आवश्यक सामग्री;
- भारत की साझी
- सांस्कृतिक विरासत;
- समानतावाद;
- लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता;
- लिंगों की समानता;
- पर्यावरण की सुरक्षा;
- सामाजिक बाधाओं को दूर करना;
- छोटे परिवार के मानदंडों का पालन; और
- वैज्ञानिक सोच विकसित करना।

यह संविधान के भाग **IV A** के अनुच्छेद **51A** में निर्धारित मौलिक कर्तव्यों को पाठ्यक्रम के सामान्य मुख्य घटकों के रूप में सम्मिलित करने की आवश्यकता पर जोर देता है: "इन मुख्य घटकों को उपयुक्त तरीके से स्कूल पाठ्यक्रम में एकीकृत करने की आवश्यकता है। यह परिकल्पना की गई है कि वे राष्ट्रीय स्तर पर साझा धारणा और मूल्यों को स्थापित करने

और एक लोकाचार और मूल्य प्रणाली बनाने में सहायता करेंगे जिसमें एक आम भारतीय पहचान को मजबूत किया जा सकता है।

मानव अधिकार शिक्षा को कई तरीकों से स्कूल पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जा सकता है:

- औपचारिक पाठ्यक्रम : स्कूल अपने वर्तमान पाठ्यक्रमों की जांच करने और उन क्षेत्रों की पहचान करने का विकल्प चुन सकते हैं जहां मानव अधिकार शिक्षा के विषय और तत्व पहले से मौजूद हैं। मानव अधिकार शिक्षा को अच्छी सामान्य शिक्षा के मुख्य पाठ्यक्रम का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है।

- अनौपचारिक पाठ्यक्रम: स्कूल की पाठ्येतर और सह-पाठ्यचर्या गतिविधियों के माध्यम से मानवाधिकार शिक्षा को भी बढ़ावा दिया जा सकता है।

- प्रच्छन्न पाठ्यक्रम: मानवाधिकार शिक्षा को स्कूल के दूरगामी प्रच्छन्न पाठ्यक्रम को भी संबोधित करना चाहिए ताकि स्कूल का माहौल बनाया जा सके जो वास्तव में मानवाधिकारों के लिए सम्मान को दर्शाता है। मूल्यों, दृष्टिकोण, ज्ञान और व्यवहार के पैटर्न को छात्रों के व्यक्तिगत अनुभवों में एकीकृत किया जाना चाहिए ताकि उन्हें वास्तविकता को गंभीर रूप से देखने में सहायता मिल सके।

प्राथमिक स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा

निचले–प्राथमिक स्तर पर मानवाधिकारों के लिए प्रासंगिक प्रमुख विषय क्षेत्र सामाजिक अध्ययन, पर्यावरण अध्ययन और भाषाएं हैं।

- मानव अधिकारों के मुद्दों को पर्यावरण अध्ययन में एकीकृत किया जाता है, जो बच्चे के तत्काल पर्यावरण से शुरू होता है और धीरे–धीरे बच्चे को जिले, राज्य, देश और दुनिया के अध्ययन के लिए ले जाता है।

- भारत और दुनिया के इतिहास, भारत के स्वतंत्रता संग्राम और भारतीय संविधान के कुछ पहलुओं से पुरुषों और महिलाओं की कथाओं और आत्मकथाओं को इस पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए।

- भाषा पाठ्यक्रम को कहानियों और कविताओं के माध्यम से करुणा, सहिष्णुता और सहानुभूति के विकास पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

- परिवार, पड़ोस, संबंधों, भोजन, कपड़े, आश्रय, धार्मिक त्योहारों और राष्ट्रीय नायकों से निपटने वाले पर्यावरणीय अध्ययन विविधता और मानव समानता के ज्ञान और सम्मान का विस्तार करते हैं।

- बच्चों में स्वतंत्र भारत की समझ भी विकसित होती है क्योंकि यह स्वतंत्रता संग्राम के दौरान विकसित हुआ था। राष्ट्र के लक्ष्यों और संविधान की मुख्य विशेषताओं के विषय में सीखना – मौलिक अधिकार, राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत, और मौलिक कर्तव्यों, साथ ही

धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र – मानवाधिकारों को बढ़ावा देने में सहायता कर सकते हैं।

उच्च प्राथमिक स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा

उच्च-प्राथमिक चरण में, मानवाधिकार शिक्षा के लिए प्रासंगिक प्रमुख विषय क्षेत्र सामाजिक अध्ययन, विज्ञान और भाषाएं हैं।

• इतिहास पाठ्यक्रम मुख्य रूप से भारतीय इतिहास से संबंधित हैं और सामान्य रूप से, विश्व सभ्यता के इतिहास के साथ। वे विविधता को समझने और दूसरों के अधिकारों के लिए विचार करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

• मानव अधिकारों का आयाम युगों से भारतीय समाज की एक महत्वपूर्ण समझ प्रदान करने में निहित है, जिसमें महिलाओं की स्थिति और जाति व्यवस्था द्वारा बनाई गई असमानताओं पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

• बच्चों को विधायी सुधारों और महिलाओं और बच्चों के उत्थान में अंतर्राष्ट्रीय संगठनों की भूमिका के विषयमें जागरूक किया जाना चाहिए।

• भूगोल में पाठ्यक्रम बच्चों को विभिन्न संस्कृतियों द्वारा जीवन के विभिन्न तरीकों, अन्योन्याश्रितता और सामान्य मूल्यों को साझा करने के लिए प्रशंसा विकसित करने में सहायता करता है। नागरिक शास्त्र लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद और राष्ट्रीय एकीकरण के मूल्यों को बढ़ावा देने में सहायता करता है। इसमें पर्यावरण, हथियारों की दौड़

और मानवाधिकारों से संबंधित मुद्दों का अध्ययन भी सम्मिलित है। मानव अधिकारों की अवधारणा और धर्मनिरपेक्षता और लोकतंत्र के आदर्शों के मध्य अंतर्संबंध से छात्र को परिचित कराना संभव है।

• भाषा में सामग्री मानव अधिकारों, अंतर्राष्ट्रीय समझ और वैश्विक महत्व के संबंधित मुद्दों के विषय में जागरूकता को बढ़ावा देने में सहायता करती है। यह लोक कथाओं, किंवदंतियों, कविताओं, निबंधों और नाटकों के माध्यम से व्यक्त अंतर्निहित मानवतावादी मूल्यों की सराहना में सहायता करता है।

• एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण पैदा करने पर जोर दिया जाता है और इस तरह जाति, लिंग या धर्म के संकीर्ण विचार के आधार पर रूढ़िवाद और पूर्वाग्रह का मुकाबला करने में सहायता मिलती है। विज्ञान पाठ्यक्रम के दिशानिर्देश कृषि, स्वास्थ्य और पोषण, पर्यावरण संरक्षण, ऊर्जा, भौतिक संसाधनों से संबंधित प्रक्रियाओं और समस्या क्षेत्रों की समझ को बढ़ावा देने पर भी जोर देते हैं, और, अधिक महत्वपूर्ण, वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करना।

माध्यमिक स्तर पर मानवाधिकार शिक्षा

माध्यमिक विद्यालय मानव अधिकारों को पढ़ाने और अधिकारों और कर्तव्यों का अभ्यास और पालन करने के अवसरों की एक विस्तृत और विविध श्रृंखला प्रदान करते हैं।

• साहित्य और भाषा कक्षाओं का उपयोग अन्य देशों में स्कूलों के साथ सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने के साथ-साथ सामाजिक

संबंधों, शांति, स्वतंत्रता और न्याय को बढ़ावा देने के लिए किया जा सकता है।

• इस स्तर पर, "वैश्विक परिप्रेक्ष्य" और "प्रमुख चिंताओं" को सामाजिक विज्ञान में एकीकृत किया जाता है।

• मानव अधिकारों को निम्नलिखित के संदर्भ और समझ में पढ़ाया जा सकता है:

o "छोटा" समाज - पारिवारिक जीवन, स्कूल और समुदाय;

o "बड़ा" समाज - समुदाय, देश और राज्य;

o सरकार के रूप - लोकतांत्रिक, तानाशाही, संसदीय;

o संयुक्त राष्ट्र;

o आज की दुनिया - पूर्व-पश्चिम की समस्याएं, आयुध, घटनाएं और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं में व्यक्तित्व;

o हमारे आस-पास की दुनिया - अलग-अलग देशों का अध्ययन;

o परिवार और समाज - आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अन्योन्याश्रितता; और

o धर्म और जीवन दर्शन - हम किस में विश्वास करते हैं? विभिन्न धर्मों, पारंपरिक मान्यताओं और प्रथाओं का विश्लेषण।

• इतिहास मानव अधिकारों के अध्ययन की अनुमति देता है क्योंकि इसमें लोकतंत्र की वृद्धि, ट्रेड यूनियनों का विकास, सामाजिक सुधार

और स्वतंत्रता आंदोलन जैसे विषय सम्मिलित हैं। यह छात्रों को मानव अधिकारों पर कुछ महत्वपूर्ण घोषणाओं से भी परिचित कराता है, स्वतंत्रता की अमेरिकी घोषणा से लेकर मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा तक।

• भूगोल पर्यावरण और प्रदूषण के मुद्दों और भेद राष्ट्रीय पारिस्थितिक समस्याओं के अध्ययन पर जोर देता है।

• नागरिक शास्त्र भारतीय लोकतंत्र पर केंद्रित है, जिसमें व्यक्ति और समाज, लोकतांत्रिक नागरिकता, संविधान, न्यायपालिका, लोकतंत्र, विदेश नीति, संयुक्त राष्ट्र, विश्व समस्याएं (मानवाधिकार, निरस्त्रीकरण, नई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था, आदि) जैसे विषय सम्मिलित हैं।

• अर्थशास्त्र मुख्य रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था के अध्ययन पर केंद्रित है – आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय – उपभोक्ताओं के अधिकारों और उपभोक्ता संरक्षण जैसे सामग्री क्षेत्रों को कवर करके।

• विज्ञान वैज्ञानिक स्वभाव के विकास पर जोर देता है; सामाजिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों की खेती; और विज्ञान का संभावित दुरुपयोग। जीव विज्ञान मानव अधिकारों और सामाजिक पूर्वाग्रह के लिए वैज्ञानिक आधारों का पता लगा सकता है। विज्ञान में स्वास्थ्य, बीमारियों और विश्व स्वास्थ्य संगठन के योगदान का शिक्षण भी सम्मिलित हो सकता है।

• गणित प्राथमिक सांख्यिकी और ग्राफिंग से संबंधित कौशल सिखा सकते हैं, जिसका उपयोग भोजन और जनसंख्या, कृषि और औद्योगिक आउटपुट, हथियारों और शिक्षा पर व्यय और अन्य विषयों पर आंकड़ों

की व्याख्या करने के लिए किया जा सकता है जो बुनियादी मानवाधिकारों पर असर डालते हैं। प्राकृतिक विज्ञान और गणित भी आधुनिक वैज्ञानिक और तकनीकी कार्य को दर्शाते हैं जो या तो मानव जाति को लाभ पहुंचा सकते हैं या इसके नुकसान के लिए काम कर सकते हैं।

मानव अधिकार और लैंगिक समानता।

मानव अधिकार के रूप में महिलाओं के अधिकारों की मान्यता भेद राष्ट्रीय कानून बन गई जब संयुक्त राष्ट्र महासभा ने **19** दिसंबर **1979** को **CEDAW (**महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव के सभी रूपों के उन्मूलन पर कन्वेंशन) को अपनाया। भारतीय संविधान लिंग के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित करता है।

अनुच्छेद **23** मानव तस्करी यानी महिलाओं, बच्चों आदि पर रोक लगाता है। अनैतिक उद्देश्यों के लिए निपटाया नहीं जा सकता है।

अनुच्छेद **42** में कहा गया है कि राज्य काम की उचित और मानवीय स्थितियों और मातृत्व राहत को सुरक्षित करने के लिए प्रावधान करेगा।

भारतीय संसद ने **1961** में मातृत्व लाभ अधिनियम पारित किया। यह महिला कर्मचारियों के रोजगार को नियंत्रित करता है।

घरेलू हिंसा अधिनियम, **2005** पत्नी या लिव-इन पार्टनर को सुरक्षा प्रदान करता है। घरेलू हिंसा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष शारीरिक, यौन, मौखिक, भावनात्मक या आर्थिक शोषण सम्मिलित हैं।

यह उपयुक्त समय है कि महिलाओं को उनके अधिकारों के विषय में जागरूक किया जाए ताकि वे उनके लिए लड़ सकें और अपनी गरिमा बनाए रख सकें। औपचारिक शिक्षा संस्थानों के साथ-साथ अनौपचारिक माध्यम सभी को शिक्षित करने में सहायता कर सकते हैं।

शैक्षिक नीतियां और मानव अधिकार

विभिन्न शिक्षा आयोगों की रिपोर्टों और शैक्षिक नीति के वक्तव्य ने शिक्षा में सुधार और विकास के प्रयास के हिस्से के रूप में मानवाधिकारों में शिक्षा और शिक्षा के अधिकार के महत्व को स्पष्ट किया है। वे महिलाओं, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अल्पसंख्यकों और विकलांगों को राष्ट्रीय शैक्षिक प्रणाली में विशेष दर्जा देते हैं, और मूल्य शिक्षा पर जोर देते हैं। वे मुख्य पाठ्यक्रम के बुनियादी घटकों को भी परिभाषित करते हैं, जो कुछ महत्वपूर्ण मानवाधिकार चिंताओं को दर्शाता है।

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचा **1986** की राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा प्रदान किया गया है। इसमें उन मूल तत्वों को सम्मिलित किया गया है जो संकीर्ण विषय सीमाओं को काटते हैं और इसे भारत की साझा सांस्कृतिक विरासत, समतावाद, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, लिंगों की समानता, छोटे परिवार के मानदंडों का पालन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण जैसे मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन किया गया है। एनसीईआरटी, **2000** भी इन मूल तत्वों को पुनः प्रस्तुत करता है और पुष्टि करता है जो निम्नानुसार हैं-

i. भारत का स्वतंत्रता संग्राम

ii. संवैधानिक दायित्व और कर्तव्य

iii.एक नागरिक की राष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा देना और विकसित करना

iv.भारत की सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण और पुनर्स्थापन

v. समतावाद यानी समता, समानता और निष्पक्षता

vi.लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता

vii. परिवार और सामाजिक मानदंडों का पालन करें

viii. मिथकों और अंधविश्वास को समाप्त करें और वैज्ञानिक दृष्टिकोण और स्वभाव विकसित करें।

ix.कोई सामाजिक बाधा नहीं

x. लिंग, जाति, धर्म या पंथ के आधार पर कोई भेदभाव नहीं।

संविधान के अनुच्छेद **51**ए में कहा गया है कि इन मुख्य घटकों को स्कूली पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की आवश्यकता है।

निरक्षरता और गरीबी के संदर्भ में मानवाधिकार शिक्षा

अंतर्राष्ट्रीय गरीबी उन्मूलन दिवस पर, तत्कालीन संयुक्त राष्ट्र महासचिव, श्री कोफी अन्नम "हमने कितनी बार कहा है कि गरीबी मानव गरिमा के साथ असंगत थी"। गरीबी का कारण निरक्षरता, बेरोजगारी, असमानता आदि जैसे विभिन्न कारकों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। इन कारकों को शिक्षा द्वारा दूर किया जा सकता है और इसे प्राप्त करके कोई भी अपने अधिकारों को समझ सकता है। यह व्यक्ति को नेतृत्व करने के लिए बेहतर

जीवन दे सकता है। किसी भी तरह राजनीतिक दल और कुछ अन्य एजेंसियां या तो गरीबी को कम नहीं करना चाहती हैं या निरक्षरता को दूर करना चाहती हैं। यह उन लोगों से राजनीतिक लाभ अर्जित करने के लिए हो सकता है जो अपने अधिकारों के विषयमें नहीं जानते हैं। अगर हम अपने आस-पास के स्लम इलाकों को देखें तो समझा जा सकता है कि यह क्यों बन गया है।

गरीबी और अशिक्षा को दूर करना मुश्किल है। ऐसा इसलिए है क्योंकि माता-पिता और बच्चे दोनों अपनी आजीविका के लिए कमाने के लिए लगे हुए हैं। नतीजतन, स्थिति जस की तस बनी हुई है। विभिन्न सरकारी नीतियां और गैर सरकारी संगठन गरीबों के मध्य साक्षरता और जागरूकता फैलाने की कोशिश करते हैं लेकिन प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। इन परिवारों में महिलाओं की स्थिति अधिक गंभीर है। इस प्रकार इस मुद्दे को संबंधित प्राधिकारियों द्वारा गंभीरता से लिए जाने की आवश्यकता है। इसके लिए विभिन्न तरीकों को अपनाया जा सकता है जैसे:

- सीखते हुए कमाएं - विभिन्न तरीकों से बच्चों और अन्य लोगों को शिक्षित किया जा सकता है और कमाने का प्रावधान भी प्रदान किया जा सकता है।
- झुग्गियों वाले क्षेत्रों में कुटीर उद्योग, लघु व्यवसाय को पुनर्जीवित किया जा सकता है
- स्वच्छता के विषय में उन्हें जागरूक करने के दृष्टिकोण सिखाए जा सकते हैं

• नाटक, लोक गीत आदि द्वारा मानव अधिकारों का पूरा ज्ञान दिया जा सकता है।

• रात्रि कालीन विद्यालय की व्यवस्था की जा सकती है।

• कार्य स्थलों आदि पर श्रमिकों के बच्चों के लिए शिक्षण की व्यवस्था।

• बालिकाओं और महिलाओं को आत्मरक्षा के गुर सिखाए

• सभी को यौन ज्ञान प्रदान करना

• उन्हें स्वतंत्र और आत्मविश्वासी बनाने के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करना।

अध्याय - 10

मानव अधिकारों के विषय में निर्णय

मानव अधिकारों के विषयमें कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे और प्रमुख निर्णय

मानवाधिकारों और मौलिक अधिकारों के अस्तित्व के बावजूद, मनुष्य के रूप में, हमें अक्सर कई कठिनाइयों, समस्याओं, उल्लंघनों और संबंधित मुद्दों का सामना करना पड़ता है। ये मुद्दे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय दोनों स्तरों पर मौजूद हैं। आइए अब हम कुछ विशिष्ट मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करें जिन पर विशेष रूप से भारत में ध्यान देने की आवश्यकता है:

- अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानकों और व्यक्तियों के लिए उनकी प्रासंगिकता के विषय में सार्वजनिक जागरूकता सुनिश्चित करना।
- बहु-हितधारक दृष्टिकोण के माध्यम से हिंसा को संबोधित करने के लिए नागरिक समाज, सरकार और व्यवसायों के साथ सहयोग करना।
- महिलाओं के अधिकारों की सुरक्षा के लिए अभ्यासकर्ताओं और नीति निर्माताओं के बीच संवाद की सुविधा प्रदान करके प्रभावी नीतियों को बढ़ावा देना।
- मानवीय कानून, मानवाधिकारों के उल्लंघन और प्रवासन से संबंधित मुद्दों को संबोधित करना।
- श्रम अधिकारों, आर्थिक मामलों और निष्पक्ष व्यापार प्रथाओं के उल्लंघन का मुकाबला करना।

- संघर्षों और हिंसा की स्थिति में शांति, सुरक्षा और निरस्त्रीकरण बहाल करना।
- शरणार्थी अधिकारों की सुरक्षा और कायम रखना सुनिश्चित करना।
- अस्पतालों और स्कूलों को आतंकवाद का संवेदनशील निशाना बनने से बचाना और आवश्यक कार्रवाई करना।
- खोखली घोषणाओं और आत्मकेंद्रितता के बजाय लोगों की भलाई के लिए सामूहिक प्रयासों को बढ़ावा देना।
- प्रतिस्पर्धा और आत्मकेंद्रित हितों के कारण अंतरराष्ट्रीय समुदाय में हुए विखंडन पर काबू पाना।
- मानवता को एक साथ बांधने वाले कानूनों, संस्थानों और मूल्यों के सामान्य सेट को मजबूत करना, क्योंकि उनके क्षरण के परिणामस्वरूप अभाव, दुख, अन्याय और रक्तपात होता है।
- सार्वजनिक स्वतंत्रता पर प्रतिबंध, नागरिक समाज की गतिविधियों पर कार्रवाई और मानवाधिकार रक्षकों को धमकियों का मुकाबला करना।
- न्यायिक संस्थानों के संरक्षण और कामकाज को सुनिश्चित करना जो सत्ता पर नियंत्रण के रूप में कार्य कर सकते हैं।
- शासन में पारदर्शिता, जवाबदेही और विश्वास के मुद्दों को संबोधित करना।
- शिक्षा, एक सुरक्षित समाज और पर्याप्त स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच जैसी बुनियादी आर्थिक और सामाजिक वस्तुओं से संबंधित चुनौतियों से निपटना।
- मानवाधिकारों की अमूल्य प्रकृति को पहचानते हुए, क्योंकि सीमाओं के पार उनके इनकार से विभिन्न प्रकार की क्षति होती है।

- मानवता को लाभ पहुंचाने और प्रत्येक राज्य के राष्ट्रीय हित को बनाए रखने के साधन के रूप में मानवाधिकारों में निवेश करना।
- एक न्यायपूर्ण और लचीले समाज का निर्माण करना जो महिलाओं और हाशिए पर रहने वाले समूहों सहित सभी व्यक्तियों के अधिकारों का सम्मान करता हो।
- अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंडों के पूर्ण अनुपालन को बढ़ावा देना।
- प्रासंगिक मानवाधिकार दायित्वों और न्यूनतम मानकों के साथ पुलिस की कार्रवाइयों और अन्य बलों के आचरण को संरेखित करना।
- महिलाओं और बच्चों की सुरक्षा और कल्याण से संबंधित चिंताओं को संबोधित करना, जो अक्सर बलात्कार, यौन शोषण और मानवाधिकार उल्लंघन के अन्य रूपों के कारण भय का अनुभव करते हैं।
- दैनिक जीवन में भ्रष्टाचार, राजनीतिक प्रभाव और सत्ता के दुरुपयोग का मुकाबला करना।
- यह स्वीकार करते हुए कि गरीबी नैतिक और नैतिक मूल्यों को नष्ट कर देती है, जिससे भ्रष्टाचार, आतंकवाद, संगठित अपराध, घोटाले, हत्याएं और डकैतियां बढ़ जाती हैं।

उपरोक्त उल्लिखित ये मुद्दे भारत के लिए प्रासंगिक हैं, क्योंकि देश को कई चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है, जिन पर ध्यान देने और मानवाधिकारों की रक्षा और बढ़ावा देने के लिए ठोस प्रयासों की आवश्यकता है।

- शारीरिक और मानसिक शोषण.
- बेगारी
- धार्मिक हिंसा
- जाति से संबंधित मुद्दे

- भारत में LGBT अधिकार
- लिंग भेद
- शिक्षा
- गरीबी और बेरोजगारी

कुछ ऐतिहासिक फैसले

- कानून के रूप में संशोधन **(**आईसी गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य**) – 1967**।

संसद को व्यक्तिगत अधिकारों को छीनने से रोका गया।

1967 में गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य के अत्यधिक प्रसिद्ध मामले में सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि संसद संविधान में उल्लिखित व्यक्तियों के किसी भी मौलिक अधिकारों में कटौती नहीं कर सकती है। संसद की अति महत्वपूर्ण महत्वाकांक्षाएं हवा में समा गईं।

इसी तरह का मामला **1973** में केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य के मामले में सुना गया था।

- "समानता के अधिकार का उल्लंघन"

इंदिरा गांधी के पतन की शुरुआत **(**इंदिरा गांधी बनाम राज नारायण**) - 1975**

चुनाव विवादों के संबंध में इस ऐतिहासिक मामले में**,** प्राथमिक मुद्दा **39** वें संशोधन अधिनियम के खंड **4** की वैधता थी। सुप्रीम कोर्ट ने खंड **4** को इस आधार पर असंवैधानिक और शून्य माना कि यह अनुच्छेद **14** में निहित समानता के अधिकार से पूरी तरह से इनकार है। सुप्रीम कोर्ट ने केशवानंद भारती मामले में निर्धारित "बुनियादी विशेषताओं" के रूप में निम्नलिखित

विशेषताओं को भी जोड़ा - लोकतंत्र, न्यायिक समीक्षा, कानून का शासन और अनुच्छेद **32** के अंतर्गत सुप्रीम कोर्ट का अधिकार क्षेत्र। उस समय आपातकाल लगाया गया था।

- 'मौलिक अधिकार का उल्लंघन'

  भारत के लिए एक कदम पीछे **(**एडीएम जबलपुर बनाम शिवाकांत शुक्ला केस**) - 1976**

  इस ऐतिहासिक फैसले में**,** सुप्रीम कोर्ट ने घोषणा की कि आपातकाल के दौरान अनुच्छेद **14, 21** और **22** के उल्लंघन के लिए अदालत जाने के नागरिकों के अधिकार निलंबित रहेंगे। व्यक्तिगत स्वतंत्रता की विजय **(**मेनका गांधी बनाम भारत सरकार**) 1978.**

- व्यक्तिगत अधिकारों की संवैधानिक वैधता बरकरार रखी गई **(**वामन राव बनाम भारत संघ**) - 1981,** सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि संसद ने संवैधानिक संशोधन की अपनी शक्ति का उल्लंघन किया था। यह मामला भारत के संवैधानिक न्यायशास्त्र में एक ऐतिहासिक निर्णय था। इस मामले ने केशवानंद भारती मामले से पहले और बाद के अधिनियमों के मध्य निर्धारण की एक अच्छी रेखा बनाकर मौलिक अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित शिकायतों को संबोधित करने की एक संतोषजनक विधि निर्धारित करने में सहायता की है।
- महिला कार्यबल के लिए फाउंडेशन **(**विशाखा बनाम राजस्थान राज्य**) – 1997** यौन उत्पीड़न की परिभाषा और इससे निपटने के लिए दिशानिर्देश निर्धारित किए गए थे। इस मामले में विशाखा और अन्य महिला समूहों ने संविधान के अनुच्छेद **14, 19** और **21** के अंतर्गत कामकाजी महिलाओं के लिए मौलिक अधिकारों को लागू करने के लिए राजस्थान राज्य और भारत संघ के विरुद्ध

एक जनहित याचिका (पीआईएल) दायर की। इसके परिणामस्वरूप 'विशाखा दिशानिर्देश' की शुरुआत हुई। अगस्त 1997 के फैसले ने कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की बुनियादी परिभाषाएं भी प्रदान कीं और इससे निपटने के लिए दिशानिर्देश प्रदान किए।

- यौन उत्पीड़न के शिकार हैं या नहीं? (ओम प्रकाश बनाम दिल बहार) – 2006
  विवादास्पद फैसले के कई विरोधी थे। उपरोक्त मामले में सुप्रीम कोर्ट ने घोषणा की कि बलात्कार के आरोपी को पीड़िता के एकमात्र साक्ष्य पर दोषी ठहराया जा सकता है, बावजूद इसके कि चिकित्सा साक्ष्य यह साबित नहीं करते हैं कि यह बलात्कार था।
- प्रियदर्शिनी मट्टू केस- अक्टूबर 2006 में 14 साल से चली आ रही न्याय की लड़ाई का नतीजा निकला। इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने 23 वर्षीय कानून की छात्रा प्रियदर्शिनी मट्टू के बलात्कार और हत्या के मुख्य आरोपी संतोष सिंह (पूर्व आईपीएस अधिकारी के बेटे) की मौत की सजा को आजीवन कारावास में बदल दिया था।
- जेसिका लाल हत्या मामला - दिसंबर 2006
  नागरिक समाज को बड़ा लाभ होता है। नई दिल्ली में बारटेंडर के रूप में काम करने वाली एक मॉडल की गोली मारकर हत्या कर दी गई थी और मुख्य आरोपी मनु शर्मा, जो कांग्रेस सांसद विनोद शर्मा का बेटा था, जिसे शुरू में फरवरी 2006 में बरी कर दिया गया था, को बाद में दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा फास्ट ट्रैक सुनवाई द्वारा दिसंबर 2006 में आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई थी। 19 अप्रैल 2010 को, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सजा को मंजूरी दी।
- निठारी कांड - 2009
  कोली को कई बार मौत की सजा सुनाई गई थी। एक विशेष सत्र अदालत ने 2009 में सुरिंदर कोली और मोनिंदर सिंह पंधेर को 14 वर्षीय लड़की की हत्या

के लिए मौत की सजा सुनाई थी। माना जाता है कि **2006** के माध्यम से की गई हत्याओं में नरभक्षण के उदाहरण सम्मिलित थे। पंढेर को बाद में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने बरी कर दिया था और उसे जमानत पर रिहा कर दिया गया था, लेकिन कोली की मौत की सजा को उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय दोनों ने बरकरार रखा था।

- धारा **377** मामला **(**नाज़ फाउंडेशन बनाम राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार**)** **-** जुलाई **2009**

  'समलैंगिकों के लिए खुशी का कारण'।

  2009 में सुप्रीम कोर्ट ने भारतीय दंड संहिता, **1860** की धारा **377** को असंवैधानिक घोषित कर दिया। उक्त धारा पहले "प्रकृति के आदेश के विरुद्ध " यौन गतिविधियों को अपराध मानती थी, जिसमें समलैंगिक कृत्य सम्मिलित थे। जबकि **,** इस फैसले को दिसंबर**, 2013** में सुप्रीम कोर्ट ने पलट दिया था।

- विवादास्पद अयोध्या **(**अयोध्या राम मंदिर बाबरी मस्जिद मामला**)** के लिए मामूली समापन **-** सितंबर **2010**

  'फैसला सुनाया कि भूमि को तीन भागों में विभाजित किया जाना था'।

  इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया था कि अयोध्या में विवादित भूमि जहां बाबरी मस्जिद **1992** में ध्वस्त होने से पहले स्थित थी, को तीन भागों में विभाजित किया जाएगा। जमीन का दो तिहाई हिस्सा हिंदू वादी और एक तिहाई सुन्नी मुस्लिम वक्फ बोर्ड को दिया जाना था।

- बाल यौन उत्पीड़न को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए **- 2011**

  'बाल अपचारियों के लिए सजा पर्याप्त नहीं'

  सुप्रीम कोर्ट ने पीडोफिलिया मामले में बॉम्बे हाईकोर्ट द्वारा बरी किए गए दो ब्रिटिश नागरिकों की दोषसिद्धि और छह साल के कठोर कारावास की सजा को बहाल कर दिया। पीठ ने आरोपी को सजा की शेष अवधि पूरी करने का

निर्देश दिया। एक ऐतिहासिक फैसले में, सुप्रीम कोर्ट ने कहा, "बच्चे मानवता के लिए सबसे बड़ा उपहार हैं। बच्चों का यौन शोषण सबसे जघन्य अपराधों में से एक है।

- नोटा निर्णय - **2013**

  'उम्मीदवारों को खारिज करने के अधिकार को औपचारिक रूप दिया गया'

  2013 में, सुप्रीम कोर्ट ने देश के मतदाताओं के लिए एक विकल्प के रूप में नकारात्मक मतदान शुरू किया। इस फैसले के अनुसार, एक व्यक्ति के पास किसी भी उम्मीदवार **(**उपरोक्त में से कोई नहीं**)** के लिए मतदान नहीं करने का विकल्प होगा यदि वे किसी भी उम्मीदवार को योग्य नहीं पाते हैं।

- निर्भया कांड ने देश को हिलाकर रख दिया - **March 2014**

  'न्यायपालिका को कार्रवाई के लिए प्रेरित किया गया और यौन अपराधियों के लिए कानूनों को मजबूत किया गया'

  निर्भया के भयावह सामूहिक बलात्कार मामले में पांच में से चार आरोपियों को दोषी ठहराया गया और मौत की सजा दी गई। इस मामले के परिणामस्वरूप आपराधिक कानून **(**संशोधन**)** अधिनियम**, 2013** भी पेश किया गया जो भारतीय दंड संहिता**, 1860** के अंतर्गत बलात्कार की परिभाषा में संशोधन का प्रावधान करता है**;** दंड प्रक्रिया संहिता**, 1973;** भारतीय साक्ष्य अधिनियम**, 1872** और यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम**, 2012**।

- एसिड की बिक्री पर अंकुश **(2013)**

  कोर्ट ने कहा कि एसिड केवल उन्हीं लोगों को बेचा जाना चाहिए जो वैध पहचान पत्र दिखाते हैं। खरीदारों को यह भी बताना होगा कि उन्हें रसायन की आवश्यकता क्यों है और बिक्री की सूचना पुलिस को देनी होगी।

  केस**:** एसिड हमले के बहुत सारे घटनाओं और **change.org** याचिकाओं पर विचार करने के बाद, सुप्रीम कोर्ट ने आखिरकार कार्रवाई करने का फैसला

किया और संघीय सरकारों को देश में एसिड की बिक्री को विनियमित करने का आदेश दिया। कोर्ट ने कहा कि एसिड केवल उन्हीं लोगों को बेचा जाना चाहिए जो वैध पहचान पत्र प्रदान करते हैं।

खरीदारों को यह भी बताना होगा कि उन्हें रसायन की आवश्यकता क्यों है और बिक्री की सूचना पुलिस को देनी होगी। पीठ ने कहा, 'हम सभी राज्यों के मुख्य सचिवों और केंद्र शासित प्रदेशों के प्रशासकों को निर्देश देते हैं कि वे **18** जुलाई के आदेश में दिए गए निर्देश का पालन करें और तेजाब की बिक्री को जल्द से जल्द और संभवत: **31** मार्च **2014** तक विनियमित करने के लिए केंद्र द्वारा बनाए गए मॉडल नियमों के अनुरूप नियम बनाएं। इसके अतिरिक्त , उन्होंने सभी मुख्य सचिवों से एसिड अटैक पीड़ितों को प्लास्टिक सर्जरी सहित मुफ्त उपचार प्रदान करने पर जवाब दाखिल करने के लिए भी कहा।

- तीसरे लिंग को मान्यता **(**राष्ट्रीय विधिक सेवा प्राधिकरण बनाम भारत संघ**)** - अप्रैल **2014**

  'तीसरे लिंग को अधिकारों के साथ नागरिक के रूप में स्वीकार किया गया'

  उच्चतम न्यायालय ने अप्रैल **2014** में एक ऐतिहासिक फैसले में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को तीसरे लिंग के रूप में मान्यता दी थी और सरकार को उन्हें अल्पसंख्यक मानने तथा नौकरियों, शिक्षा और अन्य सुविधाओं में आरक्षण देने का आदेश दिया था।

अध्याय - 11

भारत में मानव अधिकार आयोग

दुनिया के सबसे बड़े संप्रभु, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में अपनी स्थिति के बावजूद, देश के विशाल आकार, बड़ी आबादी, व्यापक गरीबी और शैक्षिक कमियों के कारण भारत में मानवाधिकार एक जटिल चुनौती पेश करते हैं। ह्यूमन राइट्स वॉच की 2016 की रिपोर्ट इन कारकों को स्वीकार करती है, लेकिन भारत की मानवाधिकार स्थिति के बारे में भी चिंता जताती है, जिसमें नागरिक समाज समूहों द्वारा सामना किए जाने वाले उत्पीड़न और सरकारी आलोचकों के खिलाफ धमकी और मुकदमों का उल्लेख किया गया है।

मानवाधिकारों की रक्षा के लिए प्रभावी तंत्र की स्थापना की आवश्यकता है। न्यायमूर्ति टी.के. के अनुसार थॉमेन के अनुसार, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (एनएचआरसी) का गठन मानव अधिकारों को खतरे में डालने वाले तत्काल मुद्दों के समाधान के लिए किया गया था। मानवाधिकारों के प्रहरी के रूप में कार्य करते हुए, एनएचआरसी इन अधिकारों को बनाए रखने और उनकी सुरक्षा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत ने इन अंतर्राष्ट्रीय मानकों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता

प्रदर्शित करते हुए 1979 में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (ICESCR) और नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय अनुबंध (ICCPR) पर हस्ताक्षर किए।

12 अक्टूबर, 1993 को स्थापित भारत का NHRC, मानवाधिकार संरक्षण अध्यादेश (28 सितंबर, 1993) के तहत एक स्वायत्त सार्वजनिक निकाय के रूप में कार्य करता है। इसे "मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम," 1993 (टीपीएचआरए) के अधिनियमन के माध्यम से कानूनी आधार प्राप्त हुआ। एनएचआरसी की प्राथमिक जिम्मेदारी अधिनियम द्वारा परिभाषित मानवाधिकारों की रक्षा करना और उन्हें बढ़ावा देना है, जिसमें जीवन, स्वतंत्रता, समानता और संविधान द्वारा गारंटीकृत या अंतरराष्ट्रीय अनुबंधों में शामिल व्यक्तियों की गरिमा से संबंधित अधिकार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, 1993 के मानवाधिकार अधिनियम ने मानवाधिकार संरक्षण को और मजबूत करने के लिए एनएचआरसी के अलावा, राज्य स्तर पर राज्य मानवाधिकार आयोग (एसएचआरसी) और मानवाधिकार न्यायालयों की स्थापना की सिफारिश की।

एनएचआरसी के कार्य

टीपीएचआरए के अधिदेश के तहत, एनएचआरसी को निम्नलिखित कार्य सौंपे गए हैं:

- पूछताछ करना: एनएचआरसी के पास मानव अधिकारों के उल्लंघन या लोक सेवकों द्वारा ऐसे उल्लंघनों की रोकथाम में लापरवाही के मामलों की सक्रिय या प्रतिक्रियाशील जांच करने का अधिकार है।
- अदालती कार्यवाही में हस्तक्षेप: अदालत की अनुमति से, NHRC मानवाधिकार मुद्दों से संबंधित कानूनी कार्यवाही में हस्तक्षेप कर सकता है।

इसे कैदियों की जीवन स्थितियों का अध्ययन करने और उनके सुधार के लिए सिफारिशें करने के लिए राज्य सरकार के नियंत्रण में जेलों या अन्य संस्थानों का दौरा करने की भी शक्ति है।

- सुरक्षा उपायों की समीक्षा करना और उपायों की सिफारिश करना: एनएचआरसी मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिए संविधान या किसी मौजूदा कानून द्वारा प्रदान किए गए सुरक्षा उपायों की समीक्षा करने के लिए जिम्मेदार है। यह उनके प्रभावी कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए उपायों की सिफारिश कर सकता है।
- मानवाधिकारों को बाधित करने वाले कारकों को संबोधित करना: एनएचआरसी आतंकवादी कृत्यों सहित उन कारकों की जांच करता है, जो मानवाधिकारों के आनंद में बाधा डालते हैं और उचित उपचारात्मक उपायों की सिफारिश करते हैं।
- अंतरराष्ट्रीय उपकरणों पर अध्ययन और सिफारिशें: एनएचआरसी मानवाधिकारों से संबंधित संधियों और अन्य अंतरराष्ट्रीय उपकरणों का अध्ययन करता है और उनके प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें प्रदान करता है।
- अनुसंधान को बढ़ावा देना: एनएचआरसी समझ और जागरूकता बढ़ाने के लिए मानव अधिकारों के क्षेत्र में अनुसंधान करता है और उसे बढ़ावा देता है।
- मानवाधिकार शिक्षा और जागरूकता: एनएचआरसी मानव अधिकारों के बारे में समाज के विभिन्न वर्गों को शिक्षित करने के लिए गतिविधियों में संलग्न है। यह प्रकाशनों, मीडिया आउटरीच, सेमिनारों और अन्य माध्यमों से इन अधिकारों की सुरक्षा के लिए उपलब्ध सुरक्षा उपायों के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देता है।

- गैर सरकारी संगठनों और संस्थानों को समर्थन: एनएचआरसी मानव अधिकारों के क्षेत्र में काम करने वाले गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) और संस्थानों के प्रयासों को प्रोत्साहित करता है। यह मानवाधिकार संरक्षण से संबंधित अपने कार्यों को पूरा करने के लिए अदालतों या कार्यालयों से सार्वजनिक रिकॉर्ड या उनकी प्रतियों की मांग कर सकता है।

एनएचआरसी की संरचना

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग में निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

- एक अध्यक्ष, भारत के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायाधीश
- एक सदस्य जो भारत के सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश है, या रहा है
- एक सदस्य जो उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश है या रहा है
- मानव अधिकारों से संबंधित घटनाओं का ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखने वाले व्यक्तियों में से दो सदस्यों को नियुक्त किया जाएगा।
- इसके अतिरिक्त , चार राष्ट्रीय आयोगों (अल्पसंख्यक, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति, महिला) के अध्यक्ष पदेन सदस्यों के रूप में कार्य करते हैं।

  नोट: सुप्रीम कोर्ट के मौजूदा न्यायाधीश या किसी भी उच्च न्यायालय के वर्तमान मुख्य न्यायाधीश को केवल सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श के बाद ही नियुक्त किया जा सकता है।

अध्यक्ष और सदस्य

एनएचआरसी के अध्यक्ष न्यायमूर्ति श्री एचएल दत्तू हैं और अन्य सदस्य हैं:

- न्यायमूर्ति श्री साइरेक जोसेफ

- न्यायमूर्ति श्री डी. मुरुगेसन
- श्री शरद चन्द्र सिन्हा

पदेन सदस्य:-

- श्री नसीम अहमद, अध्यक्ष, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग
- पन्ना लाल पुनियाअध्यक्ष राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग
- डा रामेश्वर उरांवअध्यक्ष राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग
- ललिता कुमारमंगलमअध्यक्ष राष्ट्रीय महिला आयोग

सदस्यों की नियुक्ति :-

टीएफआरए की धारा **3** और **4** में एनएचआरसी में नियुक्ति के लिए नियम निर्धारित किए गए हैं। एनएचआरसी के अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति भारत के राष्ट्रपति द्वारा एक समिति की सिफारिश पर की जाती है, जिसमें सम्मिलित हैं:

- प्रधानमंत्री (अध्यक्ष)

गृह मंत्री

- लोक सभा में विपक्ष के नेता (लोक सभा)
- राज्य सभा में विपक्ष के नेता (राज्यों की परिषद)
- लोक सभा का अध्यक्ष (लोक सभा)
- राज्य सभा के उपसभापति (राज्यों की परिषद)

पूर्व अध्यक्ष:-

	नाम	कार्यकाल
1.	न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्रा	12 अक्टूबर 1993 - 24 नवंबर 1996
2.	न्यायमूर्ति एम एन वेंकटचलैया	26 नवंबर 1996 - 24 अक्टूबर 1999
3.	न्यायमूर्ति जे एस वर्मा	4 नवंबर 1999 - 17 जनवरी 2003
4.	न्यायमूर्ति ए एस आनंद	17 फ़रवरी 2003 - 31 अक्टूबर 2006
5.	न्यायमूर्ति एस. राजेंद्र बाबू	2 अप्रैल 2007 - 31 मई 2009
6.	न्यायमूर्ति के. जी. बालाकृष्णन	7 जून 2010 - 11 मई 2015
7.	न्यायमूर्ति एच.एल. दत्तू	29 फ़रवरी 2016 – 2 दिसंबर 2020
8.	न्यायमूर्ति अरुण कुमार मिश्रा	02 जून 2021

राज्य मानवाधिकार आयोग

टीपीएचआरए, 1993 में लाए गए संशोधन के बाद, राज्य सरकारों ने टीपीएचआरए, 1993 (2006 के संशोधन अधिनियम के साथ) के अध्याय **V** के तहत उन्हें सौंपे गए कार्यों को करने के लिए राज्य मानवाधिकार आयोग (एसएचआरसी) का गठन किया है। वर्तमान में, भारत में 24 राज्यों ने **SHRCs** की स्थापना की है। ये राज्य

मानवाधिकार आयोग अपने-अपने राज्यों में मानवाधिकारों को बनाए रखने और उनकी रक्षा करने के लिए उत्तरदायी हैं।

राज्य आयोग	शहर	गठित तिथि
असम मानवाधिकार आयोग	गुवाहाटी	19 जनवरी, 1996
आंध्र प्रदेश राज्य मानवाधिकार आयोग	हैदराबाद	2 अगस्त, 2006
बिहार मानवाधिकार आयोग	पटना	3 जनवरी, 2000
छत्तीसगढ़ मानवाधिकार आयोग	रायपुर	16 अप्रैल, 2001
गुजरात राज्य मानवाधिकार आयोग	गांधीनगर	12 सितम्बर 2006
गोवा मानवाधिकार आयोग	पणजी	--
हिमाचल प्रदेश राज्य मानवाधिकार आयोग	शिमला	--
जम्मू और कश्मीर मानवाधिकार आयोग	श्रीनगर	जनवरी, 1997

केरल राज्य मानवाधिकार आयोग	**तिरूवनंत पुरम**	11 **दिसंबर**, 1998
कर्नाटक राज्य मानवाधिकार आयोग	**बंगलोर**	28 **जून**, 2005
मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग	**भोपाल**	1 **सितंबर**, 1995
महाराष्ट्र राज्य मानवाधिकार आयोग	**मुंबई**	6 **मार्च**, 2001
मणिपुर राज्य मानवाधिकार आयोग	**इम्फाल**	--
ओडिशा मानवाधिकार आयोग	**भुवनेश्वर**	27 **जनवरी**, 2000
पंजाब मानवाधिकार आयोग	चंडीगढ़	--
राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग	**जयपुर**	18 **जनवरी**, 1999
राज्य मानवाधिकार आयोग तमिलनाडु	**चेन्नई**	17 **अप्रैल**, 1997

उत्तर प्रदेश मानवाधिकार आयोग	**लखनऊ**	7 **अक्टूबर**, 2002
पश्चिम बंगाल मानवाधिकार आयोग	**कोलकाता**	8 **जनवरी**, 1994
झारखंड राज्य मानवाधिकार आयोग	**रांची**	--
सिक्किम राज्य मानवाधिकार आयोग	**गंगटोक**	18 **अक्टूबर**, 2008
उत्तराखंड मानवाधिकार आयोग	**देहरादून**	13 **मई**, 2013
हरियाणा मानवाधिकार आयोग	**चंडीगढ़**	--
त्रिपुरा मानवाधिकार आयोग	**अगरतला**	--

NHRC की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति

एनएचआरसी ने राष्ट्रीय मानवाधिकार संस्थानों (आईसीसी) की अंतर्राष्ट्रीय समन्वय समिति से "ए स्टेटस" मान्यता प्राप्त की है, जो पेरिस सिद्धांतों के पालन को दर्शाता है। ये सिद्धांत अक्टूबर 1991 में पेरिस में आयोजित मानवाधिकार विशेषज्ञों के एक सम्मेलन के दौरान स्थापित किए गए थे और बाद में संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा इसका समर्थन किया गया था। परिणामस्वरूप, आयोग आईसीसी और उसके क्षेत्रीय

उप-समूह, एशिया प्रशांत फोरम में भाग लेने के लिए पात्र है, और उसे संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार समितियों के विशिष्ट सत्रों में भाग लेने की अनुमति है।

मानवाधिकार शिक्षा के लिए एजेंसियां

मानवाधिकार शिक्षा केवल स्कूलों की जिम्मेदारी नहीं है; विभिन्न एजेंसियां और संगठन जागरूकता और समझ को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मानवाधिकारों पर शिक्षा परिवार के भीतर ही प्रारंभिक चरण में शुरू हो सकती है। जब माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्य अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होंगे, तो वे यह ज्ञान दूसरों को दे सकते हैं। हालाँकि, यह महत्वपूर्ण है कि परिवार के सदस्य स्वयं इन अधिकारों के बारे में साक्षर हों। मानव अधिकारों के बारे में लोगों को शिक्षित करने में कई राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संगठन सक्रिय रूप से शामिल हैं। ये संगठन इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए विविध तरीकों और माध्यमों का उपयोग करते हैं। मानवाधिकार शिक्षा के लिए समर्पित कुछ महत्वपूर्ण संगठनों की सूची नीचे प्रस्तुत की गई है:

- एंटी-स्लेवरी इंटरनेशनल
- सफलता (मानव अधिकार)
- आर्थिक और सामाजिक अधिकारों के लिए केंद्र
- मानवाधिकार और मानवतावादी कानून के लिए केंद्र
- आवास अधिकार और बेदखली केंद्र **(COHRE)**
- अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय के लिए गठबंधन
- राष्ट्रमंडल मानवाधिकार पहल
- सांस्कृतिक जीवन रक्षा
- विकलांग लोगों की अंतर्राष्ट्रीय पर्याप्त परियोजना

- अब समानता
- हर इंसान के अधिकार हैं।
- यातना से मुक्ति
- प्रकृति के करीब लोगों के दोस्त
- खतरे वाले लोगों के लिए समाज
- **GIRCA**
- वैश्विक अधिकार
- हैबिटेट इंटरनेशनल गठबंधन
- हिंदू अमेरिकन फाउंडेशन
- हिंदू मानवाधिकार
- मानव जीवन अंतर्राष्ट्रीय
- मानवाधिकार इंटरनेट
- ह्यूमन राइट्स फाउंडेशन
- सीमाओं के बिना मानवाधिकार
- युद्ध और शांति रिपोर्टिंग संस्थान
- पर्यावरण रक्षा के लिए इंटरअमेरिकन एसोसिएशन
- महिलाओं का अंतर्राष्ट्रीय गठबंधन
- इंटरनेशनल सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड डेमोक्रेटिक डेवलपमेंट
- इंटरनेशनल सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स रिसर्च
- अंतर्राष्ट्रीय विकलांगता गठबंधन
- अंतर्राष्ट्रीय रेड क्रॉस और रेड क्रीसेंट आंदोलन
- इंटरनेशनल फेडरेशन फॉर ह्यूमन राइट्स
- मानव अधिकारों और सहिष्णुता के लिए अंतर्राष्ट्रीय फाउंडेशन
- अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग **(IHRC)**

- यातना पीड़ितों के लिए अंतर्राष्ट्रीय पुनर्वास परिषद
- अंतर्राष्ट्रीय बचाव समिति
- अंतर्राष्ट्रीय तिब्बत समर्थन नेटवर्क
- इस्लामी मानवाधिकार आयोग
- अल्पसंख्यक अधिकार समूह इंटरनेशनल
- मानव और श्रमिक अधिकारों के समर्थन में राष्ट्रीय श्रम समिति
- अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संगठन **IOHR (OIDO)**
- शिक्षा और अकादमिक अधिकारों के लिए नेटवर्क
- न्याय के बिना शांति नहीं
- लोग और ग्रह
- विद्वानों को खतरा
- स्कॉलर रेस्क्यू फंड
- नरसंहार रोकथाम के लिए प्रहरी परियोजना
- दुनिया भर में महिला की तरह
- अधिकारों, विकास और शांति के लिए महिलाओं की सीखने की साझेदारी
- विश्व भविष्य परिषद
- यूथ फॉर ह्यूमन राइट्स इंटरनेशनल

भारत में गैर सरकारी संगठन:

- महिलाओं के लिए सम्मान राष्ट्रीय अभियान
- मिडिल फिंगर का विरोध
- मनब अधिकार संग्राम समिति
- मानवाधिकार संगठनों का परिसंघ
- तथ्य-खोज प्रलेखन और वकालत के लिए मंच

- मानव अधिकार प्रलेखन केंद्र
- दलित मानवाधिकारों पर राष्ट्रीय अभियान
- विजिल इंडिया मूवमेंट
- कश्मीर मानवाधिकार आयोग

मानवाधिकारों के लिए कुछ महत्वपूर्ण एजेंसियां

मानवाधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त:

संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त कार्यालय (ओएचसीएचआर) का मिशन सभी व्यक्तियों के मानवाधिकारों की रक्षा करना, इन अधिकारों का प्रयोग करने में सशक्तिकरण को बढ़ावा देना और उन लोगों का समर्थन करना है जो उन्हें बनाए रखने और लागू करने की जिम्मेदारी लेते हैं। ओएचसीएचआर दुनिया भर में प्रत्येक व्यक्ति के मौलिक अधिकारों और स्वतंत्रता को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए समर्पित है।

मानवाधिकार परिषद:

मानव अधिकार परिषद, जिसमें सैंतालीस सदस्य देश शामिल हैं, एक अंतर-सरकारी निकाय के रूप में कार्य करती है जिसका कार्य वैश्विक स्तर पर मानव अधिकारों को बढ़ावा देना और उनकी सुरक्षा करना है। यह इन उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न तंत्रों को नियोजित करता है। यूनिवर्सल पीरियोडिक रिव्यू सभी 192 संयुक्त राष्ट्र सदस्य देशों में मानवाधिकार की स्थिति का व्यापक आकलन करता है। सलाहकार समिति मानवाधिकार मामलों पर विशेषज्ञ मार्गदर्शन प्रदान करती है, जबकि शिकायत प्रक्रिया व्यक्तियों और संगठनों को आगे की कार्रवाई के

लिए मानवाधिकारों के उल्लंघन को परिषद के ध्यान में लाने में सक्षम बनाती है। इन तंत्रों के माध्यम से, मानवाधिकार परिषद दुनिया भर में मानवाधिकारों को बनाए रखने और बढ़ाने का प्रयास करती है।

संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को):

यूनेस्को, व्यक्तियों के मन में शांति को बढ़ावा देने के अपने उद्देश्य के साथ, मानवाधिकारों के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रयास करता है। इस क्षेत्र में इसके प्रयास चेतना बढ़ाने, उत्प्रेरक के रूप में कार्य करने और मानवाधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए क्षेत्रीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पहल को प्रोत्साहित करने की दिशा में केंद्रित हैं। जागरूकता बढ़ाने और कार्रवाई को प्रोत्साहित करके, यूनेस्को वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों की उन्नति में योगदान देता है।

शरणार्थियों के लिए संयुक्त राष्ट्र उच्चायुक्त का कार्यालय:

संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त (यूएनएचसीआर) का कार्यालय शरणार्थियों की सुरक्षा और शरणार्थी-संबंधित मुद्दों के समाधान के लिए वैश्विक प्रयासों का मार्गदर्शन और आयोजन करने के लिए जिम्मेदार है। इसका मुख्य उद्देश्य शरणार्थियों के अधिकारों और कल्याण को कायम रखना है। यूएनएचसीआर यह गारंटी देने की दिशा में काम करता है कि सभी व्यक्तियों के पास शरण लेने और स्वेच्छा से घर लौटने, स्थानीय समुदायों में एकीकृत होने या किसी तीसरे देश में बसने के विकल्प के साथ दूसरे देश में

सुरक्षित शरण पाने के अपने अधिकार का प्रयोग करने की क्षमता है। इसका मिशन दुनिया भर में शरणार्थियों की भलाई और सुरक्षा सुनिश्चित करना है।

अमेरिकी विदेश विभाग लोकतंत्र, मानवाधिकार और श्रम ब्यूरो:

अमेरिकी विदेश विभाग के भीतर लोकतंत्र, मानवाधिकार और श्रम ब्यूरो देश की स्थितियों सहित मानवाधिकार मुद्दों पर अपनी जांच और रिपोर्ट में सच्चाई खोजने और बताने के लिए समर्पित है। यह चल रहे मानवाधिकारों के हनन को संबोधित करने के लिए सक्रिय रूप से काम करता है और उन संगठनों के साथ सहयोग करता है जो मानवाधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए प्रतिबद्धता साझा करते हैं। ब्यूरो मानव अधिकारों की वकालत करने और दुनिया भर में उल्लंघनों को संबोधित करने के लिए ठोस कार्रवाई करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

यूरोप में सुरक्षा और सहयोग संगठन (ओएससीई) के लोकतांत्रिक संस्थानों और मानवाधिकारों का कार्यालय

ऑफ़िस फ़ॉर डेमोक्रेटिक इंस्टीट्यूशंस एंड ह्यूमन राइट्स (ODIHR) यूरोप में सुरक्षा और सहयोग संगठन (OSCE) के भीतर एक प्रमुख संस्थान है। इसमें यूरोप, मध्य एशिया और उत्तरी अमेरिका के छप्पन भाग लेने वाले राज्य शामिल हैं। ओडीआईएचआर विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकारों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने में सक्रिय रूप से

शामिल है, जिसमें आंदोलन की स्वतंत्रता, धर्म की स्वतंत्रता और व्यक्तियों पर अत्याचार और तस्करी की रोकथाम जैसे मुद्दों पर विशेष ध्यान दिया गया है। अपनी गतिविधियों और पहलों के माध्यम से, ओडीआईएचआर ओएससीई क्षेत्र के भीतर मानवाधिकारों की उन्नति और लोकतांत्रिक मूल्यों को बढ़ावा देने में योगदान देता है।

संदर्भ:

- सैकर, एम, और सैडकर, डी (1994)। निष्पक्षता में असफल: कैसे अमेरिका के स्कूल बालिकाओं को धोखा देते हैं। कसौटी।
- Gill.delt.mun.ca/patriarchy.php
- http://www.scrip.org/journal/ce ("प्रछन्न पाठ्यक्रम से लिंग और निर्माण"- मा.डेल रेफ्यूजियो नोवारो हर्नांडेज़, प्रिस्का आइसला गोंजालेज, सल्वाडोर सांचेज़, 2013, वॉल्यूम 4, नंबर 12 बी, 89-92)
- study.com/academy/lesson/feminism
- www.humanrights.com
- www.hurights.org.jp
- www.legalserviceindia.com
- www.martyklein.com/the-meaning-of-sex
- www.medicalnewstoday.com
- www.ncdrc.nic.in
- www.ncsu.edu/genderdifference
- www.shodhganga.inflibnet.ac.in
- www.theadvocateforhumanrights.org
- www.theotherteam.com
- www.ukessays.com
- www.unesco.org
- www.unicef.org
- www.wikigender.org
- www.wikipedia.org
- आरएमएसए मॉड्यूल "शिक्षा में लिंग संबंधी चिंताएं", प्रोफेसर गौरी श्रीवास्तव, प्रमुख, लिंग अध्ययन विभाग, एनसीईआरटी

- इग्नाटिएफ, एम (2001)। राजनीति और मूर्तिपूजा के रूप में मानव अधिकार। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
- एंगेल्स, एफ (1940)। परिवार, निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति। लंदन और विशर्ट।
- ऑक्सफोर्ड इंग्लिश डिक्शनरी (ओईडी 1, वॉल्यूम 4. 1900)
- कावर्ड , आर. (1999)। संपूर्ण सत्य: महिलाओं के इतिहास में व्यक्तिपरकता और लिंग। जे. स्कॉट में, जेंडर एंड द पॉलिटिक्स ऑफ़ हिस्ट्री (रेव. संस्करण, पृ. 192-193)। कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस.
- कुरियन, जेसी। 2006. "सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005", भारतीय सामाजिक संस्थान, नई दिल्ली।
- कूली, सी एच (1902)। मानव प्रकृति और सामाजिक व्यवस्था। चार्ल्स स्क्रिबनर के बेटे।
- कॉनेल, आर डब्ल्यू (1995)। पुरुषत्व । कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय प्रेस।
- कोली, एच (2005)। लिंग और शिक्षा: अवलोकन रिपोर्ट। शिक्षा संस्थान, लंदन विश्वविद्यालय।
- गिरोक्स, एच.ए. (1997)। बुद्धिजीवियों के रूप में प्रोफेसर: सीखने के एक महत्वपूर्ण शिक्षाशास्त्र की ओर। ब्यूनस आयर्स: एड।
- गोल्डबर्ग, एस (1973)। पितृसत्ता की अस्थिरता। मैड्रिड: अलियांजा। एड।
- चौधरी, एमई (2013)। भारत में मानवाधिकार न्यायिक सक्रियता: जबरन गायब होने के लिए न्यायिक प्रतिक्रियाएं। रूटलेज।
- जुरजो टोरेस, एस (2011)। पाठ्यक्रम में न्याय। स्कूल की संस्कृति में ट्रोजन हॉर्स। मैड्रिड: एड.मोराटा।
- जूलियट मिशेल, मनोविश्लेषण और स्त्रीत्व । लंदन: पेंगुइन, 1974। पृष्ठ 40

- जैक्सन, डब्ल्यू फिलिप। कक्षाओं में जीवन (पृष्ठ 215) एड।
- जैगर, एम और रोसेनबर्ग, एसपी (एड), 1984 फेमिनिस्ट फ्रेमवर्क। न्यूयॉर्क: मैकग्रेव-हिल।
- ठीक है, एम (2010)। बस लड़कियां: जूनियर हाई में छिपी हुई साक्षरता और जीवन। टीचर्स कॉलेज प्रेस।
- डुरू-बेलाट, एम., और मेरियर, ए(2016)। एक वैश्विक संदर्भ में लिंग, शिक्षा और समानता: अवधारणाएं, सिद्धांत और बहस। पॉलिसी प्रेस।
- डेनहार्ट, आर। जेफ्रेस, पी डब्ल्यू (1971)। "सामाजिक शिक्षा और आर्थिक व्यवहार: आर्थिक समाजीकरण की प्रक्रिया"। अमेरिकन जर्नल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड सोशियोलॉजी। 30(2): 113–125.
- डोनेली, जे (2013)। सिद्धांत और व्यवहार में सार्वभौमिक मानव अधिकार। कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस।
- पेरेनौड, पीएच (2004)। शिक्षण के लिए दस नई दक्षताएं, बार्सिलोना: GRAO
- फर्नांडीज, एएम (1994)। भ्रम की औरत। अध्याय II और VI। ब्यूनस आयर्स: एड पेडोस।
- फायरस्टोन, एस (1970)। सेक्स की द्वंद्वात्मकता: नारीवादी क्रांति का मामला। बैंटम बुक्स।
- फौस्टो-स्टर्लिंग, ए (2000)। शरीर को सेक्स करना: लिंग राजनीति और कामुकता का निर्माण। बुनियादी किताबें।
- फ्रीयर, पी (1973)। उत्पीड़ित लोगों की शिक्षाशास्त्र। न्यूयॉर्क: सीबरी प्रेस।
- बटलर, जे (1990)। लिंग समस्या: स्त्रीत्व और पहचान का विनाश। रूटलेज।
- बाजरा, के. 1977:35) यौन राजनीति। लंदन: विरागो।
- भारत सरकार। बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017)। योजना आयोग।

- भारत सरकार। बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017)। योजना आयोग।
- महिला और बाल विकास मंत्रालय। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय नीति। भारत सरकार।
- मीज़, एम (एटल) (1988)। महिलाएं: अंतिम कॉलोनी। दिल्ली: महिलाओं के लिए काली] 'श्रम के यौन विभाजन की सामाजिक उत्पत्ति' शीर्षक वाले एक पेपर में
- मैकलारेन, पी (1997)। आलोचनात्मक शिक्षाशास्त्र और हिंसक संस्कृति, उत्तर आधुनिक युग में विपक्ष की नीतियां। बार्सिलोना: एड पेडोस।
- मैकिओनिस, जॉन जे, और लिंडा एम। समाजशास्त्र। टोरंटो: पियर्सन कनाडा, 2011। पृष्ठ 116.
- योजना आयोग। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012): सामाजिक क्षेत्र। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग। (एन.डी.)। एनएचआरसी के कार्य। से प्राप्त किया गया https://nhrc.nic.in/functions-nhrc
- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग। भारत में मानवाधिकार शिक्षा: एक आधारभूत अध्ययन। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग।
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद। राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढांचा 2005। एनसीईआरटी।
- रेनॉल्ड, ई (2005)। लड़कियां, लड़के और जूनियर यौनता: प्राथमिक विद्यालय में बच्चों के लिंग और यौन संबंधों की खोज। रूटलेज।
- लर्नर, 1989: 239)। लर्नर, जी (1989)। पितृसत्ता का निर्माण। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस: न्यूयॉर्क।
- लामास, एम (2002)। लिंग श्रेणी के उपयोग, कठिनाइयां और संभावनाएं। शरीर में: यौन भेद और लिंग, मेक्सिको: एड।

- लिम, वाई.सी. (1997:220), पूंजीवाद, साम्राज्यवाद और पितृसत्ता: विश्वनाथन, नालाइन (एट अल) में बहुराष्ट्रीय कारखानों में तीसरी दुनिया की महिला श्रमिकों की डिलेम्मा। महिला लिंग और विकास पाठक। विश्वविद्यालय प्रेस लिमिटेड: ढाका}।
- लियो, जे (2000)। दो साल के कॉलेजों में शिक्षा को महत्व देता है। लॉस एंजिल्स, सीए: सामुदायिक कॉलेजों के लिए एरिक क्लियरिंग।
- लेगार्ड, एम (1990)। महिलाओं की कैद: पत्नियां-माताएं, नन, वेश्या, जेल कैदी और पागल। मेक्सिको: यूनिवर्सिड ऑटोनोमा डी मेक्सिको।
- लोर्बर, जे.1994. लिंग के विरोधाभास, येल यूनिवर्सिटी प्रेस।
- वाल्बी, एस 1990:20। पितृसत्ता को प्रमाणित करना। ब्लैकवेल पब्लिशर्स लिमिटेड: ऑक्सफोर्ड, यूके और कैम्ब्रिज यूएसए
- विधि और न्याय मंत्रालय। (एन.डी.)। भारत का संविधान। से प्राप्त किया गया http://legislative.gov.in/sites/default/files/CoI-updated-1March2019.pdf
- विश्व स्वास्थ्य संगठन। लिंग, समानता और मानव अधिकार। से प्राप्त किया गया https://www.who.int/gender-equity-rights/knowledge/gender-equity/en/
- वेस्ट, सी, और ज़िमर्मन, डी एच (1987)। लिंग करना। लिंग और समाज, 1 (2), 125-151।
- वैद्यनाथन, बी (2011)। "धार्मिक संसाधन या अलग-अलग रिटर्न? प्रारंभिक धार्मिक समाजीकरण और उभरती वयस्कता में घटती उपस्थिति"। धर्म के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए जर्नल. 50 (2): 366–387. दो:10.1111/j.1468-5906.2011.01573.x.

- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम। लैंगिक समानता रणनीति 2018-2021। से प्राप्त किया गया https://www.undp.org/content/undp/en/home/librarypage/womens-empowerment/gender-equality-strategy-2018-2021.html
- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम। लैंगिक समानता रणनीति 2018-2021। से प्राप्त किया गया https://www.undp.org/content/undp/en/home/librarypage/womens-empowerment/gender-equality-strategy-2018-2021.html
- संयुक्त राष्ट्र। (1948). मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा। से प्राप्त किया गया https://www.un.org/en/universal-declaration-human-rights/
- संयुक्त राष्ट्र। पेरिस सिद्धांत। से प्राप्त किया गया https://www.ohchr.org/EN/ProfessionalInterest/Pages/ParisPrinciples.aspx
- सेन, जी, और ओस्टलिन, पी (2007)। स्वास्थ्य में लिंग असमानता: यह क्यों मौजूद है और हम इसे कैसे बदल सकते हैं। ग्लोबल पब्लिक हेल्थ, 2 (3), 1-12।
- सैंडरसन, स्टीफन के (2001)। मानव सामाजिकता का विकास। रोवमैन और लिटिलफील्ड। पृष्ठ 198.
- हार्टमैन, एच.आई.(1981)। मार्क्सवाद और स्त्रीत्व का दुखी विवाह: एक अधिक प्रगतिशील संघ, महिला और क्रांति की ओर, (सं.) लिडिया सार्जेंट, लंदन: प्लूटो प्रेस।
- हैरिंगटन, माइकल (2011) [1989]। समाजवाद: अतीत और भविष्य। न्यूयॉर्क: आर्केड प्रकाशन। पीपी 8-9।

****

लैंगिक मुद्दे और मानव अधिकार शिक्षा

डॉ. किरन लता डंगवाल, लखनऊ विश्वविद्यालय में शिक्षा विभाग में एक शिक्षिका है। शिक्षकों, शोधकर्ताओं और विद्वानों को प्रबुद्ध करने, ज्ञान प्रदान करने और सूचनाओं का प्रसार करने के लिए, आपने राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध पत्रिकाओं और पत्रिकाओं में शैक्षिक प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास पर ध्यान केंद्रित करने वाले लेख प्रकाशित किए हैं। आपने पुस्तकों के लेखन और संपादन के अतिरिक्त शिक्षाविदों के लाभ के लिए शिक्षा के क्षेत्र में सत्तर से अधिक महत्वपूर्ण शोध पत्र प्रकाशित किए हैं।

उन्हें भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोप, कनाडा, दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया, थाईलैंड, मलेशिया और म्यांमार में प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों, कॉलेजों और संस्थानों में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया है। एक शिक्षक के रूप में अपने छब्बीस वर्षों कि शैक्षिक यात्रा के दौरान शैक्षिक क्षेत्र में उनके अटूट दृष्टिकोण और नवाचारों के परिणामस्वरूप, उन्हें विभिन्न संस्थानों और समूहों से उनके कार्य के लिए कई सम्मान मिले हैं।

वह एसोसिएट एनसीसी अधिकारी के रूप में लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रथम महिला हैं। एनसीसी में उनके समर्पण के कारण, उन्हें डीजीएनसीसी प्रशंसा कार्ड, सर्वश्रेष्ठ एनसीसी अधिकारी का पुरस्कार, सर्वश्रेष्ठ व्याख्यान प्रस्तुति के लिए उत्कृष्टता पुरस्कार और कैंप प्लानिंग अवार्ड भी मिला है। वह कंप्यूटर शिक्षा और प्रौद्योगिकी में अच्छी तरह से समझ है और शिक्षकों और छात्रों के लिए विभिन्न प्रकार की मुक्त ई-सामग्री, एमओओसी और ओईआर बनाए हैं। उन्होंने यूनेस्को का अंतर्राष्ट्रीय परामर्श ऑनलाइन कार्यक्रम, OE4BW के अन्तर्गत एमओओसी (मैसिव ओपन ऑनलाइन कोर्स) विकसित किया है । डॉ. किरन लता डंगवाल के असाधारण उत्साह, अविचल प्रतिबद्धता, निष्ठा और व्यावसायिक कौशल के कारण एक अलग पहचान प्राप्त करने में सक्षम रही हैं ।

डॉ सुनीता सुंद्रियाल बीएड विभाग, हीरालाल यादव बालिका पीजी कॉलेज (लखनऊ विश्वविद्यालय से संबद्ध) की संकाय सदस्य हैं। उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में लगभग 18 वर्षों का अनुभव है। वह शैक्षिक मनोविज्ञान और विज्ञान शिक्षाशास्त्र में माहिर हैं। उन्होंने उत्तर प्रदेश राज्य के विभिन्न कॉलेजों और संस्थानों में पढ़ाया है। उनका प्रकाशन अनुभव प्रतिष्ठित राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं में कई शोध पत्रों और प्रकाशनों से भरा हुआ है। उन्होंने पुस्तकों का संपादन और लेखन दोनों किया है और विभिन्न राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सेमिनारों और सम्मेलनों में पेपर प्रस्तुत किए हैं। उनके अन्य योगदानों में एस.ओ.ई, इग्नू और उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय द्वारा संचालित बीएड पाठ्यक्रम की पाठ्य वस्तु लेखन और भाषा संपादन के साथ-साथ नेशनल ओपन स्कूल के लिए एल. एड व पीजीडी कोर्स भी सम्मिलित हैं।

Undertaking

This is to certify that the undersigned hereby gives permission UGC to publish **लैंगिक मुद्दे और मानव अधिकार शिक्षा** (Education) (शिक्षाशास्त्र), a book in Hindi language for UG/PG.

The author has conducted all the necessary research and holds full ownership of the written book/text and gives permission to the publisher to publish it on print or digital format.

The publisher will have full right to the published book/text and are authorized to do any modifications, republication, or any other assistance related to the text if highly required.

No legal action will be taken by the author besides the terms and conditions of this Contract.

Sincerely,

(Dr. Kiran Lata Dangwal)
Associate Professor
Department of Education
University of Lucknow
Lucknow

(Dr. Sunita Sundriyal)
Assistant Professor
HLY Girls PG College
Lucknow